महेदवी बच्चौं की मज़्हबी तालीम के लिये
रिसाला

हमारा मज़्हब

(तीनों भाग एकजा)

लेखक
लिसानुल क़ौम मसीहे मिल्लत
हज़रत मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह ख़ाँ सूफ़ी रहे०
(हैदराबादी)

लिप्यांतर कर्ता
श्री शेख़ चाँद साजिद

प्रकाशक
मुहम्मद महमूदुल हसन खाँ सूफ़ी
इब्ने मुअल्लिफ़

पुस्तक का नाम : **हमारा मज़हब**
(तीनों भाग एकजा)

लेखक : लिसानुल क़ौम मसीहे मिल्लत
हज़रत मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह खाँ सूफ़ी रहे०
वफ़ात : ९ रबीउस् सानी १३८४ हिज्री /
१७ आगस्ट १९६४

तारीख़े तदफ़ीन : १४ शव्वालुल् मुकर्रम १३८४/
१६ फर्वरी १९६५

बमुक़ाम : आस्तानए हज़रत बंदगी मियाँ शाह
ख़ुंदमीर सिद्दीक़े विलायत रज़ी० (चापानीर)

हिन्दी लिप्यांतर कर्ता : श्री शेख़ चाँद साजिद

संस्करण : 2017

Type Setting : **Rheel Graphics, Hyderabad.**
Tel. : 040 - 27661061

प्रकाशक : मुहम्मद महमूदुल हसन खाँ सूफ़ी
इब्ने हज़रत मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह ख़ाँ सूफ़ी रहे०

मिलने का पता : लतीफ़ मंज़िल 16-4-113/A, चंचलगुड़ा,
हैदारबाद - 500 024 T.S. **Tel. : 040 - 24529112**
: सान कम्प्यूटर सेटंर, नई सड़क, चंचलगुड़ा,
हैदारबाद - 500 024 T.S. **सेल : 9959912642**

हदिया : ₹ **50**

© जुम्ला हुक़ूक़ महफ़ूज़ बहक़्के नाशिर

फ़ेहरिस्त

पहला भाग

१) महेदवी फ़र्ज़ नमाज़ अदा करने के बाद हाथ उठाकर बुलंद आवाज़ से दुआ क्यों नहीं मांगते ?

२) महेदवी रमज़ान की सत्ताईसवीं रात में आधी रात के बाद अज़ाँ देकर इशा की नमाज़ के साथ दुगानए शबे क़द्र फ़र्ज़ की निय्यत से अदा करते हैं। क्या उन का यह अमल क़ुरआने मजीद और अहादीस के तहत सही हैं?

३) क्या हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ़्र है ?

४) महेदवी रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद बुलंद आवाज़ से जो तस्बीह कहा करते हैं क्या उनका यह अमल सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ला० के तहत सही है?

दूसरा भाग

५) महेदवी नफ़िल नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते? जबकि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने नफ़िल नमाज़ पाबंदी के साथ पढ़ी है?

६) नमाज़ की हक़ीक़त क्या है ?

७) ज़िक्रे ख़फ़ी किसको कहते हैं ?

तीसरा भाग

८) अहकामे इक़्तिदा

प्रस्तावना

तमाम तारीफ़ अल्लाह तआला के लिये है जिसने हमारी हिदायत के लिये अपने हबीब ख़ातिमुल अम्बिया मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्ला० को रसूल बनाकर भेजा और फिर नुसरते दीन के लिये ख़लीफ़तुल्लाह मीराँ सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० को मब्ऊस फ़र्माया और हमें उन दोनों की तस्दीक़ की नेअ्मत से सर्फ़राज़ फ़र्माया। दुरूदो सलाम ख़ातिमैन अलैहिमस्सलाम पर और उनकी आल और असहाब पर।

हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्ला० ने अपने दीन की नुस्रत और एहयाए इस्लाम के लिये एक दाई इलल्लाह मामूर मिनल्लाह, दाफ़ेअ् हलाकते उम्मते मुहम्मदिया सल्ला०, मुबैयिने कलामुल्लाह, ख़ातिमे दीने मुहम्मदी, ख़लीफ़तुल्लाह इमाम महेदी मौऊद अले० के आने की ख़ुश ख़बरी दी और उनके औसाफ़ (गुण) और अलामात भी बयान फ़र्मादिये और महेदी अले० की बेसत होने पर उम्मत का क्या फ़र्ज़ है वह भी बतलादिया।

बेसते महेदी अले० के विषय में उम्मते मुस्लिमा तीन तब्क़ौं (वर्ग) में बटी हुइ है। एक तब्क़ा सिरे से बेसते महेदी अले० की ज़रुरत का मुन्किर है। दूसरा तब्क़ा बेसते महेदी अली० की ज़रुरत का क़ाइल है और ज़ुहूरे महेदी का मुन्तज़िर है। तीसरा तब्क़ा हज़रत सय्यद मुहम्मद जोनपूरी को महेदी मौऊद मानता है और अब किसी महेदी के आने का मुन्तज़िर नहीं है। इस तरह दूसरे और तीसरे तब्क़े में तऐयुने शख़्सी (व्यक्तित्व का निश्चय) का इख़्तिलाफ़ है जिसकी बुनियाद अलामाते महेदी पर है। चुनांचे बाज़ ऐसे सवालात या एतिराज़ात जो अकसर शराइत और अलामाते महेदी अले० के बारे में पेश किये जाते हैं उनमें से बाज़ चीज़ौं की तश्रीह इस पुस्तक ''हमारा मज़्हब'' में आसान अन्दाज़

में पेश की गई है। चूंकि ऐसे एतिराज़ात बार बार किये जाते हैं इस लिये बार बार ऐसी किताबों की इशाअत भी ज़रुरी है।

हज़रत वालिद माजिद रहे० की तालीफ़ ''हमारा मज़्हब'' के तीन भाग हैं जो उर्दू भाषा में हैं और जो अर्सए दराज़ से नायाब होचुके थे। हालाते हाज़िरा के पेशे नज़र अक़्ताए हिदं की महेदविया आबादियौं की तरफ़ से इस किताब की दुबारा इशाअत का शदीद मुतालबा हो रहा था। लिहाज़ा जन्वरी २०१४ में इस किताब को दुबारा प्रकाशित किया गया। फिर उर्दू भाषा से अपरिचित लोगौं के लिये इसको रोमन् उर्दू में रुपान्तर किया गया है। अब इस किताब को उर्दू से हिन्दी लिपि में मुन्तक़िल किया गया और प्रकाशित किया जा रहा है।

श्री शेख़ चाँद साजिद साहब ने इस किताब को न सिर्फ़ हिन्दी लिपि में लिखा है बल्कि इसकी टैपिंग और छपाइ के काम में भी तआवुन किया है। मैं मौसूफ़ का आभारी हूँ कि उन्हों ने अपनी मसरुफ़ियात के बावजूद इस काम में अपना क़ीम्ती वक़्त दिया।

अल्लाह तआला का लाख लाख शुक्र है कि उसने ख़ातिमैन अलैहिमस् सलाम के तुफ़ैल हज़रत वालिद माजिद रहे० की तालीफ़ात धर्म प्रचार के उद्देश से प्रकाशित करने की सआदत अता फ़र्माइ है। अल्लाह तआला से दुआ है कि सत्य की खोज करने वालौं को इस किताब के ज़रीए राहे रास्त अपनाने की तौफ़ीक़ अता फ़र्माये / आमीन

मुहम्मद महमूदूल् हसन खाँ सूफ़ी

इब्ने लिसानुल क़ौम मसीहे मिल्लत

हज़रत मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह खाँ सूफ़ी रहमतुल्लाहि अलैहि

९ रबीउस् सानी 1436 हिज्री / 8 जनुवरी 2017

इन्तिसाब

दुनिया में जब कभी समाज में बिगाड़ और ख़रीबी पैदा हुई तो हक़ तआला ने उसको संवारने के लिये पैग़म्बरौं और रसूलौं को भजा। हज़रत सय्यदना आदम अले० से हज़रत सय्यदना व नबीइना ख़ातिमुल मुरसलीन मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० तक जितने भी हिदायत याफ़ता आये उनकी ज़िन्दगी उसकी गवाह है।

मैं तफ़सील में नहीं जाऊंगा। हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० के बाद इस्लाम की वह ज़मीन जो आप ने तैयार की थी अपनी असली हालत में क़ाइम नहीं रही। क़ुरआन की नुरानी तालीम पर फ़लसफ़े की गर्द आगइ। उस फ़लसफ़े की जिसकी यूनान में पर्वरिश हुइ थी। ऐसे वक़्त में हक़ तआला ने हज़रत इमामुना सय्यदना मुहम्मद महेदी मौऊद अले० को मब्ऊस किया। हज़रत इमाम मौऊद अले० ने जहालत, नक़ाइस और ग़लत तसव्वुराते इस्लामी व रूहानी की चादर को जो हर शोबए हयात पर मुहीत थी, चाक चाक किया। फ़लसफ़ा और रूहानियात के ग़लत तसव्वुरात की दीवारौं को गिराया और किताबुल्लाह और इत्तिबाए रसूलुल्लाह सल्ला० की तरफ़ लोगौं की तवज्जह को पलटाया और दावते आम दी।

हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० की विलादत चौधवीं जमादी उल अव्वल ८४७ हिज्री पीर के दिन हिन्दुस्तान के शहर जोनपूर में हुइ। आप की ज़ुहूर फ़र्माइ (प्रकटन) से आँखौं के परदे हट गये और देखने वालौं ने देखा कि विलायते मौऊद अले० का ताज पहन कर आने वाले इमामे मौऊद का किरदार (आचरण) वह मुस्तफ़ाइ किरदार है जिसकी शाने रफ़ीआ को एहातए बयान में नहीं लाया जासकता।

तारीख़ और सीरत की जुम्ला किताबें हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० के तअल्लुक़ से कहती हैं कि आप अजिल्लए सादात बनी फ़ातिमा से थे। आपका नाम ''सय्यद मुहम्मद'' था और अबुल क़ासिम आपकी कुनियत थी। अलावा इसके यह भी बताती हैं कि आपके वालिद का नाम ''सय्यद अब्दुल्लाह'' और वालिदा का नाम ''बीबी आमिना'' था।

हज़रत इमामे मौऊद अले० के जन्म के तअल्लुक़ से गुफ़्तगू करते हुए इतिहासकारों और सीरत निगारों (जीवनी - लेखक) ने यह भी बताया है कि जन्म के समय आप तमाम नजासतों से पाक थे और किसी ने आपकी मासूम उरयानी का मुशाहदा नहीं किया।

हज़रत इमाम मौऊद अले० के हरकात, सकनात और अख़लाक़ो आदात के शान में सीरत निगारों ने तफ़सील दी है और बताया है कि हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० के जो हरकात, सकनात और अख़लाक़ो आदात थे वही हरकातो सकनात और अख़लाक़ो आदात आप में कुल्लियतन् (सर्वथा) मौजूद थे।

हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० ने दुनिया को जो पयाम (संदेश) दिया था आपने भी वही पयाम दिया। जोनपूर से मक्का मुअज़्ज़मा और मक्का मुअज़्ज़मा से फ़राह मुअल्ला तक आप ने जो पयाम दिया था वह यह था कि

''मैं कोइ नया मज़्हब नहीं लाया हूँ - मेरा मज़्हब किताबुल्लाह और उसके रसूल सल्ला० का इत्तिबा है''।

आपने दुनिया वालों को यह पयाम पहुंचाते हुए १९ ज़ीक़ादा ९१० हिज्री को बमक़ाम बाग़े रहमत शहर फ़राह अफ़ग़ानिस्तान मे इस दुनियाए फ़ानी से परदा फ़रमाया।

मैं ने अपनी इस तालीफ़ का इन्तिसाब उसी नूरे पाक से किया है जिसकी नूरानी ज़िया पाशियौं ने मुसलमानौं में क़ुरआनी तसव्वुर को ताज़ा किया और बेनूर वालौं को मआरिफ़े लदुन्निया (ईश्वरीयज्ञान) का ख़ज़ाना दिया। तौहीदे ख़ालिस की हक़ीक़ी तालीमात से अब्द (बन्दे) को रब से मिला दिया जो ऐन मन्शाए तख़्लीक़े इन्सानी है। इस से ज़्यादा कुछ और कहने की अपने आप में सलाहियत नहीं पाता।

इस किताब में जो कुछ है उसी नूरे पाक की बताइ हुइ तालीमात का एक परतौ (प्रतिबिंब) है। फ़क़्त

फ़क़ीर हक़ीर
मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह ख़ाँ सूफ़ी
२० आगस्ट १९५६

तअस्सुरात

दुनिया जहाँ पे सारे ज़ाहिर हमारा मज़्हब
सूफ़ी ने करदिया है लिखकर ''हमारा मज़्हब''

जिस दिल को वस्वसौं ने डाला है गुम्रही में
आजाये राह पर वह पढ़कर ''हमारा मज़्हब''

उसके मुतालेए से होजाये तुझ पर रोशन
क़ुरआन से नहीं है हटकर ''हमारा मज़्हब''

सुन्नत की पैरवी में हम गामज़न् रहे हैं
खोलेगा यह हक़ीक़त तुझपर ''हमारा मज़्हब''

ना वाक़िफ़ौं को अब तो होजायेगा यह मालूम
आयत है या हदीसे सर्वर ''हमारा मज़्हब''

वहमो गुमानो ज़न् से लेते नहीं हैं हम काम
सच बोलूं तुझसे हक़ है यकसर ''हमारा मज़्हब''

गो हाथ में तू लेगा सूफ़ी का यह नविश्ता
छाये तेरे दिमाग़ो दिल पर ''हमारा मज़्हब''

यकदम तू चीख़ं उठेगा वल्लाह हक़ वही है
जो पेश कर रहा है हम पर ''हमारा मज़्हब''

अक़ली दलील उसमें मानिंद बेल बूटे
करता है पेशे दिल ख़ुश मन्ज़र ''हमारा मज़्हब''

क़ुरआन और सुनन् के इसमें हैं लाला व गुल
है एक गुलिस्ताने ख़ुश्तर ''हमारा मज़्हब''

आसारे औलिया के इसमें रवाँ हैं नहरें
उस आब से सरासर है तर ''हमारा मज़्हब''

हर एक सतर में उसकी मोती जुड़े हुए हैं
अफ़ज़ूँ नहो बहायें क्योंकर ''हमारा मज़्हब''

मज़्मून उसका सारा जोशो ख़ुरोश से पुर
जज़्बात को जगादे यकसर ''हमारा मज़्हब''

तहरीर में यह अपनी है एक तेग़े बर आँ
रखता है ख़ुद में पिन्हाँ जौहर ''हमारा मज़्हब''

ऐ मोतरिज़ तू अपनी आँखौं को खोलकर देख
ले अब तू मिस्ले शम्स है अज़्हर ''हमारा मज़्हब''

इसको रखेंगे अरबी तावीज़ हम बनाकर
हमको रखेगा क़ाइम हक़ पर ''हमारा मज़्हब''

हज़रत मौलवी मुहम्मद नूरुद्दीन अरबी रहे०

भूमिका

डभोइ ज़िला बड़ोदा (गुजरात) के महेदवी भाइयौं ने क़ौमी और मिल्ली ज़रूरतौं के पेशे नज़र १९५४ में मद्ररए उरबीया सिद्दीक़िया क़ायम किया।

क़ुरआन शरीफ़ और दीनियात की तालीम के सिलसिले में इस अम्र की शिद्दत के साथ ज़रुरत महसूस की कि मज़्हबे महेदविया की तालीम के सिलसिले में ऐसी कोइ निसाबी किताबें नहीं है जो बच्चौं को पढ़ाइ जासकें और जो बच्चौं और नौजवानौं के मज़्हबी मालूमात और तालीम का बाइस हों। यूँ तो आलिमाना अन्दाज़ में दक़ीक़ ज़बान में बड़ी बड़ी किताबें मौजूद हैं मगर बच्चौं और आम लोगौं का इन किताबौं को समझना मुश्किल है। गुजरात के माहौल के एतिबार से सलीस और आसान ज़बान में रिसालौं की शकल में कोइ किताब नहीं है। इसलिये इब्राहीम भाइ, हाजी पीर भाइ कम्पनी वालौं ने जो महेदविया तालीमी सोसाइटी के सदर भी हैं, मुझसे ख़्वाहिश की कि तहतानी और वस्तानी जमाअतौं के लिये मुख़्तलिफ़ हिस्सौं में निसाबी रिसाले लिखूं ताकि उनको मदरसे में जारी किया जाये जिनसे बच्चे बड़े सब फ़ाइदा हासिल करसकें। इसके अलावा इस्लाम के दूसरे फ़िरक़ौं से हटकर मिल्लते इस्लामिया महेदविया के जो ख़ुसूसी और हक़ीक़ी इस्लामी आमाल और इबादात हैं, उनकी सिहत और तफ़हीमो तालीम के लिये भी लिखूं ताकि आये दिन जो सवालात होते रहते हैं उनके जवाबात भी होजायें और तशफ़्फ़ी भी होजाये।

इस तहरीक (प्रस्ताव) का समर्थन मियाँ मुहम्मद हाजी ख़ूबन भाइ टावर वालौं ने की जो महेदविया तालीमी सोसाइटी के सचिव हैं। राजे भाइ नमक वाले कारोबारी कमेटी के तमाम सदस्य और हाजी अली भाइ दरवेश

और करीम भाइ अन्सार वग़ैरह ने बुहत ज़ोर दिया, बल्कि तमाम महेदवी भाइयौं ने मुझ पर तक़ाज़ा शुरू किया।

मैं अपनी अयोग्यता के कारण हैरान था कि क्या करूं, क्योंकि तस्नीफ़ो तालीफ़ जैयिद (श्रेष्ठ) उलमा का काम है, मैं क्या और मेरा मब्लग़े इल्म क्या और तस्नीफ़ो तालीफ़ का मक़ाम कहाँ ?

जब मैं ने देखा कि मेरे लिये गुरेज़ (बचना) मुम्किन नहीं है तो अल्लाह का नाम लेकर और ख़ातिमैन अलैहिमस्सलाम का दामन थाम कर इरादा कर लिया कि जो मुझसे होसके लिखदूं।

चुनांचे अल्लाह के फ़ज़्लो करम से निसाबी दो रिसाले ''तालीमुल इस्लाम महेदविया'' पहला और दूसरा भाग लिखा जिसको तमाम ने निहायत पसंद किया। उसके बाद मिल्लते इस्लामिया महेदविया के ख़ुसूसी आमाल और इबादात जो क़ुरआने मजीद और हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० के अहकाम और आमाल की ख़ालिस इत्तेबाई हैसियत रखते हैं उनके मिनजुम्ला सिर्फ़ चार सवालात और उनके ज़िम्नी कई सवालात के जवाबात लिखे और उसका नाम ''हमारा मज़्हब'' रखा । यह पहला भाग है बाक़ी और सवालात के जवाबात दूसरे भाग में लिखे जायेंगे। *इन्शा अल्लाहु तआला*

इन किताबौं की तालीफ़ (संकलन) में मियाँ मुहम्मद हाजी ख़ुबन भाइ टावर वाले और राजे भाइ नमक वाले और हज़रत मौलाना सय्यद शहाबुद्दीन साहब हम्मादी के कुतुब ख़ानौं से मुझे बड़ी मदद् मिली। उन तीनों हज़रात का मैं दिल से शुक्र गुज़ार हूँ।

यहाँ यह बात भी ज़ाहिर करदेनी ज़रूरी है कि बड़ोदा और डभोइ के महेदवी भाई निहायत नेक और बेहद मुख़ैयिर (दान शील) वाक़े हुए हैं।

उनहों ने अब तक मज़्हबी तालीम वग़ैरह के नाम पर हज़ारों रुपिये दिये हैं और हर वक़त देते ही रहते हैं जिनकी तफ़सीलात और नताइज को यहाँ बयान करना मुनासिब नहीं है। अलबत्ता मद्रसए अरबिया सिद्दीक़िया के क़ियाम के सिलसिले में जिन जिन मुख़ैयिर लोगौं ने हिस्सा लिया है उसकी तफ़सील और नताइज को मद्रसए अरबिया सिद्दीक़िया और महेदविया तालीमी सोसाइटी डभोई की सालाना रिपोर्ट में बयान करदिया गया है।

चुनांचे ''हमारा मज़्हब'' किताब की तबाअत में जिस क़दर ख़र्च आया उसको हाजी चाँद भाइ लोखंड वालौं ने क़ौमी और मिल्ली ख़िदमत के नज़र करते अपनी तरफ़ से बरदाश्त किया। रिसाला ''तालीमुल इस्लाम महेदविया'' पहले भाग की तबाअत करीम भाइ कालूभाइ अन्सार ने क़ौम के बच्चौं की मज़्हबी तालीम के लिये अपनी तरफ़ से करवाई।

रिसाला ''तालीमुल इस्लाम महेदविया'' दूसरे भाग की तबाअत (छपाई) राजे भाइ जमाल भाइ नमक वालौं ने अपने भाई करीम भाइ जमाल भाइ मरहूम साबिक़ सदर महेदविया तालीमी सोसाइती के ईसाले सवाब के लिये और मुहम्मद भाइ रहीम भाइ गाँधी और अब्दुर रहीम मियाँ भाइ पान वाले और फ़त्ह मुहम्मद मलिक जी भाइवर वाले, इन चार लोगौं ने क़ौमी बच्चौं और नौजवानौं की मज़्हबी तालीम के लिये करवाई। हाजी अली भाइ दरवेश, इब्राहीम भाइ अन्सार, याक़ूब जी लाफ़ा वाले और नज्मुद्दीन गाँधी ने भी हिस्सा लिया। महेदविया तालीमी सोसाइटी डभोई ने इन किताबौं को अपने एहतिमाम से छपवाया। मज़्हबी किताबौं की तबाअत करवाना जो हक़ीक़त में बच्चौं और नौजवानौं और आम लोगौं में दीनी मालूमात के इज़ाफ़े का बाइस और ईमान की पुख़तगी का सबब् वने हक़ीक़त में सवाबे जारिया का मौजीब है।

इन किताबों की तालीम से अगर एक शख़्स ने भी फ़लाह पाली तो इन किताबों को छपवाने वालों की नजात का बाइस होगा।

मैं दिल से अल्लाह तआला के दरबार में दुआ करता हूँ कि या अल्लाह तेरे दीन के अहकाम और ख़ातिमैन अलैहिमस् सलाम के इत्तिबा के अहकाम की इशाअत करने वालों को अपनी ख़ैरो बरकत से सर्फ़राज़ फ़र्मा और उनकी फ़लाह और नजात (कल्याण) का बाइस बना। *आमीन*

फ़क़ीर मुहम्मद नेअ्मतुल्लाह ख़ाँ सूफ़ी
(हैदराबादी)
२० आगस्ट १९५६

पहला भाग

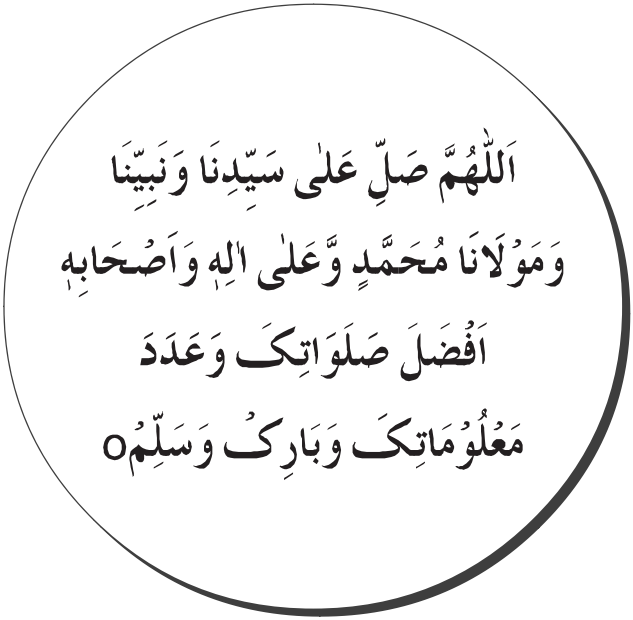
اَللّٰھُمَّ صَلِّ عَلٰی سَیِّدِنَا وَنَبِیِّنَا
وَمَوْلَانَا مُحَمَّدٍ وَّعَلٰی اٰلِہٖ وَاَصْحَابِہٖ
اَفْضَلَ صَلَوَاتِکَ وَعَدَدَ
مَعْلُوْمَاتِکَ وَبَارِکْ وَسَلِّمْo

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّىۡ عَلٰى رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِىِّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : महेदवी फ़र्ज़ नमाज़ अदा करने के बाद हाथ उठाकर बुलंद आवाज़ से दुआ क्यों नहीं मांगते ?

जवाब : पहले हम इस सवाल पर फ़ित्रत के तहत ग़ौर करेंगे क्योंकि दीने इस्लाम ऐन दीने फ़ित्रत (प्राकृतिक धर्म) है और तमाम अहकामे इस्लामी ऐन फित्रत के तहत हैं।

मसलन् एक शख़्स किसी दूसरे शख़्स से अगर कुछ मांगता है तो क्या अलानिया और पुकार कर मांगता है या छुपाकर ख़ुफ़िया तरीक़े पर मांगता है ?

फ़ित्रत का तक़ाज़ा है कि वह छुपाकर ख़ुफ़िया तरीके पर माँगे। चुनांचे वह उसी फ़ित्रत के तक़ाज़े के तहत छुपा कर ख़ुफ़िया तरीक़े पर माँगता है कभी अलानिया सबके सामने किसी से कोइ नहीं मांगता। फ़ित्रत के इस तक़ाज़े के तहत साबित हुआ कि छुपाकर ख़ुफ़िया तरीक़े से माँगना चाहिये।

दूसरी बात यह कि अगर कोइ किसी का कुछ काम करे तो उसको उस काम के बदले में फ़ौरन् ही मुआवज़ा माँग लेना चाहिये या वह ख़िदमत अल्लाह वास्ते, अल्लाह की ख़ुशनूदी और रज़ामंदी के लिये करना चाहिये?

फ़ितरत का तक़ाज़ा है कि अगर कोइ किसी की कुछ ख़िदमत करे तो उसको मुआवज़ा हासिल करने की निय्यत से नहीं करना चाहिये।

अगर हम नमाज़ अदा न करें तो क्या कोइ दुआ मांगा करते हैं? नहीं - बल्कि आठ आठ रोज़ तक अल्लाह से दुआ तो कुजा उसको याद तक नहीं करते बल्कि उसकी नाफ़रमानियौं (अवज्ञा) में लगे रहते हैं। जहाँ हमने दो रकात नमाज़ अदा की कि मांगना शुरु कर दिया, या अल्लाह हमें वह दे, या अल्लाह हमें यह दे,गोया हम दो रकात नमाज़ अल्लाह के लिये नहीं पढ़ते बल्कि फौरन् ही उसका मुआवज़ा मांगते हैं कि यह दे और वह दे, दुआयें करनी शुरु करदेते हैं। गोया हम दुआयें करने के लिये ही और नमाज़ौं का मुआवज़ा मांगने के लिये ही नमाज़ें पढ़ते हैं। क्या ऐसी नमाज़ें पढ़ना और अमल करना फ़ितरत के तहत मुनासिब और सही भी है?

तीसरी बात यह कि ऐसी दुआ नमाज़ में दाख़िल है या नमाज़ से ख़ारिज है? अगर नमाज़ में दाख़िल है और नहीं की गइ तो यक़ीनन् नमाज़ में ख़राबी आयेगी, और अगर नमाज़ में दाख़िल नहीं है बल्कि नमाज़ से ख़ारिज है तो उसके न करने से नमाज़ में ख़राबी नहीं आसकती। जहाँ नमाज़ से सलाम फेरा गया नमाज़ ख़त्म और मुकम्मल होगइ तो फिर नमाज़ के ख़त्म और मुकम्मल होने के बाद दुआ न मांगने से नमाज़ पर उसका क्या असर पड़ सकता है?

नमाज़ पर ग़ौर किया जाये तो यह हक़ीक़त ज़ाहिर हो जायेग कि नमाज़ ख़ुद सरापा दुआ है। सूरह फ़ातिहा एक मुकम्मल दुआ है और हज़रत रसूललुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि اَفْضَلُ الدُّعَاءِ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ० यानि तमाम दुआओं से अफ़ज़ल और आला दुआ ***अल हम्दु लिल्लाह*** यानि सूरह फ़ातिहा है।

ग़ौर कीजिये कि क्या कोइ नमाज़ ऐसी भी है जो ***अलहम्दु लिल्लाह*** के बग़ैर अदा की जाती हो? कोइ ऐसी नमाज़ नहीं है, हर नमाज़ में ***अलहम्दु लिल्लाह*** लाज़िमी पढ़ी जाती है। इस तरह हर नमाज़ में दुआ

होती है, एक फ़र्ज़ नमाज़ ही का क्या सवाल है। इसके अलावा हर नमाज़ में दुरूद शरीफ़ के बाद भी दुआ पढ़ी जाती है जिसको दुआए मासूरा कहते हैं। इस तरह गोया हर नमाज़ में हम दुआ ही करते हैं तो फिर ख़ुसूसन् फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ मांगने का सवाल क्या बाक़ी रहजाता है?

इबादत के जिस क़दर भी आमाल हैं वह तमाम अल्लाह् तआला के अहकाम यानि क़ुरआन मजीद के तहत और हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० के इरशाद और आमाल के ताबे हैं।

क़ुरआन हकीम और इत्तिबाए हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० से हट कर कोइ अमल, अमल और इबादत नहीं हो सकता ख़्वाह वह हसना ही क्यों न कहा जाये, क्योंकि कोइ अमले हसना ऐसा नहीं है जो हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० ने न किया हो। अल्लाह् तआला की और हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० की इताअत से हटकर अमल करना अपने तमाम आमाल और अपनी तमाम इबादतौं को ख़राब करलेना है। चुनांचे अल्लाह् तआला का साफ़ हुक्म है कि يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا اَطِيْعُو اللّٰهَ وَاَطِيْعُو الرَّسُوْلَ وَلَا تُبْطِلُوْا اَعْمَالَكُمْ۝ (سورہ محمد ۳۳) यानि ऐ ईमान वालो अल्लाह् की और रसूल की इताअत करो और तर्के इताआत से (इताअत से हट कर) अपने आमाल को ख़राब न करो।

अब देखना यह है कि आया हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० ने फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ मांगी है, बल्कि यह सनद मिलती है कि हज़रत रसूलुल्लाह् सल्ला० ने फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ नहीं मांगी। चुनांचे बुख़ारी शरीफ़ में हज़रत अनस रज़ी० से यह हदीस मौजूद है कि عَنْ اَنَسٍؓ كَانَ النَّبِىُّ صَلْعَمْ لَا يَرْفَعُ يَدَيْهِ فِىْ شَىْءٍ مِّنَ الدُّعَاءِ اِلَّا فِى الْاِسْتَسْقَاءُ यानि हज़रत रज़ी० ने कहा कि हज़रत नबी सल्ला० किसी दुआ में हाथ नहीं उठाते थे सिवाय बारिश की दुआ के (बुख़ारी शरीफ़ जिल्द१ सफ़्हा १२५)।

यहाँ यह बात भी ज़ाहिर है कि हज़रत अनस रज़ी० हर वक़्त हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की ख़िदमत में रहते थे और हुज़ूरे अकरम सल्ला० के घर की ख़िदमत भी आपके सुपुर्द थी। आप हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की जुम्ला इबादात से ख़्वाह वह घर की हों या मस्जिद की हों और जुम्ला आमाल से पूरे तौर पर वाक़िफ़ थे।

इस लिहाज़ से आपकी रिवायत निहायत अहम है। अगर हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० फ़र्ज़ (नमाज़ के अलावा दूसरे मक़ामात की बहस यहाँ ग़ैर ज़रूरी है) नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ मांगा करते तो हज़रत अनस रज़ी० कभी ऐसी हदीस बयान न करते कि ''हज़रत नबी सल्ला० किसी दुआ में हाथ नहीं उठाते थे''। इसके अलावा सुनन् अबू दाऊद में हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० से रिवायत है कि

عن ابی هریره رضی الله عنه ان رسول الله صلی الله علیه وسلم

قال اقرب ما یکون العبد من ربه هو ساجد فاکثرو الدعاءo

यानि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस फ़रमान से साबित हुआ कि अगर तुमको दुआ मांगनी है तो सज्दे में दुआ करो क्योंकि सज्दे की हालत में बन्दा अल्लाह तआला से ज़्यादा क़रीब होजाता है।

अब ग़ुलामाने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का क्या फ़र्ज़ होना चाहिये? आया हुक्म की इत्तिबा (अनुकरण) करें या अपना दिल जिस तरह कहे वैसा करें। अपने दिल की इत्तिबा और उसकी इताअत यक़ीनन् सिराते मुस्तक़ीम की तरफ़ नहीं लेजा सकती बल्कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की इत्तिबा और इताअत ही सिराते मुस्तक़ीम की तरफ़ लेजा सकती है। चुनांचे अल्लाह तआला का इरशाद है कि ***अतीउर रसूल*** यानि हज़रत रसूल सल्ला० की इताअत करो (सूरह अन् निसा)।

पस हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इरशाद की इताअत में सज्दे में दुआ करना लाज़िमी और ज़रूरी हुआ।

तमाम आज़ाए इन्सानी में सर को जो अहम्मियत और फ़ज़ीलत हासिल है जिस्मे इन्सानी के किसी अज़ू (अंग) को हासिल नहीं है। इस लिहाज़ से दरबारे ख़ुदावंदी में दुआ के लिये हाथ उठाना बेहतर होगा या उसके दरबार बेनियाज़ में सर और पेशानी को ख़ाक पर रख कर आजिज़ी और इन्किसारी (नम्रता) के साथ दुआ करनी चाहिये? आजिज़ी और ख़ाकसारी की आख़िरी और इन्तेहाइ मन्ज़िल सज्दा ही है। इसी लिये हुज़ूर सर्वरे कौनैन सल्ला० ने फ़रमाया कि ''बन्दा सज्दे की हालत में अल्लाह तआला से ज़्यादा क़रीब हो जाता है पस तुम सज्दे में दुआ किया करो''।

चुनांचे महेदवी जिस क़दर भी अल्लाह तआला से दुआऐं और मुनाजात करते हैं वह सज्दे ही में करते हैं और इसके लिये ख़ास दो रकात नमाज़ दुगाना तहीयतुल वुज़ू की निय्यत से अदा करके सज्दे में दुआ करते हैं जो ऐन अहकामे ख़ुदा की इत्तिबाअ और रसूलुल्लाह सल्ला० की इताअत है।

अब यह सवाल पैदा हो सकता है कि ऐसी हदीस भी मिलती है कि ''नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ की जाये'' (क्योंकि मौज़ूआत (निर्मित हदीसों) की कमी नहीं है) ऐसी सूरत में जबकी दो मुख़तलिफ़ अहादीस मिलती हों तो क्या किया जाये? और किस हदीस को तर्जीह दी जाये?

अईम्मए हदीस ने अहादीस के जांचने और सही होने का यही मेयार क़रार दिया है कि अगर अहादीस में इख़्तिलाफ़ पाया जाये तो क़ुरआन मजीद की तरफ़ रूजूअ् करना चाहिये। क़ुरआन मजीद जिस हदीस की ताईद करे वही हदीस सही हो सकती है वरना वह हदीस सही नहीं।

इस मेयार के मद्देनज़र ग़ौर किया जाये कि रिवायते हज़रत अनस रज़ी० बुख़ारी शरीफ़ और रिवायते हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० सुनन् अबू दाऊद की ताईद क़ुरआन मजीद करता है या नहीं?

चुनांचे क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाता है कि اُدْعُوا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً اِنَّهُ لاَ يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ(الاعراف ۵۵) यानि ''तुम अपने रब से आजिज़ी के साथ छुपाकर मांगो वह हद से गुज़रने वालों को नहीं चाहता''।

अल्लाह तआला के इस हुक्म से रिवायते हज़रत अनस रज़ी० बुख़ारी शरीफ़ और रिवायते हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० सुनन् अबू दाऊद की पूरी पूरी ताईद होती है और रब्बुल आलमीन के इस हुक्म से यह बात भी साबित होती है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने अल्लाह तआला के इस साफ़ और सरीह (स्पष्ट) हुक्म के इत्तिबाअ में यक़ीनन् सज्दे ही में दुआ मांगी होगी क्योंकि हुज़ूरे अकरम सल्ला० का अमल यक़ीनन् और ईमानन् अमली क़ुरआन है।

अल्लाह तआला के हुक्म और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की हदीस और अमल के इत्तिबाअ में सज्दे ही में दुआ करनी फ़र्ज़ होगइ। इसी लिये महेदवी फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर दुआ नहीं मांगते बल्कि सज्दे में दुआ मांगा करते हैं।

ऊपर बयान की हुवी आयते करीमा और हदीसे हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की उलमाए हदीस और मुफ़स्सिरीन भी यही तफ़सीर करते हैं। चुनांचे ***तफ़सीरे बैज़ावी*** में इस आयते क़ुरआनी की तफ़सीर में लिखा है कि ''छुपाकर और आजिज़ी से दुआ करना इख़्लास की दलील है''।

हज़रत इमाम फ़ख़्रुद्दीन राज़ी ने अपनी ***तफ़सीरे कबीर*** में इसी आयते करीमा की तफ़सीर के सिल्सिले में फ़र्माया है कि दुआ के सिलसिले में मोतबर बात यही है कि वह छुपाकर की जाये और कई वुजूहात से यह बात साबित होती है।

पहली वजह यह कि अल्लाह तआला ने उस दुआ का हुक्म फ़रमाया है जो छुपाने से नज़्दीक हो यानि छुपाकर करने का हुक्म फ़रमाया है और अम्र (आदेशात्मक) के सीगों से ज़ाहिर यही बात मालूम होती है कि उनसे वाजिब साबित होता है।

फिर अल्लाह तआला फ़रमाता है कि ''वह हद से गुज़रने वालों को नहीं चाहता''। इस हुक्म से यह बात ज़ाहिर हो रही है कि अल्लाह तआला उन लोगों को नहीं चाहता जो दोनों हुक्म ''आजिज़ी'' से और ''छुपाकर'' दुआ नहीं करते।

इस आयते करीमा में अल्लाह तआला की मुहब्बत से मुराद क़ुबूलियत और सवाब है तो ''वह हद से गुज़रने वालों को नहीं चाहता'' के यही माने हुवे कि जो लोग आजिज़ी से और छुपाकर दुआ नहीं मांगते अल्लाह तआला उनको क़ुबूल नहीं करेगा और कोइ सवाब नहीं देगा और उनपर एहसान नहीं करेगा और जो शख़्स इस सिफ़त से मौसूफ़ होगा वह क़ाबिले अज़ाब होगा क्योंकि उसने अल्लाह तआला के हुक्म की परवाह नहीं की। ग़र्ज़ उन लोगों के लिये सख़्त धमकी है जो दुआ को छुपाकर और आजिज़ी के साथ नहीं करते।

इस तफ़सील से साबित हुआ कि फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर बुलंद आवज़ से दुआ करना हरगिज़ जाइज़ नहीं है बल्कि सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ला० के ख़िलाफ़ और हुक्मे रब्बुल आलमीन के ख़िलाफ़ है। लिहाज़ा महेदवियों का यह अमल कि

''फ़र्ज़ नमाज़ के बाद हाथ उठाकर बुलंद आवाज़ से दुआ नहीं मांगते''

ऐन सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ला० का इत्तिबाअ और हुक्मे रब्बुल आलमीन की इताअत है और तक़वा और फ़ज़ीलत पर मब्नी है।

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّيۡ عَلٰى رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِيَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : महेदवी रमज़ान की सत्ताईसवीं रात में आधी रात के बाद अज़ाँ देकर इशा की नमाज़ के साथ दुगाना शबे क़द्र फ़र्ज़ की निय्यत से अदा करते हैं। क्या उनका यह अमल क़ुरआन मजीद और हदीस के तहत सही है?

जवाब : इस सवाल में दो बातें बयान की गइ हैं। एक यह कि महेदवी इशा की नमाज़ वक़्त पर अदा ना करके आधी रात के बाद क्यों अदा करते हैं? दूसरी यह कि दुगाना शबे क़द्र की नमाज़ फ़र्ज़ की निय्यत से अदा करते हैं तो क्या इस्लाम की पाँच वक़्त की नमाज़ौं के अलावा छटी नमाज़ फ़र्ज़ की जा सकती है ?

पहले हम सवाल नम्बर एक जो आधी रात के बाद क्यों अदा करते हैं उसका जवाब देंगे। अल्लाह तआला ने क़ुरआन मजीद में नमाज़ का जो हुक्म दिया है उसके अलफ़ाज़ यह हैं اَقِيۡمُوا الصَّلٰوة यानि नमाज़ क़ायम करो। इस हुक्म में फ़रज़ुल्लाहि तआला के अलफ़ाज़ नहीं हैं बल्कि सिर्फ़ नमाज़ क़ायम करो कहा गया। यह ''नमाज़ क़ायम करो'' का हुक्म क़ुरआन मजीद में कोइ (७०) मक़ामात पर आया है मगर कहीं इस बात की तफ़सील नहीं है कि कितनी नमाज़ें क़ायम की जायें? उसकी अदाइ का तरीक़ा क्या होना चाहिये? कौनसी नमाज़ फ़र्ज़, कौनसी वाजिब, कौनसी सुन्नत, कौनसी नफ़िल यह सब कुछ नहीं सिर्फ़ नमाज़ क़ायम करो का इरशाद होरहा है।

उसकी तालीम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० फ़रमा रहे हैं और सहाबए किराम रज़ी० सीख रहे हैं। सिर्फ़ दो नमाज़ें अदा हो रही हैं। एक आफ़ताब निकलने से पहले और दूसरी आफ़ताब ग़ुरूब होने से पहले (ग़ायतुल औतार)। हुज़ूर अकरम सल्ला० को मेराज होती है, पाँच वक़्त की नमाज़ें फ़र्ज़ होती हैं। क़ुरआन मजीद की आयते करीमा भी नाज़िल होती है कि (النساء۱۰۳) اِنَّ الصَّلٰوۃَ کَانَتْ عَلَی الْمُؤْمِنِیْنَ کِتَابًا مَّوْقُوْتَاo मेराज ही में इशा की नमाज़ में फ़र्ज़ और सुन्नत के अलावा वित्र का भी इज़ाफ़ा हो जाता है। उसके बाद हर नमाज़ की तालीम मुकम्मल हो जाती है। फ़र्ज़, वाजिब और सुन्नतौं का भी तऐयुन हो जाता है। हर नमाज़ की रकातें भी मुक़र्रर करदी जाती हैं। नमाज़ौं की अदाइ के तरीक़े की भी तालीम हो जाती है।

नमाज़ के लिये बुलाने का तरीक़ा भी अज़ाँ के ज़रीए मुक़र्रर हो जाता है। अज़ाँ के अलफ़ाज़ भी मख़सूस मुक़र्रर कर दिये जाते हैं उसके साथ साथ पाँच नमाज़ौं के वक़्त भी मुक़र्रर कर दिये जाते हैं और हर नमाज़ के इब्तदाइ और इन्तेहाइ औक़ात भी मुक़र्रर करदिये जाते हैं। चुनांचे

१) नमाज़े फ़ज्र का वक़्त तुलूए सुब्ह सादिक़ से आफ़ताब के किनारे के तुलू होने से पहले तक।

२) नमाज़े ज़ुहर का वक़्त ज़वाले आफ़ताब के बाद से हर चीज़ का साया सिवाय सायए असली के दोचंद होने तक।

३) नमाज़े असर का वक़्त हर चीज़ का साया सिवाय सायए असली के दो चंद होने के बाद से ग़ुरुबे आफ़ताब तक। (आफ़ताब ज़र्द होने के बाद असर की नमाज़ कराहते तहरीमी के साथ जायज़ है (नूरुल हिदाया)।

४) नमाज़े मग़रिब का वक़्त ग़ुरूबे आफ़ताब से ग़ुरूबे शफ़क़ सफ़ेद तक।

५) नमाज़े इशा का वक़्त ग़ुरूबे शफ़क़ सफ़ेद के बाद से तुलूए सुब्ह सादिक़ तक है।

अब एक मिसाल पर ग़ौर की जिये कि ज़ुहर की नमाज़ का वक़्त ज़वाले आफ़ताब के बाद से हर चीज़ का साया सिवाये सायए असली के दोचंद होने तक है। फ़र्ज़ कर लीजिये कि एक बजे से चार बजे या साढ़े चार बजे तक है। और एक शख़्स देढ़ बजे या दो बजे के बजाये साढ़े तीन बजे या चार बजे या उसके बाद मगर वक़्त के ख़त्म होने के अन्दर ज़ुहर की नमाज़ अदा करता है तो उसकी नमाज़ अदा हो जायेगी या नहीं? ज़ाहिर है कि उसकी नमाज़ यक़ीनन् अदा हो जायेगी क्योंकि उसने शर्अए मुबीन ने जो वक़्त मुक़र्रर किया है उसके अन्दर नमाज़ अदा की है। इसी तरह इशा की नमाज़ का वक़्त ग़ुरूबे शफ़क़ सफ़ेद के बाद कसरत से तारे निकल जाने के बाद तुलूए सुब्ह सादिक़ तक है। अगर एक शख़्स ने ८ या ९ बजे रात के बजाये एक बजे या दो बजे रात को इशा की नमाज़ अदा की तो उसकी नमाज़ में या अदाइ में कोइ हर्ज या ख़राबी आसकती है? हर गिज़ नहीं आसकती क्योंकि शर्अ मुबीन ने इशा की नमाज़ का जो वक़्त मुक़र्रर किया है उसके ख़त्म होने से पहले उसने नमाज़ अदा की यक़ीनन् उसकी नमाज़ अदा होगई, उसमें किसी क़िसम की ख़राबी नहीं आसकती। यह भी शर्अ मुबीन का क़ायदा और क़ानून है कि अगर किसी मस्जिद में उस वक़्त अज़ाँ न हुवी हो तो आख़िर वक़्त में आने वाले मुसल्ली को चाहिये कि पहले अज़ाँ देकर वक़्त की नमाज़ अदा करे।

शर्अ मुबीन के इन क़ायदों के मुताबिक़ महेदवी रमज़ान की सत्ताईसवीं रात में आधी रात के बाद अज़ाँ देकर जो इशा की नमाज़ अदा करते हैं वह बिलकुल सही और ऐन अहकामे ख़ुदा और इताअते शरीअते हक़्क़ा और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अहकाम और आमाल के तहत है।

अब आधी के बाद की रात पर ग़ौर किया जाये कि उस वक़्त की क्या अहम्मियत है। तहज्जुद की नमाज़ किस वक़्त पढ़ी जाती है? क्या आधी रात के पहले हिस्से में पढ़ी जाती है कि आधी रात के बाद पढ़ी जाती

है। ज़ाहिर और साबित है कि आधी रात के बाद पढ़ी जाती है। यह क्यों? महज़ इस लिये कि आधी रात के बाद के औक़ात अपने फ़ुयूज़ो बरकात और अन्वारे रब्बानी और तजल्लियाते रहमानी के एतिबार से ख़ास हैं।

अहादीस से साबित है कि मलाइका यानि फ़रिश्ते उस वक़्त में बतौरे ख़ास अल्लाह तआला का ज़िक्र और उसकी तस्बीह करते रहते हैं। इसके अलावा यह बात भी साबित है कि औलियाए किराम जिस क़दर भी इबादत और रियाज़त किया करते थे वह आधी रात के बाद ही किया करते थे। औलिया अल्लाह की इबादत और रियाज़त का वक़्त भी आधी रात के बाद और विलायत की तमाम इबादतें आधी रात के बाद ही हुआ करती हैं।

चुनांचे हदीस की किताब ***सही मुसलिम*** में हज़रत जाबिर रज़ी० से रिवायत है कि ''हज़रत नबी करीम सल्ला० ने फ़रमाया कि रात के तीसरे हिस्से में एक घड़ी ऐसी होती है कि उस वक़्त बन्दा मुसलमान अल्लाह तआला से जो मांगे वह उसे अता करे''।

नमाज़े वित्र पर ग़ौर किया जाये यह नमाज़ इशा की नमाज़ में दाख़िल है या क्या? जो लोग तहज्जुद की नमाज़ अदा करते हैं वह अगर अव्वले वक़्त इशा की नमाज़ अदा करलें तो वित्र की नमाज़ नहीं पढ़ा करते बल्कि बाक़ी रख छोड़ते हैं और तहज्जुद की नमाज़ के साथ अदा करते हैं और जो लोग तहज्जुद नहीं पढ़ते इशा की नमाज़ के साथ अदा करलेते हैं। ऐसी सूरत में वित्र की नमाज़ को किस वक़्त की नमाज़ में दाख़िल किया जाये आया इशा की नमाज़ में दाख़िल किया जाये या तहज्जुद की नमाज़ में दाख़िल किया जाये। एक अमल से तहज्जुद की नमाज़ का एक हिस्सा साबित हो रही है दूसरे अमल से इशा की नमाज़ का हिस्सा क़रार पारही है और अकसरियत यही है।

चुनांचे आईम्माए किराम में भी वित्र की नमाज़ से मुतअल्लिक़ इख़्तिलाफ़ है। हज़रत इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहे० के पास वित्र की

नमाज़ वाजिब है और हज़रत हमामे आज़म रहे० के शागिर्द हज़रत इमाम अबू यूसुफ़ रहे० और इमाम अहमद रहे० उसको सुन्नत कहते हैं। हज़रत इमाम शाफ़ई रहे०, हज़रत इमाम मालिक रहे० और हज़रत इमाम अहमद इब्ने हम्बल रहे० के नज़्दीक वित्र की नमाज़ सुन्नत है और हज़रत इमाम ज़फ़र रहे० इन सबके ख़िलाफ़ वित्र की नमाज़ को फ़र्ज़ कहते हैं।

ग़ौर का मक़ाम है कि यह तमाम अइम्मए किराम माअसूम नहीं हैं। उनसे ग़लती और ख़ता का इम्कान है और तमाम क़ियास (अनुमान) से काम लेरहे हैं। इसके बावजूद हर इमाम के पैरोऔं (अनुकरण कर्ता) का एतिक़ाद उनके इमाम के कहने पर है।

हज़रत इमाम आज़म रहे० के पैरोऔं के पास वित्र की नमाज़ वाजिब होगइ। हज़रत इमाम शाफ़ई रहे०, इमाम मालिक रहे० और इमाम अहमद बिन हम्बल रहे० के पैरोऔं के पास सुन्नत होगई और हज़रत इमाम ज़फ़र रहे० के पैरोऔ के पास फ़र्ज़ हो गइ।

हज़रत इमाम आज़म रहे० और इमाम ज़फ़र रहे० के पैरोऔं से कोइ पूछे कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के दो सौ बरसौं के बाद यह छटी नमाज़ कैसे फ़र्ज़ या वाजिब होगई जबकि उसका ज़िकर क़ुरआन मजीद में नहीं और जिसकी अदाइ का अम्रे मानवी भी क़ुरआन में नहीं और जिसकी नोइयत (विशेषता) को अहादीस भी ज़ाहिर नहीं करतीं। इसके अलावा वित्र की नमाज़ की तादादे रकात में भी अइम्मए किराम में इख़्तिलाफ़ है।

अलग़र्ज़ इख़्तिलाफ़ और अकसरियत के अमल को देखते हुवे वित्र की नमाज़ को इशा ही की नमाज़ में दाख़िल तसव्वुर करलिया जाये तो फिर इशा की नमाज़ का एक हिस्सा यानि वित्र[१] को आधी रात के बाद क्यों पढ़ा जारहा है?

(१) वित्र की नमाज़ की हक़ीक़त और उसकी कैफ़ियात क्या है यहाँ बयान करना ग़ैर ज़रूरी होगा इस लिये किसी और मौक़े पर बयान किया जायेगा इन्शा अल्लाह तआला ताकि अल्लाह तआला के आशिक़ और तालिब बन्दे उस से फ़ैज़ हासिल करसकें।

हज़रत इमाम आज़म रहे० के क़ौल के तहत महेदवि वित्र की नमाज़ को वाजिब समझते हैं और वाजिब की हैसियत से अदा करते हैं।

इस से साबित हो रहा है कि इशा की पूरी नमाज़ हो या उसका कोइ हिस्सा आधी रात के बाद पढ़ा जासकता है और ख़ुसूसन् औलिया अल्लाह और अल्लाह के नेक सालेह बन्दे और तहज्जुद गुज़ार लोग आधी रात के बाद ही नमाज़ौं और इबादतौं में मसरूफ़ होते हैं। इसके अलावा ग़ौर कीजिये कि अल्लाह तआला ने अपने हबीब मुकर्रम सल्ला० को जब मेअ्राज में बुलाया था और आसमानौं की सैर कराइ थी, अम्बिया अले० से मुलाक़ात और नमाज़ें अदा करवाइ थीं और मक़ामे वहदत में दाख़िल फ़रमाया था वह कौनसा वक़्त था ? यह सब कुछ आधी रात के बाद ही हुआ था।

इस तफ़सील से साबित हुआ कि आधी रात के बाद का वक़्त ख़ास अन्वारे रब्बानी और तजल्लियाते रहमानी का वक़्त है। इसी लिये महेदवी शबे क़द्र की ख़ास नमाज़ दुगानए लैलतुल क़द्र इस खास अन्वारे रब्बानी और तजल्लियाते रहमानी के वक़्त अदा करते हैं।

अब रातौं पर ग़ौर किया जाये तो मालूम होता है कि साल तमाम की बाज़ रातें आम रातौं पर बहुत ही फ़ज़ीलत रखती हैं। मसलन् शबे बराअत, शबे मेराज वग़ैरह यह क्यों? महज़ इसलिये कि इन रातौं में अल्लाह तआला के ख़ास ख़ास बरकात और अन्वारो तजल्लियात का ज़ुहूर होता है। इन रातौं में भी इबादात किस वक़्त की जाती हैं आधी रात ही के बाद की जाती है।

क़ुरआन मजीद में शबे मेअ्राज और अहादीसे शरीफ़ में शबे बराअत के हालात और वाक़ेआत बयान हुए हैं। इन रातौं की इबादात भी ख़ास फ़ज़ीलत रखती हैं मगर क़ुरआन मजीद में ऐसी ख़ास अहम्मियत से ज़िकर नहीं किया गया जैसी कि शबे क़द्र का किया गया है।

शबे क़द्र की तारीफ़ और उसकी अहम्मियत, मलाइका का नुज़ूल और उसकी फ़ज़ीलत का बतलाना और बतौरे ख़ास एक सूरह उसकी शान में नाज़िल फ़र्माना आख़िर क्या माने रखता है? महज़ उस रात की इबादत का बतौर माना (अर्थ) हुक्म करना मक़सूद है। अब ग़ौर कीजिये कि ऐसी अहम्मियत वाली रात जो एक हज़ार महीनौं से अफ़ज़ल और आला है, ऐसी रात की इबादत किस वक़्त की जानी चाहिये, क्या अव्वले वक़्त ही में अदा करके बाक़ी रात को खो देना चाहिये या इस ख़ैरो बरकत वाली रात के उस ख़ासुल ख़ास वक़्त में यानि आधी रात के बाद अदा करनी चाहिये। ज़ाहिर है कि आधी रात के बाद अन्वारे रब्बानी और तजल्लियाते रहमानी के वक़्त ही में अदा करनी चाहिये।

एक और मसअला भी है कि नमाज़ के इन्तेज़ार में जो वक़्त गुज़रता है वह नमाज़ ही में गुज़रने के बराबर तसव्वुर किया जाता है। अब इस लिहाज़ से ग़ौर किया जाये कि शबे क़द्र में आधी रात के बाद नमाज़ अदा करने से तमाम रात इबादत में गुज़रने के बराबर हो जाती है।

चुनांचे रमज़ान शरीफ़ की पच्चीसवीं रात में हुज़ूर सर्वरे काइनात सल्ला० का अमल और इरशाद इस बात की शहादत दे रहा है। ***मिश्कात शरीफ़*** की हदीस जो हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० की रिवायत से लिखी गइ है कि

''जब कि पाँच रातें रहीं यानि पच्चीसवीं रात हुइ हमारे साथ क़ियाम किया यहाँ तक कि आधी रात गई पस मैं ने कहा या रसूलुल्लाह सल्ला० काश कि हमारे लिये इस रात में ज़्यादा क़ियाम करते यानि आधी रात से ज़्यादा क़ियाम करते तो बेहतर था। फ़र्माया तहक़ीक़ (बेशक) आदमी जिस वक़्त फ़र्ज़ नमाज़ इमाम के साथ पढ़ता है यहाँतक कि इमाम फ़ारिग़ होता है उसके लिये पूरी रात का क़ियाम गिना जाता है यानि इशा और फ़ज्र पढ़ने के सबब् से तमाम रात के क़ियाम का सवाब हासिल होता है।''

इसी रात की कैफ़ियत को हज़रत महबूबे सुब्हानी ग़ौसे आज़म दस्तगीर शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी क़द्दसल्लाहु सिर्रहुल अज़ीज़ अपनी किताब *ग़ुनियुतुत् तालिबीन* में हज़रत अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ी० के हवाले से तहरीर फ़र्माते हैं

''हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० पच्चीसवीं रात में तश्रीफ़ लेआये और हमको नमाज़ पढ़ाइ यहाँतक कि आधी रात उसी में बसर होगइ। बाद में हमने अर्ज़ किया अगर हम इस रात में नफ़िल अदा करें तो हमारे वास्ते यह हर सूरत में बेहतर होगा। उसके जवाब में आप सल्ला० ने फ़रमाया कि अगर कोइ आदमी उस वक़्त इमाम के साथ खड़ा रहे जबतक वह खड़ा हो तो उसको पूरी रात के क़ियाम का सवाब मिलता है''।

मिश्कात शरीफ़ की हदीस शरीफ़ से तीन बातें मालूम होती हैं। एक यह कि रमज़ान की पच्चीसवीं रात में हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने आधी रात तक नमाज़ पढ़ाइ।

दूसरे यह कि इशा की फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ाइ

तीसरे यह कि उस रात की इशा और फ़ज्र की नमाज़ें इमाम के साथ पढ़ने से तमाम रात के क़ियाम का सवाब मिलता है।

हज़रत महबूबे सुब्हानी रहे० ने जो हदीस हज़रत अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ी० की रिवायत से तहरीर फ़र्माइ है उसमें एक और बात मालुम हुइ कि

''हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने इतनी देर नमाज़ पढ़ाइ कि आधी रात बसर होगइ'' उसके बाद में अर्ज़ किया गया कि

''अगर हम इस रात में नफ़िल अदा करें तो हमारे वास्ते यह हर सूरत में बेहतर होगा''

तो हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने इसकी इजाज़त नहीं दी बल्कि यह जवाब दिया कि

''अगर कोइ आदमी उस वक़्त तक इमाम के साथ खड़ा रहे जबतक वह खड़ा हो तो उसको पूरी रात के क़ियाम का सवाब मिलता है''।

यानि यह कि फ़र्ज़ नमाज़े इशा की अदाइ ही में पूरी रात के क़ियाम का सवाब मिलता है, नफ़िल नमाज़ों की ज़रुरत नहीं। लिहाज़ा साबित हुआ कि तमाम रात क़ियाम और इबादत में गुज़रने के बराबर होगई।

इन तमाम दलीलों और मंज़िलों के बाद देखिये कि उस शबे क़द्र की सत्ताईसवीं रात मे मुअल्लिमे काइनात हुज़ूरे अकरम हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० ने क्या अमल किया? आया अव्वले वक़्त ही नमाज़ अदा फ़रमादी या कौन से वक़्त में अदा फ़रमाइ? ***मिश्कात शरीफ़*** बाब क़ियाम शहरे रमज़ान की फ़स्ले सानी में हज़रत अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी रज़ी० से यह रिवायत बयान की गइ है।

''पस जब कि तीन रातें रहीं यानि सत्ताईसवीं रात हुइ हज़रत सल्ला० ने अपने अहल को और अपनी औरतों को और लोगों को जमा किया और यहाँतक हमारे साथ क़ियाम किया कि हम डरे कि हम से फ़लाह फ़ौत होजाये। रावी ने कहा कि फ़लाह क्या है? तो अबू ज़र रज़ी० ने कहा कि सहर का खाना फिर बाक़ी महीने में यानि अट्ठाईसवीं और उन्तीसवीं रात में हमारे साथ क़ियाम नहीं किया''।

इस रिवायत को अबू दाऊद, तिरमिज़ी, नसाई और इब्ने माजा ने भी लिखा है। गोया सिहाह सित्ता के चार अइम्मए हदीस ने इस रिवायत से इत्तिफ़ाक़ किया और तफ़सील से सत्ताईसवीं रमज़ान की रात की कैफ़ियत और मौलाए काइनात हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल को बतलाया है।

इसी हदीस शरीफ़ को हज़रत अबू ज़र ग़फ़्फ़ारी सहाबी रज़ी० की रिवायत से हज़रत महबूबे सुब्हानी ग़ौसे आज़म शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल

क़ादिर जीलानी क़द्दसल्लाहु सिर्रहुल अज़ीज़ ने भी अपनी किताब *ग़ुनियतुत् तालिबीन* में तहरीर फ़र्माया है।

इस मुस्तनद (प्रमाणित) हदीस की तफ़सीलात से साफ़ ज़ाहिर है कि

१) हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने रमज़ान शरीफ़ की सत्ताईसवीं रात की नमाज़ का बड़ा एहतिमाम (प्रबंध) फ़रमाया।

२) ख़ास अपने आल (सन्तान) को और अपनी औरतौं को भी जमा फ़रमाया।

३) दूसरे लोगौं को भी जमा फ़रमाया यानि तमाम मुसलमान मर्द, औरतौं और बच्चौं को भी जमा फ़रमाया।

४) इस एहतिमाम से आप सल्ला० ने और कोइ नमाज़ अदा नहीं फ़रमाइ।

५) आधी रात के बाद ही इशा की फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ाइ।

६) इतनी देर तक नमाज़ पढ़ाइ कि सहरी खाने का वक़्त ख़त्म होने का डर होने लगा।

७) तरावीह की नमाज़ नहीं पढ़ाइ (जिसका सुबूत आयन्दा दिया जारहा है)।

इन तफ़सीलात के साथ इस हदीस शरीफ़ पर चार ज़बरदस्त अइम्मए हदीस ने इत्तिफ़ाक़ किया है, यानि यह हदीस शरीफ़ सही असनाद के साथ सिर्फ़ एक इमाम के पास नहीं बल्कि सिहा सित्ता के चारों इमामौं के पास पहुंची है जिसको चारों अइम्मा ने क़ुबूल किया है। इसके अलावा साहबे कश्फ़ो करामात हुज़ूर ग़ौसुल आज़म शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी क़द्दसल्लाहु सिर्रहुल अज़ीज़ ने भी इस हदीस शरीफ़ को निहायत सही और मुस्तनद क़रार दिया और अपनी किताब ***ग़ुनियतुत् तालिबीन*** में तहरीर फ़र्माया।

हदीस शरीफ़ की इन तमाम तफ़सीलात के मुक़ाबिल और रोश्नी में महेदवियौं के अमल को देखिये कि रमज़ान शरीफ़ की सत्ताईसवीं शबे क़द्र की नमाज़ किस ऐहतिमाम से अदा करते हैं?

इस शबे क़द्र की नमाज़ में वह सारा एहतिमाम करते हैं जो हुज़ूर मुअल्लिमे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया और इस रात में वही आमाल करते हैं जो हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने किया, और उसी वक़्त नमाज़ पढ़ते और ख़त्म करते हैं जिस वक़्त हुज़ूर इमामुल काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने ख़त्म फ़रमाइ। गोया महेदवियौं के इस रात में जिस क़दर इबादात और आमाल हैं ऐन सुन्नते हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इत्तिबा में हैं।

अब रहा यह सवाल कि इस मुतबर्रिक (पवित्र) और निहायत क़दर वाली रात में महेदवी तरावीह की नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते?

शर्अ मुबीन ने इबादात के चार अक़साम मुक़र्रर किये हैं।

एक फ़र्ज़ : जो दलीले क़तई से बसीग़ए अम्र साबित हो। इसकी दो क़िस्म हैं एक फ़र्ज़े ऐन दूसरा फ़र्ज़े किफ़ाया। फ़र्ज़े ऐन उसको कहते हैं जिसकी अदाइ हर आक़िल बालिग़ पर बिला उज़रे शरई फ़र्ज़ है जैसे नमाज़, रोज़ा वग़ैरह। फ़र्ज़े किफ़ाया उसको कहते हैं जो बाज़ लोगौं के अदा करने से सब की जानिब से अदा होजाये जैसे नमाज़े जनाज़ा।

दूसरा वाजिब : जो दलीले ज़न्नी से साबित हो। जिसका तर्क करने वाला गुनाहगार और क़ाबिले अज़ाब है। दलीले ज़न्नी वह है कि उसके सुबूत में अइम्मए किराम में इख़्तिलाफ़ हो, जैसे नमाज़े वित्र और नमाज़े ईदैन वग़ैरह।

तीसरी सुन्नत : जिसको हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने अकसर किया हो और जिस की अदाई के लिये ताकीद फ़रमाइ हो।

सुन्नत की दो क़िस्म हैं - एक मोअक्कदा और दूसरे ग़ैर मोअक्कदा। सुन्नते मोअक्कदा उसको कहते हैं जिस की अदाइ के लिये हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने ताकीद फ़रमाइ हो और ख़ुद भी हमेशा उसको अदा फ़रमाया हो, जैसे नमाज़े फ़ज्र, ज़ुहर और इशा के साथ की सुन्नतें।

सुन्नते ग़ैर मोअक्कदा वह है जिसकी अदाई की निस्बत हज़रत नबी करीम सल्ला० ने ताकीद नहीं फ़रमाइ हो और कभी कभी ख़ुद भी उसको तर्क फ़रमाया हो जैसे फ़र्ज़ इशा से पहले चार रकात सुन्नत। उसके अदा करने में सवाब है और उसके तर्क करने में अज़ाब नहीं।

चौथा मुस्तहब् : जो फ़र्ज़, वाजिब और सुन्नत के सिवा उस से ज़ाइद हो। उसके अदा करने पर सवाब हासिल होता है और तर्क करने पर अज़ाब नहीं।

अब ग़ौर कीजिये और बताईये कि नमाज़े तरावीह इबादात की कौन सी क़िस्म में दाख़िल है? फ़र्ज़ या वाजिब या सुन्नत या मुस्तहब है?

हमारा ग़ौर और हमारी फ़िक्र कुछ काम नहीं देसकती। हम किसी इबादत को किसी हुक्म में अपनी तरफ़ से दाख़िल नहीं कर सकते। हमको शर्अ मुबीन, अइम्मए किराम और अहादीसे हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरफ़ रुजूअ् करना पड़ेगा।

चुनांचे हज़रत इमामुल इरफ़ान महबूबे सुब्हानी शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी क़द्दसल्लाहु सिर्रहुल अज़ीज़ ने अपनी किताब *ग़ुनियतुत् तालिबीन* के बाब तरावीह में *सही मुस्लिम* हदीस की किताब के हवाले से तहरीर फ़र्माया है कि

''नमाज़े तरावीह बा जमाअत मुस्तहब है''

इसके अलावा ***मिश्कात शरीफ़*** के बाब तरावीह में हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० के हवाले से यह हदीस साफ़ और सरीह अलफ़ाज़ में मौजूद है कि

''रसूलुल्लाह सल्ला० तरावीह की रग़्बत दिलाते थे और ताकीदी हुक्म नहीं फ़रमाते थे''।

पस फ़रमाते थे कि जो शख़्स रमज़ान में सही एतिक़ाद के साथ तलबे सवाब के वास्ते ना कि दिखाने और सुनाने के लिये तरावीह पढ़े उसके गुनाहे सग़ीरा बख़्शे जाते है।

पस रसूलुल्लाह सल्ला० के आख़िर वक़्त तक यही अम्र था और हज़रत अबू बक्र रज़ी० की ख़िलाफ़त के ज़माने में भी यही अमल था यानि जो कोइ सवाब के वास्ते चाहता बतौरे ख़ुद पढ़ लेता। जमाअत मुक़र्रर नहीं थी और हज़रत उमर रज़ी० की ख़िलाफ़त के अव्वल ज़माने में भी यही अमल था, फिर हज़रत उमर रज़ी० ने जमाअत का हुक्म दिया।

हज़रत उम्मुल मोमिनीन बीबी आइशा सिद्दीक़ा रज़ी० से भी यह हदीस रिवायत की गई है। हज़रत इमामुल इरफ़ान महबूबे सुब्हानी रहे० ने अपनी किताब *ग़ुनियतुत् तालिबीन* में बाब तरावीह में हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० और सही मुस्लिम के हवाले से और हज़रत उम्मुल मोमिनीन बीबी आइशा सिद्दीक़ा रज़ी० के हवाले से तहरीर फ़र्माया है कि

''हज़रत पैग़म्बर सल्ला० ने एक ही रात तरावीह की नमाज़ पढ़ी और बाज़ का क़ौल है कि दो रात और बाज़ कहते हैं कि तीन रात नमाज़े तरावीह पढ़ी है। (इत्तिबाए सुन्नत में महेदवी रमज़ान की इब्तदाइ तीन रातों में तरावीह लाज़िमन् पढ़ते हैं इसके अलावा महेदविया के बाज़ ख़ानदानों में दस दिन और बाज़ ख़ानदानों में पूरा महीना तरावीह पढ़ते हैं)। उसके बाद पैग़म्बरे ख़ुदा सल्ला० असहाब के पास तश्रीफ़ नहीं लाये हालांकि वह आप के मुन्तज़िर रहे और उसके बाद आप सल्ला० ने फ़रमाया कि ''अगर मैं उस वक़्त निकल आता तो तुम लोगों पर तरावीह की नमाज़ फ़र्ज़ हो जाती''।

हज़रत उमर रज़ी० की ख़िलाफ़त के दिनौं में माहे रमज़ान का सारा महीना तरावीह पढ़ी गइ इसी वास्ते यह नमाज़ उन्ही की तरफ़ मन्सूब है।

इन दोनों हदीसौं से साबित हुआ कि

१) हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने रमज़ान शरीफ़ की अव्वल सिर्फ़ तीन रातौं में नमाज़े तरावीह पढ़ी और पढ़ाइ है मगर ताकीदी हुक्म नहीं फ़र्माया।

२) रमज़ान की बाक़ी रातौं में नमाज़े तरावीह पढ़ी और न पढ़ाइ।

३) ऐसी सूरत में साफ़ बात यह है कि रमज़ान की सत्ताईसवीं रात में भी हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने नमाज़े तरावीह नहीं पढ़ी बल्कि इशा की नमाज़ अदा फ़र्माइ।

हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इन इरशादात और आमाल की रोशनी में साबित हुआ कि इस मुतबर्रिक और निहायत क़दर वाली रमज़ान की सत्ताईसवीं रात में महेदवियौं के जिस क़दर भी आमाल और इबादात हैं हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की ऐन इत्तिबा (ठीक अनुकरण) में हैं।

अब हम सवाल का दूसरा हिस्सा कि

''महेदवी दुगाना शबे क़द्र की नमाज़ फ़र्ज़ की निय्यत से अदा करते हैं तो क्या इस्लाम की पाँच वक़्त की नमज़ौं के अलावा छटी नमाज़ फ़र्ज़ की जासकती है?'' का जवाब देंगे।

हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के ज़ाहिर को नबूवत और हज़ूरे अकरम सल्ला० के बातिन को विलायत कहते हैं।

मुहक़्क़िक़ीन (विज्ञानी) सोफ़ियाए किराम का तस्लीम किया हुआ और माना हुआ मसअला है कि कोइ नबी उस वक़्त तक नबूवत के मन्सब पर

नहीं आसकता ता वक़्ते कि उसको पहले विलायत का दर्जा न मिले और यह भी एक मानी हुइ हक़ीक़त है कि हर नबी को मिश्काते विलायते मुहम्मदी सल्ला० से ही फ़ैज़ मिलता है।

अल्लाह तआला की क़ुर्बत और नज़्दीकी को मक़ामे विलायत कहते हैं और अहकाम और फ़ैज़ाने इलाही की तक़सीम के मक़ाम को मक़ामे नबूवत कहते हैं, यानि नबी मिशकाते मुहम्मदी सल्ला० से अहकाम और फ़ैज़ाने इलाही हासिल करता है और मख़लूक़ को पहुंचाता है। मक़ामे नबूवत पर यह अहकामे इलाही हज़रत जिब्राईल अले० के ज़रीए नाज़िल होते हैं जिसको क़ुरआन की ज़बान में ''वही'' कहते हैं।

सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने जब अपनी नबूवत का इज़्हार फ़रमाया तो अल्लाह की सुन्नत के क़ायदे के मुताबिक़ यहाँ भी अहकामे इलाही ***वही*** की सूरत में हज़रत जिब्राईल अले० के ज़रीए नाज़िल हुवे जिसके मज्मुए का नाम क़ुरआन मजीद है।

चूंकि अहकामे इलाही के नुज़ूल के एतिबार से दीन को मुकम्मल करदेना था तो अल्लाह तआला ने अपने कलामे आख़िर में अहकामे नबूवत के साथ साथ अहकामे विलायत भी नाज़िल फ़रमादिये, क्योंकि उसके बाद और कोइ किताबे इलाही आने वाली नहीं थी।

इस आख़िरी किताबे इलाही की आख़िरी और मुकम्मल तालीम के लिये हुज़ूर मुअल्लिमे काईनात सरदारे दो जहाँ ख़ातिमुल् अम्बिया हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० को रवाना फ़रमाया ताकि हुज़ूरे अकरम सल्ला० के इरशादात के ज़रीए क़ौली तालीम (मौखिक शिक्षा), आप सल्ला० के आमाल के ज़रीए अमली तालीम (क्रियात्मक शिक्षा), आप सल्ला० के सरापा हाल के ज़रीए हाली तालीम (अवस्था की शिक्षा) और आप सल्ला० के असरार (रहस्य) के ज़रीए असरार की तालीम मुकम्मल होजाये।

चूंकि हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के ज़माने में दीने इस्लाम अपने इब्तदाइ मनाज़िल (प्रारंभिक दशा) में था और इल्मुल इस्लाम और इल्मुल ईमान जो क़ुरआने हकीम के दो अहम हिस्से हैं पहले उन्ही अहकाम की तालीम मुकम्मल होनी थी इस लिये उन्ही अहकाम पर ज़्यादा तवज्जह की गई।

अब रह गइ विलायत के अहकाम की तालीम जो नबूवत का बातिन है जिस को क़ुरआन की ज़बान में **इल्मुल एहसान** कहते हैं।

नबूवत के ज़माने में उसकी भी तालीम हुइ लेकिन ख़ास तरीक़े पर, सलाहियत और क़ाबिलीयत (योग्यता) के एतिबार से हुइ मगर आम ताम (सामान्य रुप से) बतौरे दाअवत नहीं हुइ जिस तरह कि अहकामे नबूवत यानि इल्मुल इस्लाम और इल्मुल ईमान की तालीम आम ताम बतौर दाअवत की गइ।

यहाँ इस हक़ीक़त को भी ज़ाहिर करदेना ज़रुरी और मुनासिब होगा कि हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने अगरचे कि अहकामे विलायत यानि इल्मुल एहसान की क़ौलन् बतौर दाअवत तालीम नहीं फ़र्माइ मगर फ़ेलन् (क्रियात्मक) और हालन् (दशात्मक) तो आम ताम उसका इज़्हार फ़रमाया लेकिन आम लोगौं ने उसको समझा नहीं। जिन लोगौं में नूरे बसारत था उन्होंने हुज़ूरे मुकर्रम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० को अहकामे विलायत पर अमल करते देखा। जिन लोगौं में नूरे अक़्लो फ़हम था उन्होंने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के हाल को और अहकामे विलायत को समझा और ऐन मुताबिक़ पाया। तफ़सीलात का इस वक़्त मौक़ा नहीं सिर्फ़ चंद मिसालें समझ में आने के लिये पेश करदी जाती हैं।

मसलन् अहकामे विलायत में सबसे पहला हुक्म तर्के दुनिया का है, जिसका ज़ाहिरी मत्लब तो यही है कि तिजारत, ज़िराअत, मुलाज़िमत

और तमाम मआश के ज़रीऔं (जीवनोपाय) को ख़त्म करके अपने आप को सिर्फ़ अल्लाह तआला के हवाले करदेना है।

तर्के दुनिया की बातिनी कैफ़ियत और मक़ामात का बयान यहाँ ग़ैर ज़रुरी है इसलिये उसका इज़्हार नहीं किया गया आयन्दा किसी और मौक़े से किया जायेगा इन्शा अल्लाहु तआला ता कि अल्लाह के आशिक़ और तालिब बन्दे फ़ैज़ पासकें।

चूनांचे तर्के दुनिया के इसी मत्लब और कैफ़ियत को हज़रत इमामुल इरफ़ान महबूबे सुब्हानी ग़ौसुल आज़म शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी रहे० ने अपनी किताब ***फ़ुतूहुल ग़ैब*** में इन अलफ़ाज़ में बयान फ़र्माया है।

पहली मंज़िल ख़ल्क़त और कस्ब पर भरोसा :

''अल्लाह तआला के फ़ज़्ल और उसके बेवास्ता नेअ्मतौं से महरुम है कि तू ख़ल्क़त (लोगौं), अस्बाब (सामान), सन्अत (शिल्प) और कस्ब (कमाई) पर भरोसा करता है। ख़ल्क़त तुझको मसनून् तरीक़ से कमाकर खाने से रोकती है, जबतक तू ख़ल्क़त के फ़ज़्ल (मेह्रबानी) और बख़्शिश (दान) का उम्मीदवार है उनके दर्वाज़ौं पर सवाल करता रहेगा तो अल्लाह तआला के साथ ख़ल्क़त को शरीक (साझी) बनाने वाला है और अपने कस्ब और हलाल कमाई से न कमाकर खाने के बाइस अल्लाह तआला तुझको अज़ाब करेगा''।

दूसरी मंज़िल कस्ब पर भरोसा और इत्मीनान :

''फिर जब तू ख़ल्क़त की तरफ़ मुतवज्जह होने से तौबा करे और उसे परवरदिगार के साथ शरीक न बनायेगा और किसी कस्ब को इख़्तियार करेगा और उसी से कमाकर खायेगा और उस कस्ब पर

भरोसा करेगा और उस पर मुत्मइन (संतुष्ट) हो जायेगा और अल्लाह के फ़ज़्लो करम को भुलादेगा तो फिर भी तू मुश्रिक होगा। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि यह शिर्क पहले की निस्बत अख़फ़ा (गुप्त) है। इसी लिये अल्लाह तआला तुझको अज़ाब करेगा और अपने फ़ज़्लो करम से बेवास्ता रिज़्क़ पहुंचाने से तुझको महरुम करदेगा''।

तीसरी मंज़िल तमाम वास्तौं और अस्बाब को तर्क करके सिर्फ़ अल्लाह तआला के हवाले करदेना :

''जब तू उस से तौबा करेगा और उसके वास्ते शिर्क को उठादेगा और कस्ब, हीला और क़ुव्वत पर भरोसा करना छोड़ देगा और ख़ुदाए तआला को राज़िक़े मुत्लक़ (नितांत अन्न दाता) जानेगा, क्योंकि वही सबब् बनाने वाला, आसान करने वाला और कस्ब की ताक़त बख़्शने वाला और हर भलाइ की तौफ़ीक़ देने वाला है और बन्दौं की रोज़ी उसी के हाथ में है''।

कभी तो तुझे लोगौं से सवाल करने पर रोज़ी देता है। कभी कस्ब के मुआवज़े में रोज़ी पहुंचाता है और कभी अल्लाह तआला से सवाल करने पर रिज़्क़ मिलता है।

पस तुझे चाहिये कि तमाम वास्तौं और अस्बाबौं को तर्क करके ख़ुदा की तरफ़ ही मुतवज्जह हो और अपने आपको उसके हवाले करदे।

जब तू ऐसा करेगा तो अल्लाह तआला के फ़ज़्ल और तेरे दरमियान् जो परदा है वह उठ जायेगा और अल्लाह तआला अपने फ़ज़्लो करम से तुझे हर वक़्त अन्दाज़ए हाल के मुवाफ़िक़ बेवास्ता रिज़्क़ पहुंचायेगा।

इस इरशादे गिरामी की रोश्नी में देखिये कि क्या महेदविया मुरशिदाने तरीक़त और बुज़ुर्गाने दीन का अमल इसी उसूल पर नहीं है?

तर्के दुनिया के मक़ामात को समझ लेने के बाद हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की पाक ज़िन्दगी पर नज़र कीजिये।

आपने अपनी नबूवते हक़्क़ा का एलान फ़रमाने के बाद क्या कस्ब फ़रमाया? तिजारत फ़रमाइ? ज़िराअत फ़रमाइ? मुलाज़िमत फ़रमाइ? कुछ नहीं फ़रमाया सिर्फ़ तब्लीग़े हक़ फ़रमाइ। क्या हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस अमल से आप सल्ला० तारिके दुनिया नहीं साबित होरहे हैं? और साथ ही यह इरशाद भी होरहा है कि ***''ला रहबानियतु फ़िल इस्लाम''।***

चुनांचे अमलन् आप सल्ला० आबादी ही में रहते हैं। किसी जंगल के गोशे या किसी इबादत ख़ाने में मुक़ैयद नहीं होते, अहकामे दीने हक़ की तब्लीग़ भी फ़रमा रहे हैं और तालीम भी। अल्लाह तआला के रास्ते में तकालीफ़ और मसाइब (कष्ट) झेले जारहे हैं और सब्रे जमील का भी मुज़ाहरा हो रहा है। मज़्हबी और दीनी जंग में भी शिर्कत हो रही है और सुल्ह नामे (संधि पत्र) भी मुरत्तब किये जारहे हैं। फ़ुतूहात भी हो रही हैं, अहकामे मम्लुकत की अमलन् तालीम भी हो रही है और इज़्दिवाजी ज़िन्दगी (विवाहित जीवन) के भी हामिल हैं।

हयाते पाक (पवित्र जीवनी) के इन नमूनौं से *ला रहबानियतु फ़िल इस्लाम* को अमलन् साबित किया जा रहा है। तर्के दुनिया के साथ तवक्कुले ताम (ख़ुदा पर पूर्ण विश्वास) पर भी अमल किया जा रहा है चुनांचे पेट पर तीन तीन पत्थर बांधे जा रहे हैं मगर दस्ते सवाल दराज़ नही किया जा रहा है और न उसके लिये कोइ अस्बाब और ज़राए ढूंडे जा रहे हैं। साथ ही यह भी कि जो कुछ आ रहा है मुहाजिर और अन्सार में तक़सीम करदिया जा रहा है।

क्या सरदारे दो जहाँ हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस अमल से आप सल्ला० का तवक्कुल के हुक्म पर कामिल अमल साबित नहीं हो रहा है?

इसी तरह एक तरफ़ नबूवत की इबादत पंज वक़्ता नमाज़ की पाबंदी हो रही है तो दूसरी तरफ़ विलायत की इबादत तहज्जुद की नमाज़ और तमाम रात इबादत, रियाज़त और ज़िक्रुल्लाह में गुज़ारी जा रही है।

एक तरफ़ ज़िक्रे दवाम जारी है तो दूसरी तरफ़ हिज्रत के हुक्म की ताअ्मील हो रही है।

अलग़र्ज़ तमाम अहकामे विलायत पर पूरा पूरा अमल किया जा रहा है और शिद्दत के साथ अमल किया जा रहा है जिस से फ़र्ज़ की नौइयत अमलन् ज़ाहिर है। बात सिर्फ़ यह बाक़ी है कि उनकी फ़रज़ियत का एलान और उसकी तब्लीग़ बतौरे दाअवत नहीं की गई। क्यों नहीं की गइ? इस लिये कि क़ुरआने हकीम की बलाग़त (अलंकार - शास्त्र) और हिकमत (तत्वज्ञान) को वही अच्छी तरह जान सकता है जो उसका मुख़ातब (संबोध्य) है। इसी हिकमते बालिग़ा के पेशे नज़र तक़ाज़ाए वक़्त और मस्लिहते क़ुरआन के तहत दाअवत नहीं की गइ जिस की कइ मिसालें क़ुरआने हकीम में मौजूद हैं। इल्मुल एहसान से संबंधित उन्ही अहकामे विलायत की तब्लीग़ बतौरे दाअवत की तकमील ही के लिये फ़रमाया गया है कि

''मेरी उम्मत कैसे हलाक होगी जब कि मैं उसके अव्वल हिस्से में हूँ और ईसा इब्ने मर्यम अले० उसके आख़िर हिस्से में हैं और महेदी जो मेरी अहले बैत से है उसके दरमियानी हिस्से में है''। (मिश्कात शरीफ़, मुस्नद इमाम अहमद बिन हम्बल बरिवायत हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ी०, कंज़ुल उम्माल बरिवायत हज़रत अली रज़ी०)

इस हदीसे शरीफ़ से साबित होता है कि

उम्मते मुहम्मदी सल्ला० के इब्तदाइ ज़माने में यानि अव्वल हिस्से में अहकामे नबूवत यानि इल्मुल इस्लाम और इल्मुल ईमान की तब्लीग़ और तालीम होगी और उम्मते मुहम्मदी सल्ला० के दरमियानी हिस्से में अहकामे विलायत यानि इल्मुल एहसान की तब्लीग़ और तालीम होगी।

चुनांचे ऐसा ही हुआ हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के ज़माने में अहकामे नबूवत इल्मुल इस्लाम और इल्मुल ईमान की तब्लीग़ और तालीम हुइ। उम्मते मुहम्मदी सल्ला० के दरमियानी हिस्से में हज़रत इममुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० के ज़माने में अहकामे विलायत इल्मुल एहसान की तब्लीग़ (प्रचार) और तालीम (शिक्षा) हुइ। इल्मुल एहसान से संबधित जिन अहकामे विलायत पर क़ुरआने हकीम की हिकमते बालिग़ा के तहत ख़ुद हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने बहैसियते फ़र्ज़ अमल फ़रमाया मगर उम्मत पर उसकी तब्लीग़ नहीं फ़र्माइ थी, बमूजिब बशारात और अलामाते अहादीस हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० ने तशरीफ़ लाकर उन अहकामे विलायत के फ़र्ज़ होने का एलान और तब्लीग़ बतौरे दाअवत फ़रमाइ।

हुज़ूर हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० ने जहाँ और अहकामे विलायत को बमूजिब अहकामे क़ुरआने हकीम और बइत्तिबा अमले हुज़ूर मुअल्लिमे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० फ़र्ज़ फ़रमाया वहीं दुगाना शबे क़द्र को भी फ़र्ज़ फ़रमाया। चुनांचे शबे क़द्र में हुज़ूर सरदारे दो आलम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने जिस एहतिमाम से इबादत फ़रमाइ वह हदीसे मुतवातिर जो सिहा सित्ता के चार ज़बरदस्त अइम्मए हदीस की मुस्तनद हदीस है जिसको ऊपर बयान किया गया है, उस से साबित है कि हुज़ूर सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्ज़ की नौइयत (विशेषता) और अहम्मियत की मानिंद अदा फ़र्माया है।

इन तफ़सीलात और हालात से हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० के फ़रमान की नाक़ाबिले फ़रामोश हक़ीक़त आशकारा होगई जो फ़रमाया था कि "مذهبِ ما كتاب الله واتباع رسول الله" यानि हमारा मज़्हब अल्लाह तआला की किताब और उसके रसूल सल्ला० का इत्तिबा है।

हुज़ूर इमामुना सय्यदना हज़रत सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० के फ़रमान से साबित हो रहा है कि महेदवियौं का मज़्हब अल्लाह तआला की किताब और अल्लाह के रसूल सल्ला० का इत्तिबा है गोया ख़ालिस दीने इस्लाम है।

मुनासिब होगा कि हदीसे मुतवातिर का मक़ाम समझ लिया जाये ताकि इमाम महेदी मौऊद अले० के मक़ाम को समझने में आसानी हो जाये। जब इमाम महेदी अले० का मक़ाम समझ में आजायेगा तो हर मसअला (विषय) आसान और साफ़ हो जायेगा।

क़ुरआने मजीद के क़ाबिले एतिमाद (विश्वसनीय) होने और क़तई (निर्णायक) होने की क्या दलील है? सिर्फ़ यही कि वह नक़्ले मुतवातिर के ज़रीये हम तक पहुंचा है, इस तरह कि हुज़ूर सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़बाने पाक से सुनकर पहले सहाबा किराम रज़ी० ने नक़्ल किया, उसके बाद सहाबा किराम रज़ी० के इज्माअ ने उसको तरतीब दिया उसके बाद सहाबा किराम रज़ी० के सामने ताबईन रहे० ने उसकी हज़ारों नक़्लें कीं। उसके बाद ताबईन रहे० ही के सामने तबअ ताबईन ने हज़ारों बल्कि लाखों नक़्लें कीं। इसी तरह वह हम तक पहुंचा।

नक़्ल के इस अमल के तहत नक़्ले मुतवातिर की यह तारीफ़ (परिभाषा) की गइ कि

''हर ज़माने में उस रिवायत को ऐसी कसीर जमाअत ने नक़्ल किया हो कि उन सब का झूट पर मुत्तफ़िक़ (सहमत) होना आदतन् नामुम्किन है''।

पस चूंकि क़ुरआन मजीद नक़्ले मुतवातिर के ज़रीए हम तक पहुंचा है इसी लिये वह क़तई अस्सुबूत (निर्णयात्मक) है।

इसी तरह वह हदीस जो मुतवातिर (निरंतर) नक़्ल की जारही हो जिस से क़तई तौर पर साबित होता हो कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला०

का इरशाद है तो वुजूबे अमल के एतिबार से उसमें और क़ुरआन मजीद की आयत में कोइ फ़र्क़ नहीं होगा क्योंकि क़ुरआन मजीद आँहज़रत सल्ला० के बारे में गवाही देरहा है कि (سورہ نجم) وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْىٌ يُّوْحٰى यानि (हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला०) जो कुछ बोलते हैं अपनी तरफ़ से नहीं बोलते बल्कि बेशक वही बोलते हैं जो उनको ''वही'' की जाती है।

इस आयते करीमा में *वमा यन्तिक़ु* (आप सल्ला० जो क़ुछ बोलते हैं) के अलफ़ाज़ से उमूमियते कामिल (पूर्ण सामान्यता) का मत्लब निकलता है, इस लिये हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का हर क़ौल (कथन) ''वही'' है चाहे वह आयाते क़ुरआनी हों या अहादीसे शरीफ़ा जिन की सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरफ़ सही हो।

इसी लिये उलमाए हदीस ने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से मुतअल्लिक़ ''वही'' की दो क़िस्में बयान की हैं। एक वहीए मत्लू दूसरी वहीए ग़ैर मत्लू। वहीए मत्लू में जो अलफ़ाज़ अल्लाह तआला की तरफ़ से मालूम कराये जाते हैं उनकी पाबंदी और हिफ़ाज़त की जाती है उसको अल्लाह का कलाम या आयाते क़ुरआनी कहा जाता है। वहीए ग़ैर मत्लू में ऐसी पाबन्दी नहीं होती बल्कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० मन्शाए इलाही (ईश्वरीय उद्देश) की तौज़ीह (स्पष्टीकरण) अपने अलफ़ाज़ में बयान करते हैं। गोया अहादीसे शरीफ़ा आयाते क़ुरआनी की सही तफ़सीर और क़ुरआनी क़ानून की तकमील में मदद् करती हैं।

इस गुफ़्तगू का नतीजा यह हुआ कि जब आप सल्ला० साहबे *वही* हैं और आप सल्ला० का हर क़ौल अल्लाह तआला की तालीम के तहत है तो साफ़ ज़ाहिर है कि हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० के तश्रीफ़ लाने के बारे में जो कुछ सही अहादीस मौजूद हैं वह सब अल्लाह तआला ही की जानिब से हैं।

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० की ज़रूरत और तश्रीफ़ लाने से मुतअल्लिक़ कइ तरीक़ों से अहम्मियत और तफ़सील के साथ ख़बरें दी हैं जो मुतवातिर की हैसियत रखती हैं।

हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने अहादीस में हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० से मुतअल्लिक़ जिस क़दर अलामतें और बशारतें फ़रमाइ हैं वह तमाम की तमाम आप पर यानि हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० पर पूरी पूरी साबित होती हैं। मगर हम यहाँ सिर्फ़ उन्ही अहादीस को सनद के साथ पेश करते हैं जिनसे हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का मक़ाम क्या है मालूम होता है।

पहले उस हदीस शरीफ़ को लीजिये जिसको *मिश्कात शरीफ़* में (पुस्तक २ हदीस नम्बर ५/६०२५), मुस्नद इमाम अहमद बिन हम्बल में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ी० से और *कंज़ुल उम्माल* में हज़रत अली कर्रमुल्लाहु वजहहु के हवाले से बयान किया गया है (जिसे ऊपर दर्ज किया जाचुका है)। इस हदीस शरीफ़ से साबित होता है कि इमाम महेदी मौऊद अले० उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को हलाकत से बचाने वाले हैं जिस तरह हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़ात उम्मत को हलाकत से बचाने वाली है।

दूसरे यह कि आपकी तश्रीफ़ आवरी (आगमन) का ज़माना भी ज़ाहिर हो रहा है कि आप उम्मत के दरमियानी हिस्से में पैदा होंगे। इसके अलावा हदीस की सही और मश्हूर किताब *इब्ने माजा* और हाकिम और अबू नुएम तीन किताबों में हज़रत सोबान रज़ी० के हवाले से सनद के साथ जो हदीस बयान की गइ है उसके आख़िरी अलफ़ाज़ यह हैं कि

''फिर अल्लाह का ख़लीफ़ा महेदी आयेगा पस जब तुम उस की ख़बर सुनो तो उसके पास जाओ और उस से बैअत करो अगरचे कि तुम्हें बर्फ़ पर से रेंगते हुवे जाना पड़े क्योंकि महेदी अल्लाह का ख़लीफ़ा है''।

इस हदीस से तीन बातें साबित हो रही हैं। एक यह कि इमाम महेदी अले० अल्लाह तआला के ख़लीफ़ा हैं, दूसरी यह कि इमाम महेदी अले० की बैअत फ़र्ज़ है, तीसरी यह सख़्त ताकीद कि उनके पास जाओ अगरचे कि तुम्हें बर्फ़ पर से रेंगते हुवे जाना पड़े, आख़िर में यह कि महेदी अल्लाह का ख़लीफ़ा है। हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के फ़रमान से हज़रत इमाम महेदी अले० का मक़ाम साबित हो रहा है।

इसके अलावा ऐसी कइ रिवायतें भी मिलती हैं जिनसे हज़रत इमाम महेदी अले० का माअ्सूम अनिल ख़ता (अचूक) होना साबित होता है। चुनांचे अकाबिर सल्फ़ुस् सालिहीन और उलमाए उसूल ने इस हदीस शरीफ़ से सुबूत दिया है कि

''हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि महेदी मेरी औलाद से होगा मेरे नक़्शे क़दम पर चलेगा ख़ता नहीं करेगा''।

शेख़ अकबर मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी रहे० ने *फ़ुतूहाते मक्किया* के बाब (३६६) में तहरीर फ़रमाया है कि

''रसूलुल्लाह सल्ला० ने किसी इमाम की निस्बत यह नहीं फ़रमाया कि वह मेरे बाद वारिस होगा और मेरे नक़्शे क़दम पर चलेगा और ख़ता नहीं करेगा ख़ास महेदी के बारे में फ़रमाया है''।

पस आँहज़रत सल्ला० ने महेदी अले० और अहकामे महेदी अले० की इस्मत (शुद्धता) के बारे में इस तरह शहादत दी है कि जिस तरह ख़ुद आँहज़रत सल्ला० की इस्मत पर दलीले अक़्ली शाहिद (गवाह) है। इसी तरह अल्लामा तहतावी ने अपनी किताब *हाशिया दुर्रल मुख़्तार* में तहरीर फ़र्माया है कि

''महेदी मुज्तहिद नहीं है क्योंकि मुज्तहिद के अहकाम क़ियासी (काल्पनिक) होते हैं और महेदी के लिये क़ियास हराम है, इसलिये कि

मुज्तहिद ख़ता करता है और महेदी अले० से हरगिज़ ख़ता नहीं होती क्योंकि वह अपने अहकाम में माअसूम है, जिसकी शहादत रसूलुल्लाह सल्ला० ने भी दी है और आँहज़रत सल्ला० की यह शहादत (गवाही) इस अम्र पर है कि अम्बिया और ख़ुलफ़ाए इलाही के लिये इज्तिहाद जाइज़ नहीं है''।

इसी तरह इमाम अब्दुल वहाब शाअरानी ने भी हज़रत महेदी अले० को माअसूम अनिल ख़ता साबित किया है चुनांचे उनके अलफ़ाज़ यह हैं।

''महेदी अले० के ज़माने में उनसे पहले के सारे मज़ाहेब की तक़लीद बिलअमल बातिल होजायेगी जैसा कि अरबाबे कश्फ़ ने उसकी तश्रीह करदी है, और महेदी अले० ऐसे अहकाम बयान करेंगे जो शरीअते मुहम्मद सल्ला० के बिलकुल मुताबिक़ होंगे इस तरह कि अगर रसूलुल्लाह सल्ला० भी मौजूद हैं तो महेदी अले० के तमाम अहकाम का इक़रार करेंगे, जैसा कि इस बात का इशारा ज़िक्रे महेदी की हदीस में पाया जाता है कि वह मेरे नक़्शे क़दम पर चलेगा ख़ता नहीं करेगा''। इस तफ़सील का ख़ुलासा यह है कि

१) हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० ने जिस क़दर अहकामे विलायत को फ़र्ज़ फ़र्माया है वह क़ुरआन मजीद और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल से साबित हैं इस लिये यह तमाम अहकाम फ़र्ज़ और बहैसियत फ़र्ज़े शरई हैं।

२) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की हर वह हदीस जो बराबर सनद के साथ आप तक पहुंचे उन तमाम अहादीस की बुनियाद अल्लाह तआला की तालीम पर है।

३) वह तमाम सहीह हदीसें जो हज़रत इमाम महेदी अले० से मुतअल्लिक़ हैं हज़रत इमामुना सय्यद मुहम्मद महेदी अले० पर पूरी साबित हैं। मुस्तन्द अहादीस से साबित है कि

४) हज़रत इमामुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को हलाकत से बचाने वाले हैं।

५) आप उम्मत के दरमियानी हिस्से में पैदा होंगे।

६) आप अल्लाह तआला के ख़लीफ़ा हैं।

७) आपकी बैअत फ़र्ज़ है।

८) आप हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की औलाद बीबी फ़ातिमतुज़् ज़हरा रज़ी० से हैं।

९) आप हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के नक़्शे क़दम पर चलने वाले हैं।

१०) आप से कभी ख़ता नहीं होगी।

११) आपकी ज़ात माअ्सूम (प्राकृतिक निष्पाप) है।

१२) आपकी ज़ात क़ुरआन मजीद (अल्लाह तआला) की मुराद बयान करने वाली है।

१३) जिस तरह अम्बिया अले० और ख़ुलफ़ाए इलाही के अहकाम अल्लाह की जानिब से फ़र्ज़ हैं उसी तरह हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० के अहकाम अल्लाह की जानिब से फ़र्ज़ हैं क्योंकि आप ख़लीफ़तुल्लाह हैं।

अल्लाह तआला और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इन तमाम फ़रामीन (आदेश) की रोशनी में हमको हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० का मक़ाम क्या है मालूम होगया। ऐसी सूरत में ज़ाहिर है कि जब आपने दुगाना शबे क़द्र को फ़र्ज़ फ़रमाया है तो यक़ीनन् और ईमानन् फ़र्ज़ है जिस से इनकार नही किया जासकता। क़ुरआन मजीद में शबे क़द्र का जो ज़िकर किया गया है और उसके लिये एक ख़ास सूरह नाज़िल किया गया है उसके माने (अर्थ) पर ग़ौर कीजिये। अल्लाह तआला सूरह क़द्र में फ़रमाता है कि

''हमने उसको लैलतुल् क़द्र में नाज़िल किया। तुम क्या समझते हो कि लैलतुल क़द्र क्या चीज़ है? लैलतुल क़द्र हज़ार महीनौं से बेहतर है। उसमें अपने रब के हुक्म से फ़रिश्ते और रुहुल क़ुद्स उतरते हैं। वह अम्न और सलामती की रात है और वह तुलूए फ़ज्र तक है''।

उलमाए उसूल (मूल सिद्धांत के विद्यावान्) की इस्तिलाह (परिभाषा) के मुताबिक़ यह सूरह लैलतुल् क़द्र की फ़ज़ीलत पर और उस रात की इबादत का उन आयतौं में बतौरे माना हुक्म है, यानि ख़ुदाए तआला का उस रात की फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) को जताना मानन् उस रात में इबादत का हुक्म देना है।

लैलतुल् क़द्र की फ़ज़ीलत और अहम्मिय्यत (महत्व) बताने और जताने के बावजूद उसका तऐयुन कि किस महीने में कौनसी रात है? क़ुरआन मजीद में नहीं है।

अहादीस शरीफ़ में भी वाज़ेह और क़तई तौर पर उसकी तारीख़ नहीं बताइ गई।

ग़र्ज़ क़ुरआन मजीद और अहादीस से लैलतुल् क़द्र का तऐयुन (निश्चय) वाज़ेह और यक़ीनी तौर पर न होने की वज्ह से सहाबा किराम रज़ी० से लेकर ताबईन, तबअ् ताबईन, अइम्मा, मुज्तहिदीन, मुफ़स्सिरीन और मुहद्दिसीन तक ने उस रात के तऐयुन में इख़्तिलाफ़ किया है।

चुनांचे बाज़ सहाबा कहते हैं कि यह रात साल में एक मरतबा आती है उसका कोइ महीना मुक़र्रर नहीं। बाज़ का क़ौल है कि रमज़ान के आख़िर हिस्से में यह रात आती है मगर तारीख़ मुक़र्रर नहीं। बाज़ का क़ौल है कि सत्ताईसवीं रात है और अकसर हनफ़िया का यही ख़याल है। मगर इन सब रिवायतौं में किसी से यह यक़ीन हासिल नहीं होता कि हक़ीक़त में फ़लाँ तारीख़ और फ़लाँ रात ही लैलतुल क़द्र है।

ख़ुलासा यह कि इस इख़्तिलाफ़ के कारण किसी राय पर यक़ीन नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह सब अक़वाल क़ियासी (अनुमित) हैं जो मुफ़ीदे ज़न् हो सकते हैं मगर मूजिबे यक़ीन नहीं हो सकते। अहले सुन्नत के एतिक़ाद में सब ग़ैर माअ्सूम भी हैं जिन से ख़ता का इम्कान भी है।

महेदवियौं के लिये लैलतुल क़द्र के तऐयुन का यह इख़्तिलाफ़ और शक यक़ीने कामिल से इस तरह बदल गया कि हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० को अल्लाह तआला से यह मालूम कराया गया कि ''लैलतुल क़द्र रमज़ान की सत्ताईसवीं रात ही है'' और यह हुक्म हुआ कि अल्लाह तआला के इस फ़ज़्लो एहसान के शुक्रिये में जो तऐयुने लैलतुल् क़द्र का यक़ीनी इल्म अता किया गया है ''दो रकात नमाज़ अदा की जाये''।

जिस नमाज़ के अदा करने का हुक्म ख़ुद अल्लाह तआला दे तो ऐसी नमाज़ फ़र्ज़ नहीं तो और क्या हो सकती है? हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० ने अल्लाह तआला के इस हुक्म की ताअ्मील में रसूलुल्लाह सल्ला० की सुन्नत को ताज़ा किया और अहलो अयाल को और दायरे के लोगौं को जमा करके दो रकात नमाज़ शुक्राना जमाअत के साथ अदा की। चूंकि ख़ुदाए तआला के हुक्म से आप ने यह दो रकात नमाज़ अदा की है इसलिये यह दुगानए लैलतुल क़द्र फ़र्ज़ है और हज़रत इमामुना अले० ने उसको फ़र्ज़ फ़र्माया है।

रोज़ाना पाँचों वक़्त की नमाज़ौं पर ग़ौर कीजिये कि उन नमाज़ौं को किस किस ने अदा किया? किस वक़्त अदा किया? और किस सिलसिले में अदा किया?

हर नमाज़ एक नबी और पैग़म्बर की नमाज़ है जो अल्लाह तआला के फ़ज़्लो एहसान की शुक्र गुज़ारी में शुक्राना के तौर पर अदा की गइ है।

चुनांचे फ़ज्र की नमाज़ हज़रत आदम अले० ने अल्लाह तआला के फ़ज़्लो एहसान की शुक्र गुज़ारी में अदा की है।

हज़रत इब्राहीम अले० को जब नमरुद ने दहकती आग में डाला तो अल्लाह तआला ने उनको जलने से महफ़ूज़ रखकर नजात अता फ़र्माइ। अल्लाह तआला के इस फ़ज्लो एहसान की शुक्र गुज़ारी में चार रकात नमाज़ शुक्राना अदा की जो ज़ुहर का वक़्त था।

हज़रत याक़ूब अले० को बड़ी मुद्दत जुदाइ के बाद जब हज़रत जिब्राईल अले० ने उन्हें अपने अज़ीज़ फ़र्ज़ंद हज़रत यूसुफ़ अले० की इत्तिलाअ (सूचना) और बशारत दी तो अल्लाह तआला के इस फ़ज़्लो एहसान की शुक्र गुज़ारी में चार रकात नमाज़ शुक्राना अदा की जो असर का वक़्त था।

हज़रत दाऊद अले० की जब अल्लाह तआला ने तौबा क़ुबूल फ़रमाइ तो रब्बुल इज़्ज़त के उस फ़ज़्लो इक्राम की शुक्र गुज़ारी में तीन रकात नमाज़े शुक्राना अदा की जो मग़रिब का वक़्त था।

इज़रत यूनुस अले० ने अल्लाह तआला के फ़ज़्लो एहसान की वज्ह से जब मछली के पेट की क़ैद से रिहाइ पाइ तो उसकी शुक्र गुज़ारी में चार रकात नमाज़े शुक्राना अदा की जो इशा का वक़्त था।

नमाज़ौं की इस हक़ीक़त और कैफ़ियत को नसारा के सवाल के जवाब में सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने बयान फ़रमाया है।

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की इस हदीस शरीफ़ को हज़रत क़ुत्बुल आरिफ़ीन महबूबे सुब्हानी शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी क़द्दसल्लाह सिर्रहुल अज़ीज़ ने अपनी किताब *ग़ुनियतुत् तालिबीन* में भी बाब सलात में तहरीर फ़रमाया है।

इस हदीस शरीफ़ से साबित होता है कि पाँच वक़्त की नमाज़ें जो हम पढ़ते हैं वह सब की सब किसी न किसी नबी अल्लाह और ख़लीफ़तुल्लाह की अल्लाह तआला के फ़ज़्लो इक्राम और एहसान की शुक्र गुज़ारी में अदा की हुइ नमाज़ें हैं जो उम्मते मुहम्मदी सल्ला० पर फ़र्ज़ की गईं हैं।

इसी तरह हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० भी अल्लाह तआला के ख़लीफ़ा हैं और अम्बिया अले० के तमाम सिफ़ात के हामिल हैं। आप पर भी लैलतुल क़द्र का यक़ीनी इल्म अता फ़रमाकर अल्लाह तआला ने जो फ़ज़्लो एहसान फ़रमाया है उसकी शुक्र गुज़ारी में अल्लाह तआला ही के हुक्म से दो रकात नमाज़ दुगाना शुक्राना लैलतुल् क़द्र अदा की गइ और फ़र्ज़ की गइ जो यक़ीनन् और ईमानन् फ़र्ज़ है।

अलहम्दु लिल्लाह कि महेदवी यक़ीने कामिल के साथ शबे क़द्र में उस ख़ासुल ख़ास वक़्त में अल्लाह तआला के हुक्म और रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल के इत्तिबाअ् में सत्ताईसवीं रमज़ान की रात में इशा की नमाज़ और दो रकात दुगाना शबे क़द्र फ़र्ज़ की निय्यत से अदा करते हैं जो क़ुरआन और हदीस के अहकाम के तहत बिलकुल हक़ है।

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِیَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : क्या हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ़्र है?

जवाब : हमने इसी किताब के पिछले सफ़हात पर नक़्ले मुतवातिर और हदीसे मुतवातिर और अहकामे मुतवातिर को तफ़सील से समझा दिया है कि

''वह हदीस जो मुतवातिर नक़्ल की जा रही हो और मुतवातिर (निरंतर) बयान की जारही हो जिस से क़तई तौर पर साबित होता हो कि हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का इरशाद है तो वुजूबे अमल के एतिबार से उसमें और क़ुरआन मजीद की आयत में कोइ फ़र्क़ नहीं होगा, क्योंकि क़ुरआन मजीद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के तअल्लुक़ से गवाही दे रहा है कि وَمَا يَنۡطِقُ عَنِ الۡهَوٰی اِنۡ هُوَ اِلَّا وَحۡیٌ يُّوۡحٰی (سورہ نجم) यानि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० जो कुछ फ़रमाते हैं अपनी तरफ़ से नहीं फ़रमाते बल्कि बेशक वही फ़र्माते हैं जो उनको ''वही'' की जाती है''।

क़ुरआने मजीद की इस गवाही की बुनियाद पर हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का हर क़ौल ''वही'' है ख़्वाह वह आयाते क़ुरआनी हों या अहादीसे शरीफ़ा, जिसकी सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरफ़ सही हो।

क़ुरआने मजीद की आयाते शरीफ़ा और अहादीसे शरीफ़ा के फ़र्क़ को भी तफ़सील के साथ गुज़िश्ता सफ़हात पर बयान करदिया गया है।

ऐसी सूरत में ज़ाहिर है कि ऐसी अहादीस जिनकी सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरफ़ सही है और जो तवातुर के दर्जे को पहुंच गइ हो उनका इन्कार कुफ़्र नहीं तो और क्या होसकता है? जो हदीस तवातुर से

साबित हो उसका इन्कार इस लिये कुफ्र है कि बग़ैर किसी शुब्ह के आँहज़रत सल्ला० का फ़रमान यक़ीनी होता है क्योंकि रावियौं की कसरत की वज्ह से शुब्ह और गुमान बाक़ी नहीं रहता और यक़ीने कामिल हासिल होजाता है। पस मोमिन के दिल में इसकी गुंजाइश नहीं रहती कि उस हदीस का आँहज़रत सल्ला० से सादिर होने के बारे में इन्कार या शक करे।

हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० से मुतअल्लिक़ जितनी कसरत से अहादीस हैं उतनी कसरत से किसी दूसरे मसाइल के बारे में नहीं मिलेंगी। उन तमाम अहादीस में से कइ अहादीस हमने इसी किताब के मुख़्तलिफ़ मक़ामात पर सनद और हवालेजात के साथ ज़रुरत के मुताबिक़ लिख दी है।

अब हम उलमाए हदीस, उलमाए उसूल और मुहद्दिसीन की किताबौं के हवाले और इक़्तिबासात (उद्धरण) से यह साबित करेंगे कि हज़रत इमामुना सय्यदुना महेदी मौऊद अले० से संबंधित जिस क़दर अहादीसे सहीहा हैं वह तमाम नक़्ले मुतवातिर के दर्जे में दाख़िल होगइ हैं जिस से हरगिज़ इन्कार नहीं किया जासकता, अगर इन्कार किया जाये तो यक़ीनन् कुफ्र हो जायेगा।

उलमाए हदीस और उलमाए उसूल ने जब हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० के बारे में अहादीस की इतनी कसरत (अधिकता) देखी और सब हदीसौं को हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० की बेअ्सत (पैदा होने) के बारे में मुत्तफ़िक़ (सहमत) पाया तो उन्होंने महेदियत के मसअले को तवातुरे माना के दर्जे में दाख़िल करलिया।

चुनांचे अल्लामा क़ाज़ी मुन्तजिबुद्दीन जुनेरी रहे० ने *मख़्ज़नुद् दलाइल* में लिखा है कि ‘‘बहर हाल सलफ़ (पूर्वजौं) ने जो इख़्तियार किया और महेदी अले० के बारे में जो इत्तिफ़ाक़ किया है वह *क़ुर्तुबी* में ज़िकर करदिया गया है’’।

''महेदी अले० के बारे में जो हदीसें हैं अपने रावियौं की कसरत के कारण तवातुर (निरंतरता) के दर्जे को पुहंच गइ है'' (क़र्तुबी)।

इसके अलावा शेख़ इब्ने हजर हैतमी ने *अल क़ौलुल् मुख़्तसर* में लिखा है कि

''बाज़ हुफ़्फ़ाज़ अइम्मए हदीस ने फ़रमाया है कि महेदी का आले रसूल सल्ला० से होना हज़रत रसूल अले० से तवातुर के साथ रिवायत की गइ है''।

बहरुल उलूम अब्दुल अली मलिकुल उलमा ने *अश्रातुस् साअत* में लिखा है कि

''महेदी की बेअ्सत पर दलालत करने वाली हदीसें इतनी कसीर हैं कि तवातुरे माना की हद को पहुंच गइ हैं''।

शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी ने *लमआत शर्ह मिश्कात* के ''बाबुस साअत'' में लिखा है कि ''महेदी अले० के बारे में मुतवातिरुल माना कसीर अहादीस वारिद हैं''। और यह भी लिखते हैं कि

''महेदी अले० अहले बैते रसूल अले० औलादे फ़ातिमा से होने की अहादीस तवातुरे माना की हद तक पहुंच गइ हैं''।

उलमाए हदीस और उलमाए उसूल के ऐसे बहुत सारे अक़्वाल हैं जिनसे साबित होता है कि हज़रत महेदी अले० की बेअ्सत की अहादीस तवातुरे माना होने पर जम्हूर का इत्तिफ़ाक़ है क्यों कि सब अहादीस हज़रत महेदी अले० के आने के बारे में एक ज़बान हैं। उलमाए हदीस, उलमाए उसूल और अइम्मए हदीस का यह क़तई फ़ैसला है कि

हदीस मुतवातिरुल माना का इन्कार कुफ़्र है।

चुनांचे उसूले फ़िक़्ह की मोतबर किताब *उसूलुश शाशी* में लिखा है कि ''हदीसे मुतवातिर से इल्मे क़तई वाजिब होता है और उसका इन्कार कुफ़्र है''।

इसी तरह सैंकड़ों हवाले जात मौजूद हैं मगर हमने मुख़्तसर उलमाए हदीस और अइम्मए हदीस की किताबों से सनद के साथ यह बात साबित करदी कि हज़रत महेदी अले० के तअल्लुक़ से जिस क़दर अहादीस हैं वह नक़्ले मुतवातिर में दाख़िल हैं जिस से हरगिज़ इन्कार नहीं किया जा सकता।

जिस तरह क़ियामत वग़ैरह की पेशीन गोइ पर एतिक़ाद और ईमान लाज़िम है और उसका इन्कार कुफ़्र है उसी तरह हज़रत महेदी अले० पर एतिक़ाद और ईमान लाना लाज़िम है और इन्कार कुफ़्र है।

एक मिसाल पर ग़ौर कीजिये कि

अल्लाह तआला ने कितने पैग़म्बर दुनिया में रवाना फ़रमाये?

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की हदीस है कि एक लाख चौबीस हज़ार पैग़म्बर अल्लाह तआला ने रवाना फ़रमाये और तमाम उलमाए हदीस और अइम्मए हदीस उस हदीस शरीफ़ को सही मानते और इत्तिफ़ाक़ करते हैं कि कमो बेश एक लाख चौबीस हज़ार पैग़म्बर आये।

क्या क़ुरआन मजीद में पैग़म्बरौं की तादाद से मुतअल्लिक़ कोइ ज़िकर है? क़ुरआन मजीद में पैग़म्बरौं की उतनी तादाद का कोइ ज़िकर नहीं है अलबत्ता अम्बिया, मुर्सल और नबी अल्लाह सब मिलाकर सिर्फ़ (२८) पैग़म्बरौं का ज़िकर क़ुरआन मजीद में मिलता है मगर एक लाख चौबीस हज़ार पैग़म्बरौं के क़ुरआन मजीद में न तो नाम हैं और न उसकी तादाद का तज़्किरा है।

अगर एक मुसलमान जो हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० का कलिमा पढ़ता है, अल्लाह की तौहीद का इक़रार और रिसालत की गवाही देता है, तमाम किताबों पर ईमान रखता है, नमाज़ पढ़ता है, रोज़ा रखता है, हज करता है, ज़कात देता है, ग़र्ज़ बुहत नेक सालेह, आबिद परहेज़गार सब कुछ है मगर पैग़म्बरों की इतनी बड़ी तादाद में सिर्फ़ एक पैग़म्बर का इन्कार करता है तो क्या उसका यह इन्कार कुफ्र नहीं है?

बेशक कुफ्र है। ऐसे इन्कार करने वाले को शर्अ मुबीन काफ़िर कहती है। सिर्फ़ एक पैग़म्बर का ''वह भी जिसका ज़िकर क़ुरआन मजीद में नहीं है'' इन्कार करने से काफ़िर कैसे हो जाता है?

इसलिये कि उसने एक पैग़म्बर का इन्कार करके हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० को झुटलाया, अल्लाह तआला की ऐन तकज़ीब (खंडन) है, इसलिये ऐसा शख़्स ख़्वाह वह कैसा ही आबिद, सालेह और परहेज़गार हो काफ़िर है।

इसी तरह हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ्र है, क्योंकि उसने हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० से मुतअल्लिक़ हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की अहादीस का जो मुतवातिरुल माना का दर्जा रखती हैं इन्कार किया। इसी तरह एक और मिसाल पर ग़ौर की जिये कि

एक मुसलमान ईमान की तमाम बातौं में से अल्लाह की तौहीद पर, फ़रिश्तौं पर, किताबौं पर, रसूलौं पर, क़ियामत के दिन पर, तक़दीर पर, ख़ैरो शर अल्लाह की जानिब से है पर ईमान लाता है, सिर्फ़ एक बात कि ''मरने के बाद उठाये जाने पर'' ईमान नहीं लाता। क्या उसका सिर्फ़ एक बात से इन्कार करना कुफ्र नहीं है? सरासर कुफ्र है। हालांकि वह तमाम बातौं पर ईमान ला रहा है, नमाज़ का पाबंद है, रोज़ौं की पाबंदी करता है, हाजी है आबिद है, तहज्जुद गुज़ार है, सब कुछ है मगर उसकी यह सारी नेकियाँ और इबादतें बरबाद हैं क्योंकि उसने सिर्फ़ एक बात ''मरने के बाद उठाये जाने'' से इन्कार करके न सिर्फ़ हज़रत रसूलुल्लाह

सल्ला० के इरशाद को झुटलाया बल्कि अल्लाह् तआला की किताब (क़ुरआन मजीद) को झुटलाया, गोया अल्लाह् तआला की तकज़ीब की यक़ीनन् काफ़िर हो गया। इसी तरह क़ुरआन मजीद के एक लफ़्ज़ या एक हर्फ़ (अक्षर) का भी इन्कार कुफ़्र है अगरचे कि एक लफ़्ज़ (शब्द) के सिवाय सारी किताब को मानता हो और उस पर अमल करता हो।

इसी तरह हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० का इन्कार भी कुफ़्र है, अगरचे कि इन्कार करने वाला कैसा ही आबिद हो, सालेह हो, अल्लाह और रसूल सल्ला० को मान्ने का इक़रार करे उसके तमाम अमले सालेह, तमाम नेकियाँ, इबादतें, तहज्जुद गुज़ारियाँ सब बरबाद हो जाती हैं, क्योंकि उसने हज़रत इमामुना महेदी अले० का इन्कार करके हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की अहादीस का इन्कार किया जो मुतवातिरुल माना का दर्जा रखती हैं। गोया उसने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के फ़रमान का इन्कार किया। हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के फ़रमान का इन्कार अल्लाह् तआला के फ़रमान का इन्कार, अल्लाह् तआला के फ़रमान का इन्कार और अल्लाह् तआला की मुराद का इन्कार करने के बराबर है।

चुनांचे क़ुरआन मजीद में अल्लाह् तआला का साफ़ इरशाद है कि *हबितत् आमालुहुम* (आले इमरान २२) यानि उनके तमाम आमाल बरबाद होगये। आख़िर में सर्वरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़बाने पाक से सुन लीजिये। इरशाद होता है कि مَنْ اَنْكَرَ خُرُوجِ الْمَهْدِى فَقَدْ كَفَرْ بِمَااُنْزِلَ عَلٰى مُحَمَّدْ यानि फ़रमाया हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने कि ''जिस शख़्स ने ज़ुहूरे महेदी का इन्कार किया गोया कुफ़्र किया उस चीज़ के साथ जो मुहम्मद सल्ला० पर नाज़िल की गइ यानि (क़ुरआन मजीद)''।

इस हदीस से यह बात साबित हो रही है कि इमाम महेदी अले० का इन्कार, रसूलुल्लाह सल्ला० का इन्कार और क़ुरआन का इन्कार है।

इस हदीसे सही को इमाम अबू बक्र अस्काफ़ ने *फ़वाइदुल अख़्बार* में हज़रत जाबिर रज़ी० से रिवायत किया है। इसके अलावा इस हदीस को इमाम अबुल क़ासिम सुहेली ने अपनी किताब *शर्हुस् सियर* में भी लिखा है और इसी तरह *फ़स्लुल् ख़िताब* में भी लिखा है।

इस तफ़सील से साबित हुआ कि हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ़्र है। यहाँ यह सवाल पैदा किया जासकता है कि हक़ीक़त में हज़रत इमाम महेदी अले० के इन्कार से कुफ़्र हो जायेगा, क्योंकि अहादीसे मुतवातिरुल माना का इन्कार कुफ़्र है, मगर क्या हज़रत सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) का इन्कार कुफ़्र हो सकता है?

हुज़ूर सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० के बारे में जिस क़दर बशारात अलामात और सिफ़ात वग़ैरह की अहादीसे सहीहा बयान की गइ हैं वह सब हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) पर पूरी पूरी साबित होती हैं और सादिक़ आती (उचित) हैं।

जिन में से हम यहाँ मुख़्तसर तौर पर मुताबक़त करके पेश करते हैं। तफ़सील के साथ भी पेश किया जासकता है मगर यहाँ उसका मौक़ा नही है। हक़ (सत्य) की तलाश और जुस्तजू करने वाले के लिये तो एक ही बात काफ़ी है। मिसाल के तौर पर यह कि अगर किसी मकान पर आवाज़ दी जाये और मकान में कोइ मौजूद है तो उसके लिये एक ही आवाज़ काफ़ी है फ़ौरन् जवाब मिल जायेगा। अगर मकान ख़ाली पड़ा है तो उस मकान पर एक आवाज़ तो क्या सैंकड़ों आवाज़ें दीजायें फिर भी कोइ जवाब नहीं मिलेगा।

बिल्कुल उसी तरह क़ल्ब के मकान में अगर हक़ की तलाश वाला कोइ है तो उसके लिये एक ही बात और एक ही सुबूत काफ़ी है, फ़ौरन्

ईमान लायेगा। अगर क़ल्ब का मकान ख़ाली पड़ा है तो उसके सामने सैंकड़ों सुबूत पेश किये जायें तब भी उस पर कोइ असर नहीं होगा।

चुनांचे हुज़ूरे अकरम हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की एक ही बात हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० के लिये काफ़ी होगई और *सद्दक़ता या रसूलुल्लाह* का नाअरा लगदिया और हुज़ूरे अकरम सल्ला० के अख़लाक़, सदाक़त (सत्यता), शफ़क़त (कृपा), रहमत और सैंकड़ों मोजिज़ात और कलामे रब्बानी के बावजूद अबू जहेल पर कोइ असर तक नहीं हुआ।

ग़र्ज़ अब हम अहादीसे सहीहा को मुताबक़त के साथ पेश करते हैं।

१) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी फ़ातिमतुज़् ज़हरा रज़ी० की औलाद से होगा''।

यह हदीस तिर्मिज़ी में हज़रत इब्ने मसऊद रज़ी० से, फ़वाइद हाफ़िज़ अबू नुऐम में हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० से, अबू नुऐम ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ी० से, सुनन् अबू दाऊद में उम्मुल मोमिनीन उम्मे सल्मा रज़ी० से रिवायत की गइ है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) हज़रता फ़ातिमतुज़् ज़हरा रज़ी० के फ़रज़ंद हज़रत इमाम हुसेन रज़ी० की औलाद से हैं।

२) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने हज़रत बीबी फ़ातिमा रज़ी० से फ़रमाया कि ''ऐ फ़ातिमा क़सम है उस ज़ात की जिसने मुझे नबीए बर हक़ (सत्य) बनाकर भेजा है कि इन दोनों यानि हसन रज़ी० और हुसेन रज़ी० की औलाद में से ही इस उम्मत का महेदी पैदा होगा'' - अंत तक।

इस हदीस को हाफ़िज़ अबू नुएम असफ़हानी ने हज़रत अली बिन हुज़ेल रज़ी० के हवाले से सिफ़ते महेदी के बाब में लिखा है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) की वालिदा माजिदा बीबी आमेना हज़रत हसन रज़ी० की औलाद से हैं और आपके वालिदे बुज़र्गवार हज़रत सय्यद अब्दुल्लाह रहे० हज़रत इमाम हुसेन रज़ी० की औलद से हैं।

३) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी का नाम मेरे हमनाम होगा और उसके माँ बाप के नाम मेरे माँ बाप के हमनाम होंगे''।

यह हदीस सुनन् अबू दाऊद, तब्रानी और सुनन् इब्ने अबी शैबा में हज़रत इब्ने मसऊद रज़ी० की रिवायत से बयान की गइ है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुना महेदी मौऊद अले० का नाम ''मुहम्मद'' है और आपके वालिद बुज़र्गवार का नाम ''सय्यद अब्दुल्लाह'' और वालिदा माजिदा का नाम ''बीबी आमेना'' है।

४) हज़रत इब्ने उमर रज़ी० से रिवायत है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''क़ियामत उस वक़्त तक क़ायम न होगी जब तक कि एक शख़्स मेरी औलाद से न निकले जो मेरा हम नाम होगा और मेरा हम कुनियत होगा''।

इस हदीस से हुज़ूर इमामुना सय्यदुना महेदी मौऊद अले० की पैदाइश की ज़रुरत, अहम्मिय्यत और क़तईयत साबित होती है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की औलाद से हैं और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के हम नाम (आपका नाम मुहम्मद है) हैं और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के हम कुनियत हैं यानि आपकी कुनियत अबुल क़ासिम है।[२]

(२) जोनपूरनामा लेखक ख़ैरुद्दीन मुहम्मद अलाहाबादी के बाब पंजुम में और तुहफ़तुल किराम पुस्त-२ सफ़्हा-२२ लेखक अली शेर क़ानेअ ने हुज़ूर के इस नाम, वलदियत और नसब से मुतअल्लिक़ यही लिखा है।

५) हज़रत अली कर्रमुल्लाहु वज्हहु ने आँहज़रत सल्ला० से पूछा कि ''महेदी हम में से हैं या हमारे ग़ैर से?'' तो हुज़ूर रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''हम में से हैं, अल्लाह तआला उन से दीन को ख़त्म करेगा जैसा कि हम से उसकी इब्तदा की है''।

यह हदीस नईम बिन हम्माद, अबू नुएम और तब्रानी ने मुत्तफ़क़ा तौर पर हज़रत अली रज़ी० की रिवायत से बयान की है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) मुहम्मद सल्ला० की आल से हैं और आपने इल्मुल एहसान से संबंधित अहकामे विलायत और बयाने क़ुरआन से क़ुरआनी अहकाम की तब्लीग़ और दाअवत फ़रमाकर अहकामे दीन की तकमील (पूर्ति) फ़रमाइ।

६) हज़रत अबी वाइल रज़ी० से रिवायत है कि हज़रत अली कर्रमुल्लाहु वज्हहु ने हज़रत हुसेन रज़ी० की तरफ़ देखकर फ़रमाया कि मेरा यह लड़का सय्यद है, चुनांचे रसूलुल्लाह सल्ला० ने यही नाम रखा है, तुम्हारे नबी सल्ला० का हमनाम शख़्स इस से पैदा होगा''।

उस वक़्त में जब कि लोग दीन से ग़ाफ़िल हो जायेंगे उसके पेशे नज़र हक़ और जूद (दानशीलता) होगा। अहले आसमान उस शख़्स के पैदा होने से ख़ुश हैं। यह शख़्स रोशन पेशानी वाला, सीधी नाक वाला, बड़ी पीठ वाला, पतली रानौं वाला, उसके दांतौं में फ़स्ल होगा, ज़मीन को अदलो इन्साफ़ से भरदेगा जिस तरह कि वह ज़ुल्मो जोर से भरी हुइ थी।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदुन सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) हज़रत इमाम हुसेन रज़ी० की औलाद से हैं।

आपकी पैदाहश के ज़माने में मुसलमान किस क़दर दीन से ग़ाफ़िल होगये थे और कैसी अबतरी फैली हुइ थी तारीख़ (इतिहास) के जान्ने वाले

लोगौं से पोशीदा नहीं है चुनांचे उस ज़माने की तारीख़ी किताबें मसलन् तारीख़े फ़रिश्ता, आईने अकबरी, मुन्तख़बुत् तवारीख़, तब्क़ाते अकबरी और नजातुर रशीद वग़ैरह से अब भी उस ज़माने का हाल मालूम किया जा सकता है।

यहाँ अबुल कलाम आज़ाद ही से सुनिये कि सरसरी अन्दाज़े के लिये यही काफ़ी है।

''नौव्वी सदी का वह ज़माना जो अकबर से पहले गुज़रा हिन्दूस्तान में सख़्त बद अमनी (अशांति) और तवाइफ़ुल मुलूकी (निराज) का ज़माना था। रोज़ रोज़ बादशाहतें बन्ती और बिगड़ती थी और कोइ मर्कज़ी हुकूमत बाक़ी नहीं रही थी जो शर्अ के इज्रा (संचालन) और क़ियाम की ज़िम्मेदार होती। उलमाए हक़्क़ानी बहोत ही कम थे और उलमाए दुनिया हर तरफ़ फैले हुए थे। दुनिया तलबी और मक्र (छल) और ज़ोर की गर्म बाज़ारी थी और सबसे ज़्यादा जाहिल सूफ़ियौं की बिदआत और मुन्करात ने एक आलम को गुमराह कर रखा था''। (तज़्किरा सफ़हा-२७)

मुस्लिम दुनिया ऐशो इश्रत (सुख चैन), ख़ाना जंगियौं (गृहयुद्ध) में मुब्तला थी। मर्कज़े इस्लामी यानि ख़िलाफ़ते इस्लामिया में इन्तेशार (अस्तव्यस्तता) अपने कमाल पर था। ख़िलाफ़त मग़्रिबी ताक़तौं की साज़िशौं का मर्कज़ बनी हुइ थी। मज़्हबी फ़िर्क़ा बंदी (साम्प्रदायिकता) और राजनीतिक दल एक दूसरे को कमज़ोर करने के लिये पश्चिमी शासनौं से साज़िश (सांठ गांठ) कर रही थी। इस हंगामा आराई के अलावा सबसे ज़्यादा ख़तरनाक सूरतेहाल यह पैदा होगइ थी कि मुसलमान को इस्लाम से बेगाना (अपरिचित) बनाने और उससे रुहे जिहाद सल्ब करने के लिये मज़्हबी पेश्वा, सियासत दाँ और बर्सरे इक़्तिदार (शासक) उनका आलए कार बने हुए थे। मुल्ला, पीर, फ़क़ीर और मशायख़ीन की एक कसीर जमाअत मुस्लिम अवाम को बहकाने और भटकाने पर मामूर (नियूक्त) थी।

मुसलमान औहाम प्रस्ती, पीर प्रस्ती, क़बर प्रस्ती और वतन प्रस्ती में मुब्तला होचुका था। मुसलमान से इस्लामी रूह और इस्लामी उत्साह खींचली गइ थी। ''फ़िरासते मोमिन (ज़हानत)'' का तसव्वुर भी बाक़ी नहीं था।

ग़र्ज़ उस ज़माने की तमाम तवारीख़ इस बात की साफ़ गवाही देरही हैं कि नौवीं सदी हिज्री में उलमा, फ़ुज़ला और मशायख़ीन तक दीन से ग़ाफ़िल होगये थे तो आम मुसलमानौं का सवाल ही क्या। ऐसे वक़्त जब कि उम्मते मुहम्मदी सल्ला० हलाकत की तरफ़ जा रही हो, एक हादीए बरहक़ ख़लीफ़तुल्लाह के पैदा होने की क्या ज़रुरत नहीं थी ताकि उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को हलाकत से बचाये।

यक़ीनन् ज़माना और वक़्त का तक़ाज़ा और शदीद तक़ाज़ा था कि कोइ हादीए बर हक़ आये और उम्मते मुहम्मदी सल्ला० की कश्ती को डूब्ने से बचाये। ऐसे ही वक़्त के लिये हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० वे फ़रमाया था कि

''मेरी उम्मत कैसे हलाक होगी जबकि मैं उसके अव्वल हिस्से में हूँ और ईसा इब्ने मर्यम उसके आख़िर हिस्से में और महेदी जो मेरी अहले बैत से है उसके दरमियानी हिस्से में है''।

इस हदीस को मिश्कात शरीफ़ और मुस्नद इमाम अहमद बिन हम्बल में हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास रज़ी० से और *कंज़ुल उम्माल* में हज़रत अली कर्रमुल्लाहु वज्हहु से बयान किया गया है।

चुनांचे अल्लाह तआला की रहमत को जोश आया और आपको उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को हलाकत से बचाने के लिये अपने वादे और मन्शा के तहत पैदा फ़र्माया और हदीस के मन्शा के तहत आप वस्ते उम्मत में पैदा हुए और उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को हक़ीक़ी दीन की तरफ़ बुलाकर सिराते मुस्तक़ीम दिखाइ और हलाकत से बचा लिया।

आपका हुलया मुबारक (शकल सूरत) वैसा ही था जैसा कि हदीस में बयान किया गया है चुनांचे सीरत (जीवनी) की तमाम किताबें इसकी शाहिद (गवाह) हैं।

७) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी काअ्बतुल्लाह में रुक्न और मक़ाम के दरमियान लोगौं से बैअत लेंगे''।

इस हदीस को नईम बिन हम्माद ने हज़रत क़तादा रज़ी० की रिवायत से बयान किया है। चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) ९०१ हिज्री में जब हज को तश्रीफ़ लेगये तो रुक्न और मक़ाम के दरमियान खड़े होकर पहली मरतबा तमाम दुनिया के मुसलमानौं के सामने ख़ुदा के हुक्म से अपने महेदी मौऊद होने का दाअ्वा फ़रमाया। उस दाअवते महेदियत को लोगौं ने क़ुबूल किया और आपके हाथ पर बैअत की।

८) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी अले० वस्ते उम्मत (मध्य) में होंगे और ईसा अले० आख़िरे उम्मत (अंत) में होंगे''।

यह हदीस मिश्कात शरीफ़ और ज़रीन और मुस्नदे इमाम अहमद बिन हम्बल में बयान की गइ है। चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) का ज़ुहूर हज़रत ईसा अले० से पहले वस्ते उम्मत में हुआ। चुनांचे तमाम उम्मते मुहम्मदीया सल्ला० पर आपने अपने दाअवए महेदियत का अलानिया इज़्हार फ़रमाया और उस ज़माने के तमाम सलातीन और बादशाहौं के नाम दाअवत नामे रवाना फ़रमाये कि

अगर मैं दाअवए महेदियत में सच्चा साबित न हो सकूं तो तुम पर मेरा क़त्ल वाजिब है, पस उलमा को चाहिये कि मेरी तहक़ीक़ करें।

और यह भी लिखा कि ''मेरी महेदियत की सच्ची दलील यही है कि मैं अल्लाह तआला की किताब और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का पूरा पूरा

ताबे हूँ, मैंने नबूवत का दाअ्वा नहीं किया है और कोइ जदीद शर्अ नहीं लाया हूँ और अहकामे विलायते मुहम्मदिया का जो इल्मुल एहसान के अहकाम हैं मुस्तक़िल दाइ (स्थायी निमंत्रण कर्ता) हूँ, कोइ एहतियाज (आवश्यकता) नहीं रखता हूँ, साहबे अक़्लो शुऊर (बुद्धि रखने वाला) हूँ।

९) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी ज़मीन को अदलो इन्साफ़ से भरदेगा जिस तरह कि वह ज़ुल्म से भरी हुइ थी''।

यह हदीस सुनन् इब्ने अबी शीबा में, तब्रानी ने अफ़राद में, और अबू नुएम और हाकिम ने अपनी किताबौं में हज़रत इब्ने मसऊद रज़ी० की रिवायत से बयान की हैं।

चुनांचे जिन लोगौं को हक़ की तलब थी उन्होंने हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) की तस्दीक़ की और ईमान लाये।

पस ''ज़मीन को अदलो इन्साफ़ से भरदेगा'' का यह मत्लब नहीं कि सारी दुनिया में अदलो इन्साफ़ फ़ैल जायेगा और दुनिया के तमाम इन्सान ईमान लायेंगे। क्योंकि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के ज़माने से अबतक सारे अफ़रादे इन्सानी न ईमान लाये और न आयन्दा लायेंगे।

चुनांचे हज़रत रसूलुल्लाह सलला० ने जब यह कोशिश की कि अबू तालिब ईमान लालें तो उन्होंने क़ुबूल नहीं किया तो आँहज़रत सल्ला० को सख़्त रंज हुआ। अल्लाह जल्ल शानहु ने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तस्कीन (ढारस) की ख़ातिर यह आयत नाज़िल फ़र्माइ कि اِنَّکَ لاَ تَهْدِیْ مَنْ اَحْبَبْتَ٥ (القصص ٥٦) यानि ऐ मुहम्मद सल्ला० तुम जिस से मुहब्बत रखते हो उसको राह पर लाना तुम्हारा काम नहीं है बल्कि यह हमारा काम है, पस हम जिसको हिदायत देना चाहते हैं हिदायत देते हैं।

ग़र्ज़ अम्बिया अले० और हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० का यह मन्सब (पद) है कि ''ख़ुदा की राह बतादें'' और यह मन्सब नहीं है कि लोगौं

को हिदायत पर लायें क्योंकि यह काम अल्लाह तआला का है जो फ़रमाता है (يُضِلُّ مَنْ يَّشَاءُ وَيَهْدِىْ مَنْ يَّشَاءَ(سورہ فاطر ٨ यानि (अल्लाह तआला) जिसको चाहता है गुमराह करता है और जिसको चाहता है हिदायत करता है (सूरह फ़ातिर-८)

ग़र्ज़ जो लोग हदीस يَمْلَأُ الْاَرْضَ الخ *यम्लउल् अर्ज़* (ज़मीन को अदलो इन्साफ़ से भरदेगा) के नज़र करते यह कहते हैं कि हज़रत इमाम महेदी अले० के ज़माने में सब ज़मीन पर अदलो इन्साफ़ (न्याय) फैल जायेगा और सब लोग मोमिन होजायेंगे, सरासर क़ुरआने हकीम के मन्शा (उद्देश) के ख़िलाफ़ है। ख़ुलासा यह कि हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) ने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की तरह बसीरत और हिदायत की तरफ़ लोगौं को बुलाया और दाअ्वत दी और अपने मोजिज़ात से भी अपनी दाअ्वत का सुबूत दिया।

वही लोग तस्दीक़े महेदियत से मुशर्रफ़ हुए और ईमान लाये जिनकी शान में अल्लाह तआला फ़र्माता है (هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ الَّذِيْنَ يُوْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ(البقرہ٢ (यानि (क़ुरआन मजीद) ख़ुदा से डरने वालौं के लिये हिदायत (अनुदेशा) है जो ग़ैब पर ईमान लाते है) और जो लोग इस सिफ़त से मौसूफ़ नहीं थे वह अलामतौं की बहसौं में उलझ कर रह गये।

हक़ (सत्य) तो यही है कि अलामात दर असल इशाराते ख़ुफ़िया (गुप्त संकेत) हैं उनके हक़ीक़ी माने हरगिज़ मुराद नहीं हैं। इसी ग़लती के कारण यहूद ने हज़रत ईसा अले० का इन्कार किया और नसारा और यहूद ने हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० का इन्कार किया।

१०) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''महेदी की पहचान यह है कि वह हामिलौं (धनी) के साथ सख़्त और मिस्कीनौं के साथ मेहरबान होगा''।

इस हदीस को हाफ़िज अबू अब्दुल्लाह नईम बिन हम्माद ने हज़रत ताऊस रज़ी० के हवाले से *किताबुल फ़ितन्* में लिखा है।

चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) उसी तरह दुनियादारौं के साथ इतने सख़्त थे कि वह उनके साथ हैबत की वज्ह से मानूस ही नहीं होसकते थे, लेकिन फ़ुक़रा और मसाकीन आप से ऐसे ही मानूस थे जैसे भाइ भाइ से या बेटा बाप से मानूस (आकृष्ट) होता है।

११) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अता से रिवायत है कि वह कहते हैं कि मैं ने अबू जाफ़र मुहम्मद बिन अली रज़ी० से दरयाफ़्त किया कि जब इमाम महेदी का ज़ुहूर होगा तो वह किस सीरत पर चलेंगे तो उन्होंने कहा कि

''वह अपने पहले की नासज़ावार (अनुचित) बातौं की बुन्यादौं को ढादेंगे जैसा कि रसूलुल्लाह सल्ला० ने किया था और इस्लाम को नए सिरे से क़ायम करेंगे''। यह रिवायत हदीस की किताब *इक़्दुद् दुरर्* में बयान की गइ है। चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) ने दीन में जिस क़दर बिदअतें, रुसूमात, मुन्करात और अनुचित बातें शामिल करदी गइ थी उनको मिटाया और मुज्तहिदीन की वह तमाम ग़लतियाँ जो आमाल और अक़ाइद में वाक़े हुइ थीं उन सब को दूर फ़रमाया। उम्मते मुहम्मदी सल्ला० को किताबुल्लाह और सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ला० की इताअत की तरफ़ बुलाया। इस रिवायत पर आँहज़रत सल्ला० का इरशाद भी दलील है कि

''वह आख़िर ज़माने में दीन को उसी तरह क़ायम करेंगे जिस तरह कि अव्वल ज़माने में मैं ने उसको क़ायम किया है''।

हदीस की किताब *इक़्दुद् दुरर्* में यह भी रिवायत बयान की गइ है। हज़रत अली कर्रमुल्लाहु वज्हहु ने फ़रमाया कि

''महेदी किसी बिदअत को बग़ैर मिटाये और किसी सुन्नत को बग़ैर क़ायम किये हुवे ना छोड़ेगा''।

चुनांचे आपका अमल और आपकी तालीमात इसकी गवाह हैं कि आपने हर बिदअत को मिटाया और हर सुन्नत को क़ायम फ़रमाया।

१२) किसी नबी की तस्दीक़ के लिये उसके नबूवत पर फ़ायज़ होने से पहले जिन सिफ़ाते आलिया की ज़रूरत है वह तमाम सिफ़ात आप में मौजूद थे, बच्पन में भी आप शरीअत के पाबंद थे।

१३) किसी नबी की सदाक़त के लिये नबूवत के इज़्हार के बाद उसमें दो चीजों का होना लाज़िमी बताया गया है एक यह कि अपनी नबूवत का दाअ्वा करे और दूसरे मुन्किरीन की तलब पर उस से मोजिज़ा सादिर हो।

चुनांचे यह दोनों बातें आप अले० में मौजूद थी। एक यह कि आपने महेदी मौऊद होने का दाअ्वा फ़रमाया दूसरे यह कि हस्बे तलब आपसे कइ मोजिज़े भी सादिर हुए।

१४) हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) के हालात और कैफ़ियात से साबित है कि नबूवत के सुबूत में जिन सिफ़ाते आलिया की ज़रुरत है वह तमाम सिफ़ात और कैफ़ियात आप अले० में मौजूद थीं।

चुनांचे उस ज़माने के तमाम मुअर्रिख़ीन (इतिहास लेखक) इस बात पर सहमत हैं। मुल्ला अब्दुल क़ादिर बदायूनी ने *नजातुर् रशीद* में हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) के बारे में उलमाए हिरात का यह क़ौल नक़ल किया है कि ''आप अले० की ज़ात अल्लाह की निशानियौं में से एक निशानी है''। इसी तरह ख़ैरुद्दीन मुहम्मद अलाहबादी ने *जोनपूर नामा* के पाँचवें बाब में ''ख़्वाजा सय्यद मुहम्मद'' के उन्वान के तहत लिखा है कि

''ख़्वाजा सय्यद मुहम्मद (महेदी अले०) अल्लाह की निशानियौं में से एक निशानी थे और रसूलुल्लाह सल्ला० के मोजिज़ौं में से एक मोजिज़ा है''।

१५) आपके अख़लाक़ और आपके सिफ़ात तमाम वही थे जो हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अख़लाक़ो सिफ़ात थे। इसका सुबूत न सिर्फ़ हमारी सीरत की किताबें देती हैं बल्कि दूसरौं की किताबें और तवारीख़ (इतिहास की पुस्तकें) भी इसकी गवाही देती हैं। चुनांचे शेख़ अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी लिखते हैं कि

''(हज़रत) सय्यद मुहम्मद जोनपूरी के एतिक़ाद में हर वह कमाल कि जो (हज़रत) रसूलुल्लाह सल्ला० रखते थे (वही कमाल) सय्यद मुहम्मद महेदी अले० में भी था। फ़र्क़ यही है कि वहाँ ज़ात से था और यहाँ इत्तिबा में, और रसूलुल्लाह सल्ला० की इत्तिबा में इस हद तक पुहंच गये थे कि उनके मानिंद होगये थे''।

हुज़ूर सरदारे दो आलम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने जो जो बशारात और अलामात हज़रत महेदी अले० के बारे में इरशाद फ़रमाइ थीं वह पूरी की पूरी इमामुल काइनात हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) पर साबित हुवीं और सादिक़ आगईं।

आप अले० ही की ज़ात महेदी मौऊद इमाम आख़िरुज़् ज़मॉं, ख़लीफ़तुल्लाह, दाई इलल्लाह, मुरादुल्लाह होने की गवाही न सिर्फ़ अहादीसे शरीफ़ा दे रही हैं बल्कि क़ुरआन मजीद भी गवाही देता है।

१६) इसके अलावा न सिर्फ़ हमारी सीरत की किताबें आपकी सीरत, अख़लाक़, बयाने क़ुरआन की तासीर जो आप अले० का मोजिज़ा और ख़ास मन्सब था, और दूसरे तमाम मोजिज़ात की गवाही दे रही हैं बल्कि दूसरौं की किताबें और तवारीख़ भी आप अले० का सुबूत दे रही हैं कि आप अले० की मुक़द्दस ज़ात वही है जिसकी बशारत और पेशीनगोइ

रिसालत पनाह हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाइ है। यह सब कुछ मुताबक़त (अनुकूलता) और सुबूत होजाने पर भी आपकी ज़ात का इन्कार क्या कुफ़्र नहीं होगा?

१७) बग़वी ने अपनी असनाद के साथ इब्ने मालिक अश्अरी रज़ी० से रिवायत की है। वह कहते हैं कि मैं आँहज़रत सल्ला० की ख़िदमत में हाज़िर था। आप सल्ला० ने फ़रमाया कि

''बेशक अल्लाह के ऐसे बन्दे भी हैं जो न नबी हैं न शहीद, लेकिन क़ियामत के दिन अल्लाह से उनके क़ुर्ब (समीपता) और मर्तबा के सबब् से अम्बिया और शुहदा भी उनपर रश्क करेंगे।

इब्ने मालिक कहते हैं कि उस जमाअत के एक तरफ़ बदवी था जो इरशादे नबूवत सुनकर घुटनौं के बल् झुक गया और दोनों हाथ छोड़कर कहने लगा कि ''या रसूलुल्लाह सल्ला० उन लोगौं की हालत हमसे बयान फ़रमाइये कि वह कौन लोग हैं?

इब्ने मालिक कहते हैं कि उस से मैंने रसूलुल्लाह सल्ला० के चहरे पर शिगुफ़्तगी (ख़ुशी) और मसर्रत के आसार पाये।

आप सल्ला० ने फ़रमाया कि वह अल्लाह के बन्दौं ही में से चंद बन्दे हैं। मुख़्तलिफ़ शहरौं के और मुख़्तलिफ़ क़बीलौं के होंगे। उनमें आपस में कोइ नसब का रिश्ता नहीं होगा जिसके कारण वह आपस में मिलते हों, न दुनिया का माल जिसे वह बाहम ख़र्च करें। उनकी बाहमी (पारस्परिक) मुहब्बत महज़ अल्लाह की रहमत (हुक्म) से होगी। अल्लाह उनके चहरौं को (पैकरे) नूर बनादेगा और ख़ुदाए रहमान के सामने उनके लिये मोतियौं के मेम्बर बनाये जायेंगे (अंत तक)।

इस हदीसे शरीफ़ के मक़ामात पर ग़ौर कीजिये और हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० के सहाबा पर ग़ौर कीजिये।

हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने जिस तरह हज़रत महेदी अले० के बारे में बशारात (शुभ सूचना) और अलामात (लक्षण) इरशाद फ़रमाइ हैं उसी तरह आप अले० के सहाबा के बारे में भी इरशाद हो रहा है और पूरा सादिक़ आरहा है।

आप अले० के असहाब एक शहर के नहीं हैं बल्कि मुख़्तलिफ़ शहरौं के हैं और मुख़्तलिफ़ क़बीलौं के हैं। उन में न कोइ नसबी रिश्ता है न वतनी तअल्लुक़ है, मगर आपस में मुहब्बत और सिला रहमी (कृपा) का यह आलम है कि जवाब नहीं। मुझसे आप क्या हाल सुनते हैं दूसरौं की ज़बानी उनके हालात सुन्ये फिर अन्दाज़ा लगाइये।

जोनपूरनामा के पाँचवें बाब में ''ख्वाजा सय्यद मुहम्मद'' के उन्वान के तहत लिखा है कि

''ख़्वाजा सय्यद मुहम्मद अल्लाह की निशानियौं में एक निशानी थे और रसूलुल्लाह सल्ला० के मोजिज़ौं में से एक मोजिज़ा है''।

''जिन लोगौं ने आप से फ़ैज़ हासिल किया वह अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर में अलानिया मश्ग़ूल रहते। फ़ी सबीलिल्लाह जिहाद करने में जाँबाज़, दीन की नुसरत में सरफ़रोश, जो कुछ मिलता सब पर अलस् सवीया (बराबर बराबर) तक़सीम करते और दूसरे दिन के लिये ज़ख़ीरा न रखते। हाथ में तलवार और सर पर क़ुरआन रखना उनका ख़ास्सा (स्वभाव) है। फ़रोअ में इमाम आज़म रहे० की तक़लीद (अनुकरण) करते हैं, लेकिन हदीस की इत्तिबा में शिद्दत से काम लेते हैं और इस बाब में क़ियास (अनुमान) को तस्लीम नहीं करते, हिदायते हक़ के सिवा किसी से सरोकार नहीं रखते। सिवाय ख़्वाजा सय्यद मुहम्मद के दूसरे को महेदी नहीं समझते''।

ऐसे असहाब जिनके हालात और कैफ़ियात और सिफ़ात दूसरौं की किताबौं से तारीख़ी शहादत के साथ साबित हो रहे हैं और अहादीसे सहीहा जिनके सिफ़ात और मरातिब की गवाही देरही हैं।

ऐसे असहाब गवाही देरहे हैं और ईमान लारहे हैं कि आप अले० ही की ज़ात महेदी मौऊद, इमाम आख़िरुज़् ज़माँ, ख़लीफ़तुर् रहमान, दाई इलल्लाह, मुरादुल्लाह है तो फिर शको शुब्ह की क्या गुन्जाइश बाक़ी रहजाती है? उसके बाद भी आप अले० की ज़ात का इन्कार क्या कुफ़्र नहीं होगा?

१८) मुल्ला अब्दुल क़ादिर बदायूनी ने *नजातुर् रशीद* में अपने ज़माने के महेदवियौं के बारे में यह लिखा है। उनका ज़माना हज़रत इमामुना अले० के ताबईन और तबअ ताबईन का ज़माना है।

''उस सिलसिले (यानि सिलसिलए महेदविया) के बहुत से लोगौं के साथ रहा हूँ। मैंने उनके पसंदीदा अख़लाक़ और उनके पसंदीदा (मनोनीत) औसाफ़ (गुण) को फ़क़्रो फ़ना में मरतबए आली पर पाया। अगरचे उन्होंने इल्मे रस्मी (औपचारिक ज्ञान) हासिल नहीं किया था लेकिन क़ुरआन का बयान और उसके इरशादात और हक़ायक़ की बारीक बातें और माअरिफ़त के लतीफ़ नुकात उनसे इस क़दर सुने हैं कि अगर उन में कुछ मुज्मल (संक्षिप्त) तौर पर क़ैदे किताबत में लाना चाहें तो और एक तज़्किरतुल औलिया लिखना चाहिये''

मुल्ला अब्दुल क़ादिर बदायूनी अपनी आँखौं देखा हाल अपनी किताब *नजातुर रशीद* में लिख रहे हैं। हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) के सहाबा से फ़ैज़ पाने वालौं का यह हाल है तो अन्दाज़ा कीजिये कि सहाबा किराम रज़ी० का क्या मरतबा और क्या हाल होगा।

ताबईन और तबअ ताबईन के अख़लाक़ और औसाफ़ क्या थे? यह कैसे बने? हुज़ूर इमामुना ख़लीफ़तुर् रहमान के फ़ैज़ और तालीमात से बने।

फ़क़्रो फ़ना कैसे पैदा हुआ? हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० की तालीमात और फ़ैज़ान से पैदा हुआ।

इल्मे रस्मी हासिल नहीं किया मगर क़ुरआन का बयान, इशारात और हक़ायक़ की बारीक बातें और माअरिफ़त के लतीफ़ (नाज़ुक) नुकात कहाँ से बयान किये जा रहे हैं? साहबे बयाने क़ुरआन, बय्यिनतुल्लाह, मुरादुल्लाह हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) के बयाने क़ुरआन की तासीर (प्रभाव) और फ़ैज़ान का नतीजा हैं।

जिस तरह हज़रत सरवरे कौनैन रसूलुल्लाह सल्ला० ने वादीए ग़ैर ज़ी ज़रअ (ऐसी घाटी जहाँ खेती नहीं होसकती) से इल्मे दीन के जवाहिर पारे (रत्न) पैदा फ़रमाये जो दुनियाये आलम के मुअल्लिम (शिक्षक) बने। उसी तरह हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) ने ग़फ़लत और हलाकत में पड़ी हुइ दुनियाए इस्लाम को फ़ैज़ाने क़ुरआनी और तालीमे इत्तिबाए रसूले रब्बानी से जवाहिर पारे पैदा फ़रमाकर दीने इस्लाम को अज़् सरे नौ (पुनः) क़ायम फ़रमा दिया।

इन्ही हालात और हक़ायक़ से साबित होता है कि आप ही की ज़ात महेदी मौऊद इमामे आख़िरुज़् ज़मॉं है। यह साबित होजाने के बाद भी आपकी मुक़द्दस ज़ात का इन्कार क्या कुफ़्र नहीं होगा?

अहादीसे सहीहा में हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० से मुतअल्लिक़ जो बशारात और निशानियाँ बयान की गइ हैं वह तमाम हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) की मुक़द्दस ज़ात पर साबित होगयीं।

अहादीसे सहीहा में कैसे ज़माने में हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का ज़ुहूर होगा उसके जो आसार (लक्षण), क़राईन (परिस्थितिगत प्रमाण) और अलामात बतलाये गये हैं वह तमाम तारीख़ी किताबों के हवालों से साबित होगया कि हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले०

(जोनपूरी) के जन्म के समय बिल्कुल वैसा ही ज़माना था और हादीए बरहक़ का मुन्तज़िर था। इस तमाम तफ़सील का ख़ुलासा यह है कि

हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) का सिलसिलए नसब (कुल क्रम), नाम और कुनियत, हुज़ूर की पैदाइश के हालात और वाक़ेआत, हुज़ूर के बच्पन के हालात, इत्तिबाए शरीअते हक़्क़ा के वाक़ेआत, आपके करीमाना अख़लाक़ और सिफ़ाते हसना, आपका किताबुल्लाह और रसूलुल्लाह सल्ला० का इत्तिबाए ताम, आपकी दाअवत और तब्लीग़, आपके दाअवए महेदियत का एलान और बादशाहों के नाम ख़ुतूत्, उलमाए हक़्क़ानी के अक़वाल, उलमाए सूअ् (दुराचारी विद्वानों) की ईज़ा रसानी (कष्ट दायकता) और मसाइब और आपका सब्रे जमील, आख़िर वक़्त तक अपने दाअ्वे पर क़ायम रहना, दाअ्वा और तब्लीग़ की २३ साला मुद्दत, आपके मोजिज़ात, बयाने क़ुरआन की तासीर, सुहबते आलिया का फ़ैज़ान, आपके अहकाम और तालीमात, आपके अज़्कारे इलाही और अश्ग़ाले रब्बानी, आपकी ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम और उसके असरात, आपका हैबत और जलाल, आपका करम और शफ़क़त आपकी हयाते पाक के हालात और वह तमाम चीज़ें जो आप से ज़ुहूर में आयीं, क़ुरआन मजीद और अहादीसे सहीहा से और उस ज़माने की तारीख़ी किताबों के हवालों से साबित करदिया गया कि आपकी मुक़द्दस ज़ात ही महेदी मौऊद इमामे आख़िरुज़ ज़माँ और ख़लीफ़तुल्लाह है।

यह भी साबित करदिया गया है कि आप का इत्तिबा और इताअत हुक्मे ख़ुदा और रसूल सल्ला० से फ़र्ज़ है। उसके बाद भी आपकी मुक़द्दस ज़ात का इन्कार क्या कुफ़्र नहीं होगा?

१९) कलिमए शहादत पर ग़ौर कीजिये।

اَشْهَدُ اَنْ لَااِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًاعَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ

इस के दो हिस्से हैं। एक हिस्सा अल्लाह तआला की गवाही में है

कि ''मैं गवाही देता हूँ कि नहीं है कोइ माअबूद सिवाय अल्लाह के'' और दूसरा हिस्सा हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की गवाही में है कि ''और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बन्दे और उसके रसूल हैं''।

तमाम अम्बिया अले० और उनकी नबूवत पर ग़ौर कीजिये कि जितने अम्बिया अले० आये वह अल्लाह तआला की एक एक सिफ़त के मुज़्हिर (ज़ाहिर करने वाले) बनके आये। चुनांचे

لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ اٰدَمُ صَفِیُّ اللّٰهِ
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ نُوْحٌ نَّجِیُّ اللّٰهِ
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ اِبْرَاهِیْمُ خَلِیْلُ اللّٰهِ
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ اِسْمٰعِیْلُ ذَبِیْحُ اللّٰه
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ مُوْسٰی کَلِیْمُ اللّٰهِ
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ دَاؤُدُ خَلِیْفَةُ اللّٰه
لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ عِیْسٰی رُوْحُ اللّٰه

इन तमाम में कोइ रसूलुल्लाह बनकर नहीं आया सिर्फ़ सरवरे कौनैन की मुक़द्दस ज़ात है जो रसूलुल्लाह बनकर आइ। चुनांचे لاَاِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ مُحَمَّدٌرَّسُوْلُ اللّٰه

इस से मालूम हुआ कि सिर्फ़ आँहज़रत सल्ला० की ज़ात अल्लाह तआला की रिसालत के मन्सब पर फ़ाइज़ है गोया हुज़ूरे अकरम सल्ला० अल्लाह तआला की ज़ात के मुज़्हिर बनकर आये।

मुहक़्क़िक़ीन सूफ़ियाए किराम की यह मुसल्लमा हक़ीक़त है कि तमाम अम्बिया अले० ने मिश्काते विलायते मुहम्मदी सल्ला० ही से फ़ैज़ पाया है। आप सल्ला० की विलायत और आपकी नबूवत अज़ली (वह समय

जब सृष्टि की रचना हुई) है। चुनांचे सरवरे कौनैन हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० फ़रमाते हैं कि "كُنْتُ نَبِيًّا وَآدَمَ بَيْنَ الْمَاءِ وَالطِّيْنَ" यानि मैं उस वक़्त नबी था जबकि आदम अले० पानी और कीचड़ में थे।

नबूवत और विलायत दोनों आक़ाए दो जहाँ हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की हैं। इसी वज्ह से आपका मन्सब रिसालत है। मन्सबे रिसालत में नबूवत और विलायत दोनों शामिल हैं।

कलिमए शहादत के दूसरे हिस्से में आँहज़रत सल्ला० की रिसालत की गवाही देना है यनि आँहज़रत सल्ला० की नबूवत और विलायत दोनों की गवाही देना है। जबतक नबूवत और विलायत दोनों की गवाही न दी जाये गवाही पूरी न होगी बल्कि नामुकम्मल (अधूरी) रहेगी।

सवाल यह पैदा होता है कि आँहज़रत सल्ला० की नबूवत का तो इज़्हार होचुका और आपकी नबूवत की गवाही भी दी गइ। विलायत की गवाही जब ही दी जायेगी जबकि उसका इज़्हार हो। आँहज़रत सल्ला० की विलायत का ज़ुहूर कब होगा? इस सवाल का जवाब कि आँहज़रत सल्ला० की विलायत का ज़ुहूर किस सन् में होगा? कौन देसकता है? कोइ नहीं देसकता। अलबत्ता क़ुरआन देसकता है या इसी कलिमए शहादत का वह हिस्सा देसकता है जो आँहज़रत सल्ला० की गवाही से मुतअल्लिक है, उसी से पुछा जाये कि आँहज़रत सल्ला० की विलायत का ज़ुहूर किस सन् में होगा? कलिमए शहादत का दूसरा हिस्सा जो हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की रिसालत की गवाही का है उसी में आँहज़रत सल्ला० की विलायत के ज़ुहूर का ज़माना (यानि सन्) पोशीदा है। चुनांचे

وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًاعَبْدُهٗ وَرَسُوْلَهٗ

के आदाद (अंक) निकालिये तो बग़ैर कुछ दाख़िल किये या ख़ारिज किये के पूरे पूरे (८४७) के आदाद निकलते हैं। गोया आँहज़रत सल्ला० की विलायत के ज़ुहूर का ज़माना (यानि सन्) ८४७ का सन् है। चुनांचे हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) की पैदाइश का सन् (वर्ष) ८४७ हिज्री है।

اعداد: و ' ا ' ش ' ھ ' د ' ا ' ن ' محمدٗ ع ' ب ' د ' ہ ' و ' ر ' س ' و ' ل ' ہ

6+1+300+5+4+1+50+92+70+2+4+5+6+200+60+6+30+5 = 847

साबित हुआ कि हज़रत इमाम महेदी मौऊद ख़ातिमे विलायते मुहम्मदिया के ज़ुहूर का ज़माना (यानि वर्ष) ८४७ हिज्री है। ८४७ हिज्री से पहले अगर किसी ने महेदियत का दाअवा किया हो तो इस लिहाज़ से ग़लत है और ८४७ हिज्री के बाद आयन्दा अगर कोइ महेदियत का दाअवा करेगा तो वह भी सरासर ग़लत होगा क्योंकि कलिमए शहादत से ख़ातिमे विलायत के ज़ुहूर का जो सन् बरामद हो रहा है वह ८४७ हिज्री है और यही ज़माना वस्ते उम्मत का है।

लिहाज़ा ८४७ हिज्री में ज़ुहूर करने वाली ज़ात ही ''इमाम महेदी मौऊद'' हो सकती है दूसरी नहीं हो सकती।

हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) ही की ज़ात पर ईमान लाने से कलिमए शहादत की तकमील और आँहज़रत सल्ला० की रिसालत की गवाही मुकम्मल हो सकती है वरना नहीं हो सकती।

इन तमाम हक़ाइक़ और कामिल सदाक़त के साथ साबित हुआ कि आप ही की मुक़द्दस ज़ात महेदी मौऊद इमाम आख़रुज़् ज़माँ है। *आमन्ना व सद्दक़ना*

इसके बावजूद आपकी मुक़द्दस ज़ात का इन्कार किया जाये तो क्या कुफ़्र नहीं होगा? यक़ीनन् और ईमानन् आप की मुक़द्दस ज़ात का इन्कार कुफ़्र है।

यहाँ यह सवाल पैदा हो सकता है कि हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० के इन्कार से जो कुफ़्र आइद हो रहा है उसकी नौइयत और हैसियत क्या है?

कुफ़्र के अहकाम या नतीजे के एतिबार से कुफ़्र के कइ दर्जे हैं। कभी कुफ़्र तौहीद और इस्लाम के मुक़ाबिल में किया जाता है और कभी ईमान के मुक़ाबिल में।

१) मसलन् एक मुश्रिक जो ख़ुदा की ज़ात या तौहीद का मुन्किर हो यानि ख़ुदाए तआला के साथ दूसरौं को शरीक करता है वह भी काफ़िर है।

२) एक शख़्स जो ख़ुदा की ज़ात और उसकी तौहीद पर और अम्बियाए साबिक़ीन (पिछले) अले० पर ईमान रखता है मगर हज़रत सरवरे काइनात मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की नबूवत और रिसालत का मुन्किर है (जिसको अहले किताब कहते हैं) वह भी काफ़िर है।

३) उसी तरह एक शख़्स ख़ुदा की ज़ात और तौहीद और पिछले अम्बिया अले० और हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० पर ईमान रखता है लेकिन आँहज़रत सल्ला० के किसी ऐसे ज़रुरी हुक्म का मुन्किर है जिसका मान्ना दीनी लिहाज़ से ज़रुरी है (इस क़िसम के अहकाम को ज़रुरियाते दीन कहते हैं)। मिसाल के तौर पर कोइ शख़्स नमाज़ के फ़र्ज़ होने या शराब के हराम होने से या उसी क़िसम के किसी हुक्म का इन्कार करे तो वह भी काफ़िर है।

चुनांचे इल्मे कलाम की पुस्तकौं और फ़तावा फ़िक़्ह में कइ तसरीहात मिलती हैं कि जिस शख़्स में इस क़िसम के मूजिबाते कुफ़्र पाये जायें उसके काफ़िर होने में इख़्तिलाफ़ नहीं है। चुनांचे *शर्ह मक़ासिद* में लिखा है कि

''कोइ अहले क़िब्ला (मुसलमान) उम्र भर ताअत और इबादत का पाबंद हो मगर आलम (जगत) के क़दीम होने या हश्र न होने या ख़ुदाए तआला को जुज़्इयात (अंश) का इल्म न होने या इसी क़िसम का एतिक़ाद रखे या ऐसा ही मूजिबाते कुफ़्र में से कोइ चीज़ उस से सादिर हो तो उस शख़्स के कुफ़्र में कोइ नज़अ् (विवाद) और इख़्तिलाफ़ नहीं है''।

लेकिन उन तमाम कुफ़्र के अक़साम के अहकाम के नतीजे में दीनी एतिबार से फ़र्क़ है। चुनांचे उसके ख़ुलासे के तौर पर यह है कि

पहली क़िसम के कुफ़्फ़ार यानि मुश्रिकीन का ज़ब्ह किया हुआ जाइज़ नहीं। मुसलमानौं में और उनमें विरासत जारी न होगी। उनके साथ मुसलमानौं का निकाह दोनों जानिब से जाइज़ नहीं। मुसलमानौं के बाज़ मआमलात में उनकी गवाही क़ुबूल नहीं। उनको अज़ाबे आख़िरत से नजात नहीं।

उसके मुक़ाबिल दूसरी क़िसम के कुफ़्र का यह हुक्म है कि उनको भी आख़िरत के अज़ाब से नजात नहीं। मुसलमानौं और उनमें विरास्त जारी न होगी। मुसलमानौं के बाज़ मआमलात में उनकी गवाही भी जाइज़ नहीं लेकिन अहले किताब का ज़ब्ह किया हुआ मुसलमानौं को जाइज़ है। एक तरफ़ा निकाह सही है यानि किताबिया औरत से मुसलमान मर्द को निकाह करना जाइज़ है।

तीसरी क़िसम के कुफ़्र का यह हुक्म है कि अज़ाबे आख़िरत और इबादात में इक़्तिदा के सिवाय तक़रीबन् वह सब अहकामे कुफ़्र जो मुश्रिकीन और अहले किताब से संबंधित हैं वह उनपर जारी न होंगे। मसलन् उनमें और दूसरे मुसलमानौं में विरासत जारी होगी। चुनांचे *फ़राइज़े शरीफ़िया* में लिखा है कि

''उसका ख़ुलासा यह है कि दीन और मिल्लत का इख़्तिलाफ़ मानेअ् विरासत है लेकिन अहले अहवा में विरासत जारी होगी क्योंकि वह

अम्बिया और कुतुब के मान्ने वाले हैं और सिर्फ़ किताबो सुन्नत की तावील में मुख़्तलिफ़ हैं और इस से इख़्तिलाफ़े मिल्लत लाज़िम नहीं आता''।

इसी कारण तमाम फ़िरक़ा हाये इस्लाम में बाहम विरासत जारी होती है।

एक मसअला ''इत्लाक़ुल कुफ़्र बमूजिबे शरई'' का है जिसके तहत जहाँ कोइ मूजिब (कारण) शरई क़ुफ़्र का मौजूद हो वहाँ कुफ़्र का इत्लाक़ करना गोया शारेअ के हुक्म के इत्तिबा में है और यह जाइज़ है। चुनांचे उसूले क़ानून (नियम) भी यही है कि किसी को किसी क़ानूनी वज्ह के बग़ैर मुज्रिम (अपराधी) क़रार नहीं दिया जासकता, मगर किसी क़ानून के तहत किसी को ज़रुर मुल्ज़िम (दोषी) या गुनाहगार या मुज्रिम क़रार दिया जासकता है।

पस तमाम अकाबिरे उम्मत और अइम्मए दीन ने जो अहकामे कुफ़्र जिन जिन बातौं में जारी किये हैं वह सब इसी क़िसम में दाख़िल हैं कि उनके एतिक़ाद या उसूल के नज़र करते कोइ न कोइ मुजिबे शरई कुफ़्र पाया जाता है।

लिहाज़ा हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० के इन्कार से जो कुफ़्र आइद हो रहा है इसी ''हत्लाक़ुल क़ुफ़्र बमूजिबे शरई'' के तहत दाख़िल है और यह क़ुफ़्र कुफ़्रे शरई है।

इसी हुक्मे शरई के तहत महेदवी हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० का इन्कार करने वालौं की इबादात में इक़्तिदा को जाइज़ नहीं समझते। उसके सिवा हर मआमले में उनके साथ हैं।

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّيۡ عَلٰى رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِيَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : महेदवी रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद बुलंद आवाज़ से जो तस्बीह कहा करते हैं क्या उनका यह अमल सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ला० के तहत सही है?

जवाब : इस्लाम में मुख़्तलिफ़ औक़ात में मुख़्तलिफ़ तस्बीहात कही जाती हैं। अपने अपने मक़ाम पर उन तस्बीहात की ज़रुरत और मसलेहत पर ग़ौर कीजिये। इस सिलसिले में तस्बीहात की चंद मिसालें पेश की जाती हैं।

१) रोज़ाना पाँच वक़्त की नमाज़ों से पहले जो अज़ाँ दी जाती है वह क्या है? वह भी एक तस्बीह ही है। حَيَّ عَلَى الصَّلٰوة *हय्य अलस् सलात्* और حَيَّ عَلَى الْفَلَاح *हय्य अलल् फ़लाह* के अलफ़ाज़ के अलावा बाक़ी तमाम कलिमात वही हैं जो मुख़्तलिफ़ तस्बीहात में पढ़े जाते हैं। उन कलिमात में *हय्य अलस् सलात* और *हय्य अलल् फ़लाह* के कलिमों को शामिल करके उसका नाम अज़ाँ रख दिया गया।

ग़र्ज़ उन पाँचों वक़्त की अज़ाँ का क्या मत्लब है? यही मत्लब है कि दूसरे नमाज़ियों को नमाज़ का बुलावा और दावत दी जा रीह है कि नमाज़ का वक़्त होगया, जमाअत की तय्यारी हो रही है, नमाज़ की तरफ़ आओ, भलाइ की तरफ़ आओ। उससे सून्ने वाले के दिलो दिमाग़ पर अल्लाह की तरफ़ और अल्लाह की इबादत की तरफ़ पलटने का ख़याल और जज़्बा पैदा होता है।

२) अगर जंगल में भी नमाज़ जमाअत से पढ़ी जाये तो वहाँ भी अज़ाँ देने का हुक्म है (यानि जंगल में भी दी जाती है)। जंगल में अज़ाँ देने का

क्या मत्लब है? क्या वहाँ भी किसी को नमाज़ की दावत दी जारही है? हाँ यह भी होसकता है। मगर असल हक़ीक़त यह है कि अज़ाँ की आवाज़ से क़रीब में अगर कोइ जंगली जानवर या दरिन्दा वग़ैरा हो तो दूर हो जाये क्योंकि यह मानी हुइ बात है कि इन्सानौं से जंगली जानवर और दरिन्दे (हिसंक जंतु) वग़ैरा ख़ुद बुहत डरते और घब्राते हैं। जहाँ किसी इन्सान की आहट पाइ भाग खड़े होते हैं। उसके बाद अल्लाह के नेक बन्दे इत्मिनान और सुकूने क़ल्ब के साथ नमाज़ में मश्ग़ूल होजाते हैं और कामिल इत्मिनान के साथ नमाज़ अदा करते हैं।

अज़ाँ एक ही है मगर मक़ाम के बदल जाने से उसके असरात और नताइज भी बदल रहे हैं।

३) जंग के मौक़े पर नाअ्रए तकबीर अल्लाहु अकबर के नाअ्रे लगाये जाते हैं यह भी तस्बीह का एक हिस्सा है मगर जंग के मौक़े पर नाअ्रा लगाने का क्या मक़सद और मत्लब है?

यही मत्लब है कि अल्लाह तआला की बुज़र्गी और बरतरी और उसके जलाल (प्रताप) और जब्रुत (महिमा) का तसव्वुर दिलो दिमाग़ पर छा जाये। दुश्मनौं के ग़ल्बे और हम्ले से न घब्राया जाये बल्कि अल्लाह बुज़र्ग व वरतर के जलालो जब्रूत के तसव्वुरात को दिलो दिमाग़ पर जमाया जाये।

चुनांचे उन नाअ्रौं के असरात यह होते हैं कि क़ल्ब (मन) में एक क़िसम का जोशो ख़ुरोश पैदा होता है, शुजाअत (शूरता), बहादुरी की उमंग (आकांक्षा) और वलवला पैदा होजाता है। शहादत का शौक़ जोश मारने लगता है, अल्लाह तआला की ग़ैबी ताक़तौं से मदद होती है। मुजाहिद मौदाने जंग में मौत से दोचार होने को एक खेल समझने लगता है।

यह एक फ़ित्री कैफ़ियत है चुनांचे खेल के मैदानौं में फ़ुट बाल हो कि कृकेट, हाकी हो या और कोइ खेल, ऐसे मौक़े पर जब कि दो पारटियाँ

एक दूसरे के मुक़ाबिल होती हैं, अकसर देखा गया है कि बेहतरीन खिलाड़ी का नाम लेकर पुकारा जाता है और मुख़्तलिफ़ नाअ्रे लगाये जाते हैं, जिस से खिलाड़ियों के दिलौं में एक जोश भरजाता है। खिलाड़ियौं के दिलो दिमाग़ से माहौल और अत्राफ़ का आलम गुम होजाता है। खेल और जीतने के लिये तन मन की बाज़ी लगादेता है।

नाअ्रौं के अलफ़ाज़ (शब्द) तो जुदा हैं मगर नाअ्रा लगाने का फ़ेल तो एक ही है। नाअ्रौं का मक़ाम बदलने से नाअ्रौं के असरात और नताइज भी बदल रहे हैं। एक नाअ्रे का नतीजा यह है कि मौत एक दिलचस्प मश्ग़ला और एक खेल बन रही है और एक नाअ्रे का असर यह है कि खेल और सिर्फ़ खेल है, मगर नाअ्रौं के असरात (प्रभाव) और नताइज (परिणाम) से इन्कार नहीं किया जासकता।

४) अय्यामे तश्रीक़ में हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद ही तकबीरात बुलंद आवाज़ से पढ़ी जाती हैं। वह भी एक तस्बीह की हैसियत है। यह क्यों कही जाती है? अय्यामे तश्रीक़ के क्या माने है?

तश्रीक़ के माने (अर्थ) गोश्त सुखाने के हैं। चूंकि उन दिनौं में क़ुरबानी का गोश्त सुखाया जाता है (हज के मौक़े पर मक्का मोअज़्ज़मा में लाखों जानवरौं की क़ुरबानी दी जाती है जिनका गोश्त पहाड़ियौं पर सुखाया जाता है) इस लिये उन दिनौं का नाम अय्यामे तश्रीक़ रखा गया। मगर सवाल यह है कि उन दिनौं में हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद ही तमाम दुनिया के मुसलमानौं का तकबीरात कहने का क्या मक़सद और मत्लब है? यही मत्लब है कि अल्लाह वहदहु लाशरीक की इबादत और बन्दगी के बाद उसकी बुज़र्गी (प्रतिष्ठता) और अज़्मत (महिमा) का, अल्लाह की माअबूदियत का और उसकी हम्द का बुलंद आवाज़ से बयान और इक़रार करके नफ़्स को और नफ़्स की ख़्वाहिशात को आजिज़ी और इन्केसारी (नम्रता) के साथ अल्लाह तआला की बारगाह में क़ुरबान करने के लिये तैयार किया जाये और उसके असरात और तसव्वुरात को दिलो दिमाग़ पर जमाया जाये।

५) ईदुल् अज़्हा की नमाज़ के लिये ईदगाह या मस्जिद को जाते हुए रास्ते में तकबीरात बुलंद आवाज़ से कही जाती हैं, उसका क्या मत्लब है? यही मत्लब है कि बन्दए मोमिन का जो क़दम अल्लाह तआला की तरफ़ बढ़ रहा है, अल्लाह तआला की बुज़र्गी और अज़्मत, उसकी माअबूदियत और हम्द के इक़रार के साथ बढ़ रहा है जिस से माहौल तक मुतासिर हो रहा है। अगरचे कि उस ज़बानी इक़रार का तअल्लुक़ ज़बान और आज़ाए ज़ाहिरी से है मगर उसके असरात यह हैं कि क़ल्ब में ख़ुदा तरसी, परहेज़गारी, आजिज़ी और इन्केसारी के जज़्बात पैदा होते हैं। फिर यही जज़्बात तरक़्क़ी करते करते रुह की नाक़ाबिले बयान कैफ़ियत तस्दीक़ो तस्लीम को जिस्मो क़ल्ब सब पर हावी और मुसल्लत करदेते हैं। यही असरात ईदुल अज़्हा की नमाज़ के बाद क़ुरबानी देते वक़्त ख़ौफ़े ख़ुदा, ख़ुलूस और सदाक़त में इज़ाफ़ा करदेते हैं और बन्दा तस्लीमो रज़ा का पैकर बनजाता है।

सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिहि कि रास्ते में बुलंद आवाज़ से तकबीरात (जो तस्बीह ही की एक क़िसम है) कहने से क्या असरात और नताइज पैदा हो रहे हैं।

६) रमज़ान के महीने में नमाज़े तरावीह के दरमियान् तो मुख़्तलिफ़ तस्बीहात पढ़ी जाती हैं और कुछ बुलंद आवाज़ से पढ़ी जाती हैं। मगर तरावीह और वित्र ख़त्म करने के बाद तमाम नमाज़ी बुहत बुलंद आवाज़ से जो तमाम मुहल्ले में गूंज जाती है यह तस्बीह पढ़ते हैं।

سُبْحٰنَ ذِی الْمُلْکِ وَالْمَلَکُوْتِ الخ

सुब्हान ज़िलमुल्कि वल मल्कूत (अंत तक)[१]

(१) महेदवी भी यह तस्बीह नमाज़े तरावीह और नमाज़े वित्र ख़त्म करने के बाद पढ़ते हैं मगर बुलंद आवाज़ से नहीं बल्कि इन्फ़िरादी तौर पर आहिस्ता आहिस्ता पढ़ते हैं। इन्फ़िरादी (व्यक्तिगत) और आहिस्ता पढ़ने की सनद ग़ायतुल औतार में तहतावी के हवाले से मिलती है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने यह तस्बीह आहिस्ता पढ़ी है।

यह भी तस्बीह में अल्लाह तआला की पाकी, इख़्तियार इज़्ज़तो अज़्मत, क़ुदरतो किब्रियाइ और बादशाही का एलान और इक़बाल किया जाता है। अल्लाह तआला की रुबूबिय्यत (कृपा) का कि अल्लाह तआला हमारा, फ़रिश्तौं का और रूह का परवरदिगार है इक़रार और इक़बाल (स्वीकृति) किया जाता है। फिर अल्लाह के सिवा कोइ माअबूद नहीं का एलान और इक़रार किया जाता है। उसके बाद बन्दा अपनी बख़्शिश और जन्नत की अता के लिये दरख़्वास्त (निवेदन) करता है आख़िर में दोज़ख़ से अल्लाह तआला की पनाह मांगी जाती है।

ग़ौर कीजिये कि इशा की नमाज़ अदा की गइ, नमाज़े तरावीह की बीस रकातें भी अदा करलीं, क़िर्अते क़ुरआन भी हुइ, वित्र की नमाज़ अदा करके दुआए क़ुनूत में एक मुकम्मल दस्तावीज़ और इक़रार नामा तक पेश करदिया गया, उसके बाद यह तरावीह की तस्बीह पढ़ी जारही है वह भी इस क़दर बुलंद आवाज़ से कि तमाम मुहल्ला गूंज रहा है। उसका क्या मक़सद है? उस मक़सद की तफ़सील यह है कि

माहिरीने इल्मे नफ़्सियात (मनो विज्ञान के विशेषज्ञ) का मुसल्लमा मसअला (प्रमाणित विषय) है कि रुह का असर जिस्म पर पड़ता है और जिस्म के आमालो अफ़आल का असर रुह पर पड़ता है।

चुनांचे इन्सान जब किसी ख़ौफ़नाक चीज़ को देखता है या कोइ ख़ौफ़ और ख़त्रे की सूचना सुनता है तो ख़ौफ़ खाता है तो पहले रुह मुतासिर होती है। उसके नतीचे के तौर पर चहेरे का रंग उड़ जाता है, पीला पड़जाता है, जिस्म में लर्ज़ा और कपकपी पैदा होजाती है, हालांकि जिस्मानी तअल्लुक़ से उसको कोइ तकलीफ़ नही पहुंची, सिर्फ़ देखने या सुन्ने से यह असर पैदा हो रहा है।

इसी तरह अगर किसी इन्सान को गाली दी जाये तो रुह को सख़्त नागवार गुज़रता है, जिसके नतीजे के तौर पर चहरा ग़ुस्से से लाल हो

जाता है और इस क़दर ग़ुस्सा और जोश भरजाता है कि हाथ पाँव काँपने लगते हैं हालंकि जिस्मानी तअल्लुक़ से कोइ तकलीफ़ नहीं पहुंचाइ गइ।

इसी तरह इन्सान जब ज़बान से नेक अलफ़ाज़, अच्छी और उम्दा गुफ़्तगू करता है और उसके नेक और अच्छे असरात देखता है तो उसके चहरे पर मसर्रत और ख़ुशी की अलामात ज़ाहिर होती हैं। इस तरह अगर किसी इन्सान की तारीफ़ (प्रशंसा) की जाये या ख़ुशी की ख़बर सुनाइ जाये तो तारीफ़ी अलफ़ाज़ सुनकर या ख़ुशी की सूचना पाकर रुह ख़ुश और मसरुर (प्रसन्न) होती है, जिसके नतीजे में चहरे पर ख़ुशी और मसर्रत की लहर दौड़ जाती है।

इसी तरह बन्दए मोमिन किसी नाअ्रे या तस्बीह को बुलंद आवाज़ से कहता है तो उसके असरात रुह और दिलो दिमाग़ पर बहुत गहरे होते हैं। जिस क़दर जोशे क़ल्बी (हार्दिक उत्साह) और कमाले सदाक़त (पूर्ण सत्यता) के साथ नाअ्रे लगाये जायेंगे या तस्बीह पढ़ी जायेगी यक़ीनन् उसके असरात भी रुह और दिलो दिमाग़ पर उसी क़दर गहरे होंगे। इसी लिये रमज़ान में नमाज़े तरावीह के बाद वह तस्बीह बुलंद आवाज़ से कही जाती है जिससे अल्लाह के नेक और इबादत गुज़ार बन्दों पर उसका गहरा असर पड़ता है और ऐसे मुसलमान जो उस नमाज़ में शरीक नहीं थे वह भी सुन पाते हैं और उनके दिलों पर भी उसका असर होता है, जिस से उनके दिलों में अल्लाह तआला की ज़ात से मुहब्बत और ख़ुलूस पैदा होता है और अल्लाह तआला के जलाल और जब्रूत से मुतासिर होते हैं जिस का नतीजा यह होता है कि वह भी अल्लाह तआला की इबादत की तरफ़ पलट आते हैं।

तस्बीह के असरात और नताइज इस क़दर अहम हैं तो सवाल यह पैदा होता है कि साल में एक मर्तबा रमज़ान ही के दिनों में क्यों? अगर रोज़ाना इसी तरह तस्बीह पढ़ी जाये तो और भी बेहतर होगा, मगर ऐसा नहीं किया जाता।

इसका जवाब आसानी से यह दिया जासकता है कि चूंकि नमाज़े तरावीह भी साल में एक मर्तबा सिर्फ़ रमज़ान ही के महीने में पढ़ी जाती है और यह तस्बीह भी तरावीह से मुतअल्लिक़ है इस लिये साल में एक मर्तबा पढ़ी जाती है। इसी तरह रमज़ान के रोज़ों की भी यही कैफ़ियत है कि साल में सिर्फ़ एक महीना ही रखे जाते हैं।

यहाँ सवाल न रमज़ान के रोज़ों का है और न नमाज़े तरावीह का, सवाल सिर्फ़ तस्बीह का है और उसके असरात और नताइज का है, जिसको हम आगे साबित कर रहे हैं कि तस्बीह तो रोज़ाना होनी चाहिये।

ग़र्ज़ मुख़्तलिफ़ औक़ात में मुख़्तलिफ़ हैसियत से जो तस्बीहात कही और पढ़ी जाती हैं उनकी ज़रुरत, मसलहत और उसके असरात और नताइज आपके सामने आगये और मालूम होगया कि मुख़्तलिफ़ मक़ासिद के तहत मुख़्तलिफ़ तस्बीहात कही जाती हैं और हर तस्बीह अपनी जगह अपने मक़ासिद (उद्देश) और नोइयत के एतिबार से सही है।

जिस क़दर इस्लामी आमाल और अफ़कार (विचार) हैं वह क़ुराने हकीम और सुन्नते हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इत्तिबा में हैं तो सही और बेहतर होंगे वर्ना ग़लत होंगे।

चुनांचे अल्लाह तआला क़ुरआन मजीद में फ़रमाता है *''तस्बीह करते हैं उसके वास्ते सातों आसमान और ज़मीन और जो कोइ कि उनके बीच में है और कोइ चीज़ बग़ैर उसकी तस्बीह और तारीफ़ के नहीं है लेकिन उनकी तस्बीह को तुम नहीं समझते''* (बनी इसराईल - ४४)।

और क़ुरआन मजीद के सूरह रहमान में फ़रमाता है *''बूटियाँ और दरख़्त सज्दा करते हैं''।*

ख़ुदाए तआला के इरशाद से साबित हो रहा है कि काइनाते आलम में जितनी मख़लूक़ है वह तमाम ख़ुदाए तआला की तस्बीह और हम्द और सज्दा करती हैं और उनका रोज़ाना का यह अमल बराबर जारी है।

अब बन्दए मोमिन पर ग़ौर कीजिये कि वह भी नमाज़ में अल्लाह तआला की हम्द बयान करता है और सज्दे करता है। अब रह गइ तस्बीह उसकी भी अदाइ ज़रुरी है। यूँ तो नमाज़ में सब कुछ हो रहा है मगर तस्बीह नमाज़ में दाख़िल नहीं है।

यहाँ दुआओं का बयान नहीं होरहा है बल्कि तस्बीह का बयान होरहा है। इस लिहाज़ से मुस्तक़िल तौर पर नमाज़ों से अलग रोज़ाना तस्बीह का अमल होना चाहिये।

क़ुरआने हकीम की तौज़ीह और तश्रीह (स्पष्टी करण) हमको हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इरशाद और अमल ही से मिल सकती है। इस लिये हमको देखना चाहिये कि तस्बीह के सिलसिले में हुज़ूर सर्वरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का क्या अमल था?

चुनांचे हदीस की मश्हूर और सही किताब *नसाई शरीफ़* में बाब ''वित्र के बाद तस्बीह'' के तहत यह रिवायत बयान की गई है कि रसूलुल्लाह सल्ला० वित्र में सूरह سَبِّحِ اسْمَ رَبِّکَ الْاَعْلَی *सब्बिहिसम रब्बिकल् आला* और सूरह قُلْ یٰاَیُّهَا الْکَافِرُوْنَ *क़ुल या अय्युहल् काफ़िरुन* और قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ *क़ुल हुवल्लाहु अहद* पढ़ते थे और सलाम के बाद बुलंद आवाज़ से तीन मर्तबा سُبْحٰنَ الْمَلِکُ الْقُدُّوْس *सुब्हानल् मलिकुल क़ुद्दूस* फ़रमाते थे।

दूसरी रिवायत में लिखा है कि आँहज़रत सल्ला० तीसरी मरतबा आवाज़ बुहत बुलंद फ़रमाते थे।

इस तमाम तफ़सील और क़ुरआन हकीम और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल से दो बातें साबित हुवीं।

एक यह कि बन्दए मोमिन को पाँच वक़्त की नमाज़ें जो हम्द और सज्दे पर मुश्तमिल हैं अदा करना चाहिये। दूसरी यह कि रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद तस्बीह पढ़ना चाहिये।

अब महेदवियौं के अमल पर ग़ौर की जिये कि रोज़ाना पाँच वक़्त की नमाज़ें पाबन्दी से अदा करते हैं। और रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद तस्बीह कहा करते हैं। उनका यह अमल ऐन क़ुरआने मजीद और सुन्नते हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इत्तिबा में सही और हक़ है, जिससे इत्तिबाए क़ुरआने मजीद और इत्तिबाए सुन्नते हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० दोनों साबित हो रही हैं।

महेदवी रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद जो तस्बीह कहते हैं उस पर ग़ौर कीजिये कि यह तस्बीह तमाम तालीमाते क़ुरआनी का ख़ुलासा है कि नहीं? तस्बीह के अलफ़ाज़ यह हैं -

لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ
ला इलाह इल्लल्लाह
अल्लाह के सिवा कोइ माअबूद नहीं है

مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰه
मुहम्मदुर् रसूलुल्लाह
मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं

اَللّٰهُ اِلٰهُنَا
अल्लाहु इलाहुना
अल्लाह हमारा माअबूद है

مُحَمَّدٌ نَّبِيُّنَا
मुहम्मदुन् नबीयुना
मुहम्मद हमारे नबी हैं

اَلْقُرْاٰنُ وَالْمَهْدِيُّ اِمَامُنَا
अल क़ुरआनु वल महेदीयू इमामुना
क़ुरआन और महेदी हमारे इमाम हैं

اٰمَنَّا وَصَدَّقْنَا
आमन्ना व सद्दक़ना
हम ईमान लाये और उसकी तस्दीक़ की

इस तस्बीह को तमाम हाज़िरीने मसजिद (मुसल्लीयान) इशा की नमाज़ ख़त्म होने के बाद रोज़ाना बहुत बुलंद आवाज़ से एक साथ कहते हैं। मुनासिब होगा कि इस तस्बीह की कुछ तश्रीह करदी जाये।

इस तस्बीह का पहला हिस्सा तो कलिमए तय्यब या कलिमए तौहीद है जिस से इस्लाम का इज़्हार होता है यानि ''अल्लाह के सिवाय कोइ माअबूद नहीं है और मुहम्मद सल्ला० अल्लाह के रसूल हैं''।

ग़ौर कीजिये यह कलिमा एक जुम्लए ख़बरिया (सूचित करने वाला वाक्य) का काम देता है। इस से हमारी ज़ात को क्या मिलता है? ता वक्ते कि उस वाक्य से अपना संबंध जोड़ न लें।

इसी कैफ़ियत को दूर करने के लिये महेदवी उस कलिमए तौहीद से अपना तअल्लुक़ और अपनी निस्बत बबांगे दुहल (ऊंची आवाज़ में) इस इक़रार के साथ जोड़ते है कि ***अल्लाहु इलाहुना मुहम्मदन् नबीयुना*** अल्लाह हमारा माअबूद है और मुहम्मद सल्ला० हमारे नबी हैं।

(यह तस्बीह का दूसरा हिस्सा है) यानि यह कि अल्लाह के सिवाय हमारा कोइ माअबूद नहीं है और हम अल्लाह के सिवाय किसी की इबादत नहीं करते, जिस तरह क़ुरआने हकीम में हुक्म दिया गया कि तुम अपनी हर नमाज़ में कहो कि اِيَّاکَ نَعْبُدُ ***इय्याक नाअबुदु*** यानि हम तेरी ही इबादत करते हैं, हालांके उसी की इबादत की जारही है फिर भी उसके दरबार में खड़े होकर कहना और इक़रार करना पड़ता है कि ''हम तेरी ही इबादत करते हैं''। इसी तरह महेदवी हर रोज़ ऐलान (घोषणा) और इक़रार (स्वीकृति) करते हैं कि ''अल्लाह हमारा माअबूद है और मुहम्मद सल्ला० हमारे नबी हैं।

इसके अलावा ***अल्लाहु इलाहुना मुहम्मदुन् नबीय्युना*** मरातिबे ईमाने मुफ़स्सल का ख़ुलासा है यानि जब किसी ने अल्लाह तआला को इलाह (ख़ुदा) मान लिया और हज़रत मुहम्मद सल्ला० की नबूवत का इक़रार करलिया तो यक़ीनन् उसने ख़ुदा, फ़रिश्तौं, आसमानी किताबौं, अम्बिया और क़ियामत वग़ैरह के तमाम अहकामे ईमानी पर ईमान लालिया। क़ुरबान जाइये तस्बीह के इस मुख़्तसर जुम्ले पर कि सारे क़ुरआनी अहकाम का ख़ुलासा है। ग़र्ज़ महेदवी *अल्लाहु इलाहुना मुहम्मदुन् नबीय्युना* में शब्द *ना* यानि ''हमारे'' के शब्द से अल्लाह तआला और हज़रत नबी

सल्ला० से अपना तअल्लुक़ और अपनी निस्बत (संपर्क) भी जोड़ लेते हैं और बुलंद आवाज़ से उसका एलान और इक़रार करते हैं।

उसके बाद तस्बीह का तीसरा हिस्सा ***अल क़ुरआनु वल महेदीयु इमामुना*** है। ज़ाहिर है कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्ला० की माअरिफ़त (परिचय) और उन तक पुहंचने के लिये वसीला और इमाम चाहिये। बग़ैर वसीला और ज़रीआ के कोइ नहीं पुहंच सकता। चुनांचे अल्लाह तआला क़ुरआने मजीद में इरशाद फ़र्माता है कि وَابْتَغُوا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ *वब्तग़ू इलैहिल् वसीलत* (अलमाइदा-३५) यानि उसकी तरफ़ वसीला तलाश करो। अल्लाह तआला के इस हुक्म से ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला के पास पुहंचने के लिये वसीला ज़रूरी है।

उसके अलावा क़ुरआन और महेदी अले० की इमामत क़ुरआने मजीद और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की हदीस से साबित है। चुनांचे क़ुरआन शरीफ़ में अल्लाह तआला तौरेत को ***इमामन् व रहमतन्*** फ़र्माया है। जब तौरेत को अल्लाह तआला ने इमाम फ़र्माया तो क़ुरआन बदर्जए ऊला इमाम है और हज़रत हुज़ूरे अकरम रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि

''जिसने क़ुरआन को अपना इमाम बना लिया तो क़ुरआन उसको जन्नत की तरफ़ खींच लेजायेगा और जिसने क़ुरआन को पीठ पीछे डाल दिया तो उसको जहन्नम की तरफ़ घसीट ले जायेगा''।

अल्लाह तआला के फ़रमान और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की हदीस से क़ुरआन का इमाम होना साबित हुआ। ग़र्ज़ क़ुरआने मजीद की इमामत से मुश्रिक के सिवा कोइ मुसलमान इन्कार नहीं कर सकता। उसी तरह हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० की इमामत क़ुरआने हकीम और हज़रत रसूले करीम सल्ला० की अहादीस मुतवातिरूल् माना से साबित है।

रोज़ाना की नमाज़ौं के अमल पर ग़ौर कीजिये कि जब हम जमाअत से नमाज़ पढ़ते हैं तो नमाज़ की निय्यत में हवाला देना पड़ता है कि اِقْتَدَيْتُ بِهٰذَا الْاِمَامُ *इक़्तदैतु बिहाज़ल् इमामु* यानि मैं इक़्तदा करता हूँ इस इमाम की। जब तक इमामत का इज़्हार और इक़रार न किया जाये नमाज़ दुरूस्त नहीं हो सकती।

लिहाज़ा महेदवी क़ुरआने मजीद और हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० दोनों की इमामत का बुलंद आवाज़ से एलान और अपने ईमान लाने और तस्दीक़ करने का इक़रार करते हैं। इस तरह रोज़ाना बुलंद आवाज़ से तस्बीह कहने से दो बातें हासिल होती हैं।

एक यह कि उसका तमाम फ़ज़ाए आलम में एलान और इज़्हार होता है और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का इत्तिबा होता है।

दूसरे यह कि मनोविज्ञान के विशेषज्ञ के प्रमाणित नियम के तहत जिस क़दर जोशो ख़रोश के साथ तस्बीह कही जायेगी उसी क़दर दिलो दिमाग़ और रूह पर उसका गहरा असर होगा।

चुनांचे महेदवियौं के दिलो दिमाग़ पर इस क़दर गहरा असर पड़ता है कि एक महेदवी दुनियाए आलम को क़ुरबान कर सकता है हत्ता कि अपनी औलाद, अपनी इज़्ज़त आब्रू और अपनी जान को तक क़ुरबान करदेता है मगर अपनी इस तस्बीह को नहीं छोड़ सकता।

तमाम दुनिया के कारोबार से फ़ुर्सत पाकर दिन और बेदारी के आलम से जुदा होकर अब नींद और आराम के आलम में जा रहा है तो जाते हुवे अल्लाह तआला की इबादत से फ़ारिग़ होकर उस तस्बीह से अपने दिलो दिमाग़ पर अपनी रूह पर अल्लाह तआला की वहदानियत और माअबूदियत और हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की रिसालत

और नबूवत और क़ुरआने हकीम की हिदायत और इमामत और हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० की इमामत के इक़रार से असरात और कैफ़ियात को दिलो दिमाग़ पर क़ायम करके नींद के आलम में जाता है। जब बेदार होगा तो उन्ही तसव्वुरात और कैफ़ियात को लिये हुवे बेदार होगा (जागेगा)। गोया महेदवी उस तस्बीह की वज्ह से तमाम रात तसव्वुरात की दुनिया में उन्ही तसव्वुरात और कैफ़ियात में गुज़ारता है।

नींद के आलम (हालत) में अगर मौत वाक़े होजाये और जब क़ब्र में और मैदाने हशर में बेदार होगा तो तस्बीह के उन्ही तसव्वुरात और कैफ़ियात को लेकर बेदार होगा।

अलहम्दु लिल्लाह कि हर तरह साबित हुआ कि महेदवी रोज़ाना इशा की नमाज़ के बाद बुलंद आवाज़ से जो तस्बीह कहा करते हैं उनका यह अमल क़ुरआने मजीद और सुन्नते हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इत्तिबा में सही और हक़ है और बेहद दूर रस नताइज का बाइस है।

दूसरा भाग

اَللّٰھُمَّ صَلِّ عَلٰی سَیِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَّعَلٰی
اٰلِ سَیِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَّاَعْطِہِ الْوَسِیْلَةَ
وَالْفَضِیْلَةَ وَالدَّرَجَةَ الرَّفِیْعَةَ وَابْعَثْہُ
مَقَامًا مَحْمُوْدًا نِ الَّذِیْ وَعَدْتَّہُ اِنَّکَ لاَ
تُخْلِفُ الْمِیْعَادُo

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم

نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّيۡ عَلٰى رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم

وَالۡمَهۡدِيَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : महेदवी नफ़िल नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते? जब कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने नफ़िल नमाज़ पाबंदी के साथ पढ़ी है ?

जवाब : पहले इस बात पर ग़ौर करने की ज़रूरत है कि नफ़िल नमाज़ का दरजा मक़ामे शरीअत में क्या है? अल्लाह तआला के अहकाम और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के आमाल के तहत शरीअत का क़ानून और हुदूद मुक़र्रर करने वाले अइम्मए किराम चार हैं जिनको जम्हूर इस्लाम मानते हैं वह यह हैं।

१) हज़रत अबू हनीफ़ा नोमान बिन साबित इमामे आज़म रहे०

२) हज़रत मुहम्मद बिन इदरीस इमाम शाफ़ई रहे०

३) हज़रत इमाम मालिक रहे०

४) हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रहे०

सबसे पहले हज़रत इमाम मालिक रहे० ने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की अहादीस को जमा किया और हदीस की किताब *मोता* लिखी और मदीना तैयबा में उसके दर्स (शिक्षा) का आग़ाज़ किया। आपके बाद हज़रत अबू हनीफ़ा इमाम आज़म रहे० और हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० ने अहादीस जमा करने और अहकामे फ़िक़्ह तरतीब देने का काम अंजाम दिया। उसके बाद हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रहे० और दूसरे अइम्मए हदीस ने ख़िदमात अंजाम दीं।

अल्लाह तआला और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अहकाम और फ़रामीन यानि क़ुरआन और अहादीस में किसी इबादत के फ़र्ज़ और

वाजिब और किसी के मुस्तहब और नफ़िल होने की सराहत कम की गइ है, बल्कि अइम्मए किराम, मुज्तहिदीन और उलमाए उम्मत ने अल्लाह तआला और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अहकाम की अहम्मियत, ताकीदात, फ़ज़ाइल, वईदात और क़राइन का लिहाज़ करके अपनी राय और क़ियास (अनुमान) से किसी इबादत या अमल को फ़र्ज़ क़रार दिया है और किसी को मुस्तहब और किसी को नफ़िल कहा है।

यही कारण है कि एक फ़ेल (कार्य) किसी इमाम के पास फ़र्ज़ है तो वही फ़ेल दूसरे इमाम के पास मुस्तहब है जिसकी बेशुमार मिसालें फ़िक़्हइ मसाइल में मिलती हैं। चुनांचे हज़रत इमामे आज़म रहे० के पास अहकामे शरीअत के अक़साम फ़र्ज़, सुन्नत और मुस्तहब के अलावा वाजिब और नफ़िल भी हैं।

हज़रत इमामे आज़म रहे० के बरख़िलाफ़ हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० और हज़रत इमाम मालिक रहे० हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रहे० के पास बुनियादी हैसियत से शरीअत के अहकाम की सिर्फ़ तीन क़िस्में हैं।

१) फ़र्ज़ २) सुन्नत ३) मुस्तहब

इन तीनों अइम्मए किराम के पास वाजिब और नफ़िल का ज़िकर ही नहीं है और उनका कोइ मक़ाम ही नही है। उसके बावजूद यह कहना कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने नफ़िल पढ़ी है कहाँ तक सही और दुरुस्त हो सकता है।

ग़ौर कीजिये कि जो नमाज़ कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने अदा फ़रमाइ और फिर पाबंदी से अदा फ़रमाइ तो ऐसी नमाज़ को अहकामे शरीअत के तहत सुन्नत कहेंगे या नफ़िल कहेंगे? पाबंदी की शर्त से तो वह नमाज़ जिसकी पाबंदी हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने फ़रमाइ हो सुन्नत कहलाना चाहिये नकि नफ़िल कहलाना चाहिये।

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्ज़ और सुन्नतें अदा फ़रमाइ हैं। उसके सिवा जो नमाज़ें हुज़ूरे अकरम सल्ला० ने अदा फ़रमाइ हैं उनको मुस्तहब कहते हैं जिनकी तफ़सीलात अहादीसे शरीफ़ा में सलातुज़् ज़ुहा या ततव्वोअ् के सिलसिले में मिलती हैं, मसलन् नमाज़े इश्राक़, नमाज़े ज़ुहा वग़ैरह।

इन नमाज़ौं को भी हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने मस्जिद में अदा नहीं फ़रमाया बल्कि अपनी क़ियाम गाह (घर) में अदा फ़रमाया है। फिर यह भी कि घर में पाबंदी से बिल इल्तिज़ाम (अनिवार्य) अदा नहीं फ़रमाया क्योंकि हुज़ूर मुकर्रम सल्ला० के पाबंदी से अमल फ़रमायो पर फ़र्ज़ होजाने का एहतिमाल (आशंका) होता था। चुनांचे तरावीह की नमाज़ की कैफ़ियत इस अम्र पर शाहिद है आप सल्ला० ने फ़रमाया कि ''अगर मैं उस वक़्त निकल आता तो तुम लोगौं पर तरावीह की नमाज़ फ़र्ज़ होजाती''।

इसकी पूरी तफ़सील हमने पुस्तक ''हमारा मज़्हब'' पहले भाग में देदी है मुलाहिज़ा करलीजिये।

जिन नमाज़ौं को हज़रत अबू हनीफ़ा इमामे आज़म रहे० ''वाजिब'' कहते हैं उन नमाज़ौं को बाक़ी तीन जलीलुल क़द्र अइम्मए किराम ''सुन्नत'' कहते हैं। चुनांचे हज़रत इमाम आज़म रहे० वित्र और ईदैन की नमाज़ौं को वाजिब कहते हैं। वित्र और ईदैन की नमाज़ौं को हज़रत इमाम शाफ़ई रहे०, हज़रत इमाम मालिक रहे० और हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रहे० सुन्नत कहते हैं।

चुनांचे हज़रत इमामुल इरफ़ान महबूबे सुब्हानी शेख़ मुहीयुद्दीन अब्दुल क़ादिर जीलानी क़द्दस सिर्रहुल अज़ीज़ चूंकि हज़रत इमाम अहमद बिन हम्बल रहे० के मज़्हब (फ़िक़्ह) पर चलते हैं इस लिये आप हम्बली कहलाते हैं। हम्बली होने की हैसियत से आप भी वित्र और ईदैन की नमाज़ौं को सुन्नत ही क़रार देते हैं।

मुस्तहब की तारीफ़ चारों अइम्मए किराम के पास यह है कि

''जो फ़र्ज़ और सुन्नत के सिवा और उस से ज़ायद (अतिरिक्त) हो, जिसके अदा करने पर सवाब हासिल होता है और उसके तर्क करने पर अज़ाब नहीं''।

मुस्तहब, ततव्वोअ और नफ़िल इन सब का माना ज़्यादती के हैं। ऐसी सूरत में जब कि मुस्तहब, ततव्वोअ और नफ़िल तारीफ़ (परि भाषा) और नतीजए फ़ेल (कार्य का परिणाम) के एतिबार से एक हैं तो फिर ख़ास नफ़िल का सवाल कहाँ बाक़ी रहता है।

नवाफ़िल के सिलसिले में जितनी नमाज़ें रिवायत की गइ हैं उनमें से सिर्फ़ **सलातुल इश्राक़, सलातुज़् ज़ुहा, सलातुत् तहीयतुल वुज़ु** और **सलातुत् तहीयतुल मस्जिद** की सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से मिलती है कि आपने पढ़ी है जिनको मुस्तहब कहा गया है और जिनके औक़ात भी पाँच वक़्त की नमाज़ों से अलाहिदा हैं।

ऊपर बयान की गयी नमाज़ों में से **सलातुत् तहीयतुल वुज़ू** और **सलातुत तहीयतुल मस्जिद** को बाज़ अइम्मए किराम ने हुज़ूर अकरम सल्ला० की पाबंदी के नज़र करते सुन्नत कहा है। बाक़ी दीगर नमाज़ें मसलन् **सलातुल अवाबीन, सलातुल हाजत, सलातुत् तस्बीह** और **सलातुल् इस्तिख़ारा** वग़ैरह की सिर्फ़ रिवायतें बयान की जाती हैं और मर्वी है लिख दिया जाता है कोइ सनद पेश नहीं की जाती। इन नमाज़ों के सिलसिले में अइम्मए किराम के दरमियान इख़्तिलाफ़ भी है हत्ता कि उनकी रकातों की तादाद में भी इख़्तिलाफ़ है।

चुनांचे सलातुल इस्तिसक़ा के सिलसिले में हुज़ूर सरवरे कौनैन सल्ला० का सिर्फ़ दुआ करना बयान किया गया है नमाज़ के अदा करने की रिवायत नहीं मिलती। इसी तरह सलातुल इस्तिसक़ा के सिलसिले में हज़रत उमर रज़ी० का सिर्फ़ इस्तिग़्फ़ार पढ़ना बयान किया जाता है।

ऐसी सूरत में ग़ौर किया जाये कि दौरे हाज़िर में जो नफ़िल नामज़ें पाँच वक़्त की नमाज़ौं के साथ अदा की जाती हैं कहाँ तक सही और दुरुस्त हो सकती हैं? और नफ़िल कही जासकती हैं।

नफ़िल नमाज़ की हक़ीक़त

हुज़ूर सर्वरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने जो नफ़िल नमाज़ पढ़ी है वह यह नफ़िल नमाज़ नहीं है जो मौजूदा ज़माने में पढ़ी जाती है बल्कि उन पाँच वक़्त की नमाज़ौं और उनके औक़ात से अलग रात के तीसरे हिस्से में नफ़िल नमाज़ पढ़ी है जिसको क़ुरआन हकीम ने अपनी ज़बान में ''तहज्जुद'' कहा है। चुनांचे क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला का साफ़ और सरीह इरशाद है कि

اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوْكِ الشَّمْسِ اِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ ط اِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ مَشْهُوْدًا○ وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهٖ نَافِلَةً لَّكَ ق عَسٰٓى اَنْ يَّبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا مَّحْمُوْدًا○

''यानि नमाज़ें अदा कीजिये आफ़ताब ढलने के बाद से रात का अंधेरा होने तक और सुब्ह की नमाज़ भी बेशक सुब्ह की नमाज़ हाज़िरी का वक़्त है। और रात के हिस्से में भी ''तहज्जुद'' पढ़ा कीजिये जो आपके लिये ज़ाइद चीज़ (नफ़िल) है उम्मीद है कि आपका रब आपको मक़ामे महमूद में जगह देगा''। (बनी इसराईल-७८,७९)

क़ुरआने हकीम की इन आयाते शरीफ़ा में पहले जिन नमाज़ौं के क़ायम करने का हुक्म हो रहा है वह पाँच वक़्त की फ़र्ज़ नमाज़ौं का हुक्म है। चुनांचे इस पर कइ जलीलुल् क़दर सहाबए किराम और मुफ़स्सिरीन का इज्माअ् है।

फ़र्ज़ नमाज़ौं के बाद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इत्तिबा में वह नमाज़ें हैं जिनको सुन्नत कहते हैं। फ़र्ज़ और सुन्नत के बाद उन दोनों से ज़ाइद जिस नमाज़ का इशारा हो रहा है वह ''तहज्जुद'' है।

आयते करीमा में अल्लाह तआला ने ''نَافِلَةً'' *नाफ़िलतन्* जो फ़रमाया है उसके माने ज़ाइद के हैं और उस ज़ाइद (नफ़िल) को तहज्जुद की नमाज़ से मुतअल्लिक़ करके इरशाद हो रहा है और वक़्त के तऐयुन के साथ हो रहा है कि ''रात के हिस्से में तहज्जुद अदा कीजिये जो आप के लिये ज़ाइद (नफ़िल) है।

हक़ीक़त में जो नफ़िल नमाज़ है उसको छोड़ दिया गया और ऐसी नमाज़ को नफ़िल नमाज़ क़रार देकर इख़्तियार कर लिया गया जिसकी सनद नहीं मिलती।

ग़ौर कीजिये कि पाँच वक़्त की नमाज़ों में जहाँ फ़र्ज़, सुन्नत अदा हो रही है उसके मुक़ाबिल नफ़िल नमाज़ जिसको इख़्तियार कर लिया गया है क्या मक़ाम रखती है? जो अहकामे ख़ुदा और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल के ख़िलाफ़ लाज़िमन् पढ़ना ज़रूरी हो। तुरफ़ा यह कि जिसके अदा न करने पर कोइ गुनाह और अज़ाब तक नहीं, ऐसी नमाज़ के लिये इसरार किया जाये।

ऐसी ही नफ़िल नमाज़ों को जिनको इख़्तियार कर लिया गया है हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने मना फ़रमाया है और जो हक़ीक़ी नफ़िल नमाज़ थी जिस को क़ुरआने हकीम ने तहज्जुद फ़रमाया और पढ़ने इरशाद फ़रमाया है उसको हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० ने ख़ुद पढ़ा और अपने मुत्तबईन (अनुयायी) को पढ़ने का हुक्म दिया जिस से हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० का पूरा पूरा इत्तिबा साबित हो रहा है।

तहज्जुद की नमाज़ के अलावा ऐसी नफ़िल नमाज़ें मसलन् इश्राक़ और ज़ुहा की नमाज़ें जिनकी सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से मिलती है पढ़ने से मना नहीं फ़रमाया बल्कि पढ़ने की इजाज़त दी है।

सलातुत् तहीयतुल् वुज़ू

सलातुत् तहीयतुल वुज़ू को लोग नफ़िल समझते हैं जो सरासर ग़लत है बल्कि सुन्नत है। चुनांचे मुअल्लिमे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने पाबंदी से अदा फ़रमाया है, इसी बिना पर बाज़ अइम्मए किराम ने उसको सुन्नत कहा है। चुनांचे दुगाना तहीयतुल वुज़ू के बारे में हुज़ूर सरवरे काइनात रसूलुल्लाह सल्ला० का साफ़ इरशाद मौजूद है कि

''अक़बा बिन आमिर रज़ी० से रिवायत है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि नहीं कोई ऐसा मुसलमान जो वुज़ू करे अच्छी तरह से फिर खड़ा हो और दो रकात नमाज़ पढ़े दोनों रकातौं पर मुतवज्जह होकर अपने दिल और चहरे से उसके वास्ते जन्नत वाजिब होगइ''। (सही मुस्लिम)

चूंकि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने उसकी निस्बत ताकीद नहीं फ़रमाइ इस लिये यह तहीयतुल वुज़ू नमाज़ ग़ैर मुअक्कद सुन्नत है।

दुगाना तहीयतुल वुज़ू के बेशुमार फ़ज़ाइल हैं। हज़रत बिलाल रज़ी० के वाक़ेए से उसका अंदाज़ा किया जासकता है। चुनांचे हुज़ूर सरवरे काइनात हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० को जिस रात मेराजे मुबारक हुइ थी उसकी सुब्ह में हज़रत बिलाल रज़ी० को नज़्दीक तलब फ़रमा कर दरयाफ़्त फ़रमाया। हदीस शरीफ़ के अलफ़ाज़ यह हैं -

''हज़रत बुरेदा रज़ी० से रिवायत है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने सुब्ह की पस बिलाल रज़ी० को बुलाया यानि बाद नमाज़े सुब्ह के फ़रमाया कि तू ने बेहिश्त की तरफ़ किस चीज़ के साथ मुझ से पहेल की कि मैं बेहिश्त में नहीं दाख़िल हुआ मगर मैं ने अपने आगे तेरे चलने की आवाज़ सुनी। बिलाल रज़ी० ने कहा या रसूलुल्लाह मैं ने कभी अज़ाँ नहीं दी मगर पहले मैं ने दो रकातें पढ़ीं और जब वुज़ू किया मैं ने उसी वक़्त दो रकातें पढ़ना

अपने ऊपर लाज़िम किया और उस पर हमेश्गी से (सदैव) पाबंदी की। फ़रमाया रसूलुल्लाह सल्ला० ने इन्ही वह चीज़ौं के सबब् तो उस दर्जे को पहुंचा''।

यह हदीस तिर्मिज़ी शरीफ़ में है और इसी हदीस को तहारत के अलफ़ाज़ के साथ इमाम बुख़ारी रहे० ने अपनी हदीस की किताबौं में रिवायत किया।

इस हदीस शरीफ़ से और उसके सवाब के दर्जे और मक़ाम से अंदाज़ा की जिये कि सलातुत् तहीयतुल वुज़ू का क्या मर्तबा है और उसको अदा करने वालौं का क्या मक़ाम है। हुज़ूर सरदारे दो जहाँ हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने ख़ुद अदा फ़र्माइ और हुज़ूरे अकरम सल्ला० के इत्तिबा में दुगाना तहीयतुल वुज़ू अदा करने वालौं को यह दर्जा और मक़ाम नसीब हुआ।

उसके बाद ग़ौर कीजिये कि क्या ग़ुलामाने हज़र रसूलुल्लाह सल्ला० का फ़र्ज़ नहीं है कि उसको पाबन्दी से अदा करें।

इसी लिये हज़रत इमामुल काइनात इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने दुगाना तहीयतुल वुज़ू को ख़ुद भी पाबन्दी से अदा फ़र्माया है और अपनी इत्तिबा करने वालौं को भी पाबंदी से पढ़ने की ताकीद फ़रमाइ और दुगाना तहयितुल वुज़ू न पढ़ने वालौं को और उसकी अदाइ में सुस्ती और ग़फ़्लत करने वालौं को ''दीन का बख़ील'' फ़रमाया है।

ग़ौर कीजिये कि हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने हज़रत सर्वरे कौनैन सय्यदना रसूलुल्लाह सल्ला० का कहाँ और किस दर्जे तक इत्तिबा फ़र्माया है और इत्तिबा की ताकीद फ़र्माइ है।

ऐसी नफ़िल नमाज़ें जिनकी सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० तक सही नहीं पहुंचती सिर्फ़ रिवायत का दर्जा रखती हैं अदा करने से यक़ीनन्

मना फ़रमाया है जिसको हर अक़्ले सलीम (गम्भीर बुद्धि) तस्लीम करेगी और हर ईमानदार इन्सान क़ुबूल करेगा।

इस तफ़सील से साबित हुआ कि हर वह नमाज़ जिस की सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल और क़ुरआने हकीम से मिलती हो लाज़िमन् अदा करना चाहिये और हर वह नमाज़ जिस की सनद हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के अमल और क़ुरआने मजीद से न मिलती हो यक़ीनन् नहीं पढ़ना चाहिये।

इबादते अक्बर

फ़र्ज़ और सुन्नत नमाज़ें अहकाम की इत्तिबा में अदा करने के बाद ऐसे अमल और ऐसी इबादत को इख़्तियार करना चाहिये जिसका दर्जा नमाज़ों से अफ़ज़ल और आला हो।

मिसाल के तौर पर एक अमल करने से सिर्फ़ एक रुपिये का फ़ाइदा होता है और दूसरा एक अमल ऐसा है जिसके करने से एक सौ का फ़ाइदा होता है। ग़ौर कीजिये कि अक़्ले सलीम रखने वाला कौनसे फ़ाइदे को क़ुबल करेगा? ज़ाहिर है कि हर अक़्लमंद इन्सान एक सौ रुपिये के फ़ाइदे की तमन्ना करेगा और बड़े फ़ाइदे ही को क़ुबूल करेगा।

इसी उसूल (नियम) के तहत तहज्जुद की नमाज़ के सिवाय दीगर तमाम नफ़िल नमाज़ों के पढ़ने से सिर्फ़ सवाब हासिल होता है मगर अल्लाह तआला का ज़िक्र नफ़िल नमाज़ों से कहीं बढ़कर अफ़ज़ल और आला है जिसको ख़ुद अल्लाह तआल ''अक्बर'' (सब से बड़ा) फ़रमाता है। चुनांचे क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला का साफ़ इरशाद है कि

وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ ط اِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِط وَلَذِكْرُ اللّٰهِ اَكْبَرُط

यानि और नमाज़ क़ाइम करो बेशक नमाज़ बेहयाइ और बुरे कामों से रोकती है और अलबत्ता अल्लाह का ज़िक्र बहुत बड़ा है। *(अल अनकबूत-४५)*

ग़ौर कीजिये कि अल्लाह तआला ने इस आयते करीमा में पहले जिन नमाज़ौं के क़ाइम करने का हुक्म दिया है वह फ़र्ज़ नमाज़ें हैं और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की इत्तिबा में वह नमाज़ें हैं जिनको सुन्नत कहा जाता है। इस तरह पाँच वक़्त की नमाज़ें फ़राइज़ और सुन्नतौं पर मुश्तमल हैं। उन नमाज़ौं की तासीर (प्रभाव) और नताइज (परिणाम) भी बयान फ़रमादिये कि ''नमाज़'' से बेहयाइ और बुरे कामौं से हिफ़ाज़त हासिल होती है।

उसके बाद जो इरशाद हो राह है वह ''ज़िक्रुल्लाह'' का इरशाद हो रहा है। हुक्म का लवाज़िमा यह है कि ज़िक्रुल्लाह को नमाज़ौं के साथ बयान किया जा रहा है।

ऐसी सूरत में यह बात साबित होती है कि फ़राइज़ और सुन्नतौं के अदा करने के बाद अल्लाह तआला का ज़िक्र करना चाहिये जो बुहत बड़ा है यानि नमाज़ौं से बढ़कर ज़िक्रुल्लाह का दर्जा और इन्आम है।

अब ग़ौर कीजिये कि फ़राइज़ और सुन्नत नमाज़ें अदा करने के बाद नफ़िल नमाज़ पढ़ना चाहिये जिसका दर्जा और इन्आम कमतर है या अल्लाह का ज़िक्र करना चाहिये जिसका दर्जा और इन्आम अफ़ज़ल और आला है।

ज़ाहिर है कि हर अक़्ले सलीम (उचित मनीषा) रखने वाला इन्सान ऐसे ही अमल को क़ुबूल करेगा जिसका दर्जा और इन्आम अफ़ज़ल और आला (सर्वश्रेष्ठ) है। इस फ़ित्री तक़ाज़े के अलावा इरशाद और अहकामे रब्बुल आलमीन के एतिबार से तो हर मोमिन को बदर्जए ऊला उस इरशाद पर अमल करना चाहिये।

इसी लिये महेदवी पाँच वक़्त की फ़राइज़ और सुन्नत नमाज़ें अदा करने के बाद नफ़िल नहीं पढ़ते बल्कि अल्लाह का ज़िक्र करते हैं जिसके

करने का हुक्म क़ुरआने हकीम से साबित है और जिसका दर्जा और इन्आम नफ़िल नमाज़ से अफ़ज़ल और आला है।

ज़िक्रुल्लाह की फ़र्ज़ियत और उसका इन्आम

استغفر اللّٰہ *अस्तग़फ़िरुल्लाह, अस्तग़फ़िरुल्लाह* सिर्फ़ समझने के लिये बिला तश्बीह यह कि

अल्लाह तआला ने क़ुरआने मजीद में कहीं यह नहीं फ़रमाया कि ''तुम मेरी नमाज़ पढ़ो और मैं तुम्हारी नमाज़ पढूंगा''।

सिर्फ़ अपने बन्दौं को नमाज़ अदा करने या नमाज़ क़ाइम करने का हुक्म *अक़िमिस्सलात* फ़रमाया है मगर *सुब्हानल्लाह व बिहम्दिही* कि ज़िक्र के सिलसिले में फ़रमाया कि فَاذْكُرُوْنِىْ اَذْكُرْكُمْ यानि तुम मुझे याद करो मैं तुमको याद करुंगा।

इस आयते करीमा के पहले हिस्से ***फ़ज़्कुरुनी*** में हुक्म होरहा है कि ''तुम मुझे याद करो''। क़ानूने उसूल और फ़िक़्ह के तहत जिस काम का हुक्म बसीग़ए अम्र (आदेश) दिया जाता है वह फ़र्ज़ का दर्जा रखता है। जिस तरह ***अक़िमिस्सलात*** ''नमाज़ क़ाइम करो'' के हुक्म से नमाज़ फ़र्ज़ है उसी तरह ***फ़ज़्कुरुनी*** ''मुझे याद करो'' के हुक्म से ज़िक्रुल्लाह फ़र्ज़ है।

चुनांचे हज़रत इमाम ज़ाहिद रहे० इसी आयत की तफ़सीर के सिलसिले में लिखते हैं कि ''हुसूले मक़सूद के लिये तमाम फ़राइज़ में ज़िक्रुल्लाह बड़ा फ़र्ज़ है''।

फिर इस आयते शरीफ़ा का दूसरा हिस्सा ***अज़्कुरुकुम*** ''मैं तुमको याद करुगां'' अल्लाह का ज़िक्र करने का इन्आम और सिला है।

इस तफ़सील से साबित हुआ कि जिस तरह नमाज़ फ़र्ज़ है उसी तरह ज़िक्रुल्लाह भी फ़र्ज़ है और ज़िक्रुल्लाह का मक़ाम किस क़दर बुलंद है और उसका इन्आम भी कितना बड़ा है, तो लाज़िम हुआ कि फ़र्ज़ और सुन्नत नमाज़ें अदा करने के बाद अल्लाह का ज़िक्र भी किया जाये ताकि अल्लाह तआला के हुक्म की पूरी पूरी ताअ्मील हो, वर्ना हुक्म में नक़्स यानि ख़राबी आयेगी। इसी लिये महेदवी पाँचों वक़्त के फ़राइज़ और सुन्नत नमाज़ें अदा करने के बाद अल्लाह का ज़िक्र भी करते हैं जो ऐन अहकामे रब्बुल आलमीन और हज़रत महबूबे रब्बुल आलमीन सल्ला० का इत्तिबा है।

ग़ौर का मक़ाम है कि जब अहकामे रब्बानी और इत्तिबाए हुज़ूर अकरम सल्ला० की पूरी पूरी ताअ्मील और तकमील होरही है और नफ़िल नमाज़ौं से कहीं अर्फ़ा (बहुत ऊंचा) और आला (सर्वोच्य) मक़ाम हासिल होरहा है तो फिर नफ़िल नमाज़ का क्या सवाल बाक़ी रहजाता है?

सलात् और ज़िक्रुल्लाह

बाज़ लोगौं का ख़याल यह है कि आयते करीमा

وَاَقِمِ الصَّلٰوۃَ ط اِنَّ الصَّلٰوۃَ تَنۡھٰی عَنِ الۡفَحۡشَآءِ وَالۡمُنۡکَرِ ط وَلَذِکۡرُ اللّٰہِ اَکۡبَرُ ط

में जो ज़िक्रुल्लाह बयान किया गया है उस से मुराद नमाज़ ही है, क़तअन् सही नहीं है, क्योंकि नमाज़ अलग चीज़ है जिसका बयान और असर अलाहिदा है और ज़िक्रुल्लाह अलग चीज़ है जिसका ज़िकर और मर्तबा अलाहिदा बयान किया गया है। नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह दो अलग अलग आमाल हैं हरगिज़ एक नहीं हो सकते।

क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला ने ख़ुद नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह अलग करके वज़ाहत फ़र्मादी है। चुनांचे इरशाद होता है कि فَاِذَا قَضَیۡتُمُ الصَّلٰوۃَ فَاذۡکُرُوا اللّٰہَ قِیَامًا وَّقُعُوۡدًا وَّعَلٰی جُنُوۡبِکُمۡ ۝ (النساء۱۰۳) यानि "फिर जब

तुम नमाज़ अदा करचुको तो अल्लाह का ज़िक्र करो खड़े भी, बैठे भी और लेटे भी''।

हम यहाँ इस आयते करीमा की पूरी तफ़सीर या उसके जुम्ला गोशों का बयान नहीं करेंगे जो ज़िक्रे दवाम से मुतअल्लिक़ हैं बल्कि यहाँ सिर्फ़ इतना बतादेना है कि नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह एक चीज़ नहीं है बल्कि अलग अलग आमाल हैं।

चुनांचे ग़ौर कीजिये कि अल्लाह तआला ***''फ़इज़ा''*** की शर्त के साथ फ़रमा रहा है यानि ''फिर जब तुम'' ***क़ज़ै तुमुस् सलात*** ''न्माज़ अदा करचुको'' यानि फ़र्ज़ और सुन्नतें अदा करचुको तो ***फ़ज़्कुरुल्लाह*** ''अल्लाह का ज़िक्र करो''। इस से साबित हुआ कि नमाज़ अलग चीज़ है और ज़िक्रुल्लाह अलाहिदा चीज़ है। नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह दोनों एक नही हैं।

दूसरी बात यह भी साबित होती है कि नमाज़ अदा करलेने के बाद अल्लाह का ज़िक्र करना फ़र्ज़ है क्योंकि नमाज़ अदा करने के बाद अल्लाह का ज़िक्र करना फ़र्ज़ है। रब्बुल आलमीन के इसी हुक्म के तहत महेदवी नमाज़ अदा करने के बाद अल्लाह का ज़िक्र भी करते हैं जिस से अल्लाह तआला के अहकाम (फ़राइज़) की ताअ्मील (आज्ञा पालन) और तकमील (पूर्ति) होती है।

आख़िर में हम उस हदीसे क़ुदसी को बयान करके ''महेदवी नफ़िल नमाज़ क्यों नहीं पढ़ते'' के जवाब को ख़त्म करेंगे जिसको तब्रानी और अबू नुएम के हवाले से तफ़सीर ''अद दुर्रुल मन्सूर'' में आयते करीमा فَاذْكُرُوْنِىْ اَذْكُرْكُمْ ''*फ़ज़्कुरुनी अज़् कुरुकुम*'' के तहत यह हदीसे क़ुदसी लिखी है कि ''हज़रत अबू हुरेरा रज़ी० हज़रत नबी सल्ला० से रिवायत करते हैं कि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि ऐ इब्ने आदम जब

तू मुझे याद करता है तो मेरा शुक्र करता है और जब मुझे भूल जाता है तो मुझ से काफ़िर हो जाता है''।

ग़ौर का मक़ाम है कि अल्लाह तआला का क़ुरआने हकीम में साफ़ अलफ़ाज़ में नमाज़ और ज़िक्रुल्लाह की सराहत के साथ अल्लाह का ज़िक्र करने का हुक्म हो रहा है और फ़र्माने हदीसे क़ुदसी से ज़िक्रुल्लाह की अहमियत और ताकीद साबित हो रही है। ऐसी सूरत में फ़र्ज़ और सुन्नत नमाज़ें अदा करने के बाद नफ़िल नमाज़ें पढ़ना चाहिये या अल्लाह का ज़िक्र करना चाहिये? ज़ाहिर और साबित है कि अल्लाह का ज़िक्र करना चाहिये ताकि मत्लूब और मक़सूद हासिल हो। *वमा अलैना इल्लल बलाग़*

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِیَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : नमाज़ की हक़ीक़त क्या है?

जवाब : इस सवाल के जवाब से पहले बाज़ चीज़ों पर ग़ौर करलेना ज़रुरी है। अव्वल ख़ुद इन्सान पर ग़ौर किया जाये तो मालूम होगा कि इन्सान जिस्म और रूह दो चीज़ों से बनाया गया है। रुह के बग़ैर जिस्म बेकार और मुर्दा है और जिस्म के बग़ैर रुह ज़ाहिर नहीं हो सकती, तो मालूम हुआ कि जिस्म और रूह लाज़िम और मल्ज़ूम हैं। जिस्म (शरीर) और रुह (प्राणवायु) के मज्मूए का नाम ''इन्सान'' है।

इसी तरह नमाज़ की भी दो कैफ़ियतें हैं। एक जिस्मनी नमाज़ और दूसरी रुहानी नमाज़। जिस तरह आज़ाए जिस्मानी नमाज़ में मसरुफ़ रहते हैं उसी तरह रुह भी नमाज़ में मश्ग़ूल रहना चाहिये। जिस तरह जिस्मानी नमाज़ के लिये निय्यत करना शर्त है उसी तरह रुहानी नमाज़ के लिये भी निय्यत और तसव्वुर लाज़िमी है।

चुनांचे मसअलए एहसान (दीदार) की यह हदीस शरीफ़ इसकी साफ़ दलील है। قال فاخبرنی عن الاحسان قال ان تعبد الله کانک تراه فان لم تکن تراه فانه یراک हज़रत उमर फ़ारुक़ रज़ी० से रिवायत है कि पूछा उस शख़्स (हज़रत जिब्रईल अले०) ने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से कि ख़बर दीजिये मुझे कि एहसान क्या है? आप सल्ला० ने फ़रमाया कि ''अल्लाह की इस तरह इबादत कर कि तू उसको देख रहा है पस अगर तू उसको न देख सके तो (इस यक़ीन से इबादत कर कि) वह तुझको देख रहा है''। (मिश्कात शरीफ़)

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस इरशाद (कथन) से साबित हो रहा है कि बन्दा जिसकी इबादत कर रहा है यानि नमाज़ पढ़ रहा है उसको देखकर यानि अल्लाह तआला को देखकर नमाज़ अदा करे। इसी मक़ाम को मन्ज़िले मुशाहदा कहते हैं। और अगर बन्दे में उतनी रुहानी क़ुव्वत न हो तो कम अज़् कम इस यक़ीने कामिल (पूर्ण विश्वास) के साथ नमाज़ अदा करनी चाहिये कि जिसकी नमाज़ अदा की जा रही है वह (अल्लाह) उसको देख रहा है। इसी को मक़ामे तसव्वुर और मन्ज़िले मुराक़बा (ध्यान मग्नता) कहते हैं।

याद रहे कि देखने और तसव्वुर जमाने का काम रूह का है जिस्म का नहीं है। सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिहि कि नमाज़ की हक़ीक़त और रूहानी शान क्या ही दिलकश् (मनोहर) और आला है। हुज़ूरे अकरम हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० फ़र्माते हैं कि اَلْوُضُوْءُ اِنْفِصَالٌ وَالصَّلٰوةُ اِتِصَالٌ यानि वुज़ू तमाम मासिवल्लाह (अल्लाह के सिवा हर चीज़) से दूरी का नाम है। जब बन्दा वुज़ू करता है तो गोया तमाम मासिवल्लाह से दूर होकर तमाम ख़्वाहिशात (कामना) और लज़्ज़ात (आनंद) से हाथ धोकर अल्लाह तआला के दरबार में जाता है। नमाज़ बन्दे को अल्लाह तआला से मुत्तसिल (क़रीब) करदेती है। इन्सान की ज़िन्दगी का असली मन्शा (मूल उद्देश) और हक़ीक़ी मक़्सूद अल्लाह तआला का वस्ल (मिलन) है जिसको दूसरे शब्दों में अल्लाह तआला का दीदार (दर्शन) कहते हैं। यही नमाज़ की हक़ीक़त है वह ऐसी ही नमाज़ से हासिल होता है। ऐसे ही नमाज़ियों की तरीफ़ में अल्लाह तआला फ़र्माता है कि اَلَّذِيْنَ هُمْ عَلٰى صَلَوٰتِهِمْ دَائِمُوْنَ यानि ''वह अपनी नमाज़ पर हमेशा रहने वाले हैं।'' फिर फ़रमाता है وَالَّذِيْنَ هُمْ عَلٰى صَلَوٰتِهِمْ يُحَافِظُوْنَo यानि ''वह अपनी नमाज़ की हिफ़ाज़त करने वाले हैं'' (अल मोमिनून्-९)।

इसका मत्लब यह है कि ऐसे नमाज़ी अपनी नमाज़ों की शिर्क और कुफ़्रे बातिनी से हिफ़ाज़त करते हैं और दीदारे रब्बुल आलमीन में आने वाले हर क़िसम की रूकावटों से हिफ़ाज़त करते हैं।

अब यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि शिर्के बातिनी और कुफ़्रे बातिनी क्या है? उस से हिफ़ाज़त कैसे की जाती है? उसके जवाब और तफ़सीलात को आयन्दा बयान किया जायेगा। अब हम अस्ल मौज़ूअ (विषय) पर आते हैं कि अगर सिर्फ़ जिस्मानी नमाज़ शराइते नमाज़ के तहत अदा करली जाये और उसमें रूहानी नमाज़ का तसव्वुर (कल्पना) और रूहानियत का कैफ़ (आनंद) नहो तो ऐसी नमाज़ का दर्जा और मक़ाम क्या होगा, इक़बाल की ज़बान से सुन लीजिये।

तेरा इमाम बे हुज़ूर, तेरी नमाज़ बे सुरुर

ऐसी नमाज़ से गुज़र, ऐसे इमाम से गुज़र

ऐसी नमाज़ों का जिस में रूहानी तसव्वुर और कैफ़ो सुरुर नहो बल्कि ग़फ़लत से अदा की जा रही हो और ऐसे नमाज़ियों के लिये क़ुरआने हकीम का इर्शाद (आदेश) सुन लीजिये कि क्या फ़रमा रहा है فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّيْنَ الَّذِيْنَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُوْنَ (الماعون۵) यानि ''फिर ऐसे नमाज़ियों के लिये अज़ाब है जो अपनी नमाज़ों से ग़ाफ़िल हैं''।

ग़फ़लत और बेख़बरी ही बरबादी और तबाही का बाइस (कारण) है। ग़फ़लत और बेख़बरी कब होती है जबकि रूह नहो। इस लिये ज़रूरी है कि जिस्मानी और रूहानी दोनों हैसियत से नमाज़ मुकम्मल अदा की जाये। तमाम आज़ाए जिस्मानी भी नमाज़ अदा करें और रूह भी नमाज़ में मश्ग़ूल हो ताकि इबादत का हक़ पूरा पूरा अदा हो और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इर्शाद के मुवाफ़िक़ الصلوٰة معراج المومنين ''नमाज़ मोमिन की मेराज है'' का दर्जा हासिल हो।

यहाँ यह सवाल पैदा किया जासकता है कि ऐसी मुकम्मल नमाज़ कैसे और किस तरह अदा की जाती है उसकी तालीम और उसका तरीक़ा क्या है?

उसका जवाब यही दिया जा सकता है कि किसी कामिल पीरे तरीक़त के दामन से वाबस्ता होकर उसकी तालीम हासिल करनी चाहिये।

इस मक़ाम पर यही कहा जायेगा कि वही मशायख़ीन वाली बात कहदी और मुरीदों को टटोलने का तरीक़ा इख़्तियार किया। नहीं नहीं यह ख़याल सरासर बातिल है। क्या कोइ साबित कर सकता है कि कोइ शख़्स किसी हाज़िक़ तबीब (प्रवीण वैद्य) या कामिल हकीम की ख़िदमत से वाबस्ता हुए बग़ैर और तालीम और तज्रिबा (अनुभव) हासिल किये बग़ैर हकीम या डाक्टर बन सकता है? हर गिज़ नहीं बन सकता। क़ुरआने हकीम भी यही रहबरी फ़र्माता है। चुनांचे क़ुरआने हकीम का साफ़ इर्शाद है कि

يَا أَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْٓا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ وَجَاهِدُوْا فِىْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ○ (سورہ المائدۃ آیت ۳۵)

यानि ''ऐ ईमान वालो अल्लाह से डरो और तलाश करो उसकी तरफ़ वसीला और कोशिश और मेहनत करो उसकी राह में ताकि फ़लाह (कल्याण) को पहुंचो''।

इस आयते करीमा में اٰمَنُوا ***आमनू*** से क़ुरआन और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की अहादीसे सहीहा पर ईमान लाना मुराद है। ऐसे ही ईमान लाने वाले मोमिनीन को अल्लाह तआला मुख़ातिब करके फ़र्मा रहा है اتَّقُوا اللّٰه ***इत्तक़ुल्लाह*** यानि अल्लाह से डरो के हुक्म में तमाम अवामिर (आज्ञा) और नवाही (मनाही) शामिल हैं जिनकी ताअ्मील (प्रतिपालन) मोमिनीन पर फ़र्ज़ है।

وَابْتَغُوْٓا اِلَيْهِ الْوَسِيْلَةَ ***वब्तग़ू इलैहिल् वसीलत*** से पीरे कामिल से बैअत मुराद है यानि पीरे कामिल की ज़ात वसीला (साधन) है इस लिये तलाश करो और ढूंडो उसकी तरफ़ वसीला। तलाश करो इस बात का साफ़ इशारा है कि पीरे कामिल तलाश करो। पीरे नाक़िस (अपूर्ण धर्म गुरू) और पीरे रस्मी (औपचारिक धर्म गुरू) इस रास्ते में काम नहीं देसकता और मक़सूद हासिल नहीं हो सकता। وَجَاهِدُوْا *वजाहिदू* से रियाज़त (तपस्या) और मुजाहिदए नफ़्स मुराद है سَبِيْلِهٖ *सबीलिही* से माअरिफ़ते इलाही का रास्ता मुराद है।

ख़ुलासा यह कि पीरे कामिल से बैअत करके मुर्शिदे कामिल के इरशाद के मुताबिक़ माअरिफ़ते इलाही के हासिल करने के लिये रियाज़त और मुजाहिदए नफ़्स में मश्ग़ूल रहो ताकि दीदारे इलाही से जो फ़लाहे अबदी (अनन्तकालीन उपकार) है मुशर्रफ़ हो। पस जो शख़्स मुर्शिदे कामिल से बैअत का मुन्किर होगा वह सुन्नत और नस्से क़ुरआनी का इन्कार करने वाला होगा। ***नऊज़ु बिल्लाहि मिन् शर्रि नफ़्सिहि***

लिहाज़ा क़ुरआने हकीम से साबित हुआ कि अल्लाह तआला की माअरिफ़त इरफ़ान के रास्ते में वसीला लाज़िमी और ज़रूरी है।

हम उसकी तफ़सीली बहस वसीला के उन्वान के तहत आयन्दा करेंगे इन्शा अल्लाहु तआला। यहाँ ऐसे ख़यालात का मज़ीद जवाब हज़रत जलालुद्दीन मौलाए रूम रहे० की ज़बान से देकर इस बहस को ख़त्म करते हैं।

ہیچ چیزے خود بخود چیزے نہ شُد
ہیچ آہن خود بخود تیغے نہ شُد
مولوی ہر گز نہ شُد مُلائے روم
تا غلامِ شمس تبریزے نہ شد

यानि हज़रत मौलानाए रूम रहे० फ़र्माते हैं कि कोइ चीज़ ख़ुद बख़ुद चीज़ें (वस्तु) नहीं बन जाती तावक़्तेकि उसका कोइ बनाने वाला नहो। कोइ

लोहे का तुकड़ा ख़ुद बख़ुद (स्वतः) तेग़ (तलवार) नहीं बन जाता जब तक कि उसका बनाने वाला नहो। वह लोहा जबतक लोहार के हाथ में न जाये तेग़ नहीं बन सकता और तेग़ की शान पैदा नहीं कर सकता। उसी तरह मौलाए रूम (यानि ख़ुद) मौलवी नहीं हुआ जबतक कि वह हज़रत शम्स तब्रेज़ रहे० का ग़ुलाम न हुआ।

देखा आपने एक जलीलुल क़दर वली अल्लाह क्या फ़र्मारहे हैं। इन्ही असरार को मद्दे नज़र रखते हुवे हज़रत इमामुना महेदी मौऊद अले० ने सुहबते सादिक़ को फ़र्ज़ फ़र्माया। यहाँ सादिक़ से मुराद पीरे कामिल ही है।

ज़िक्रुल्लाह की अहम्मियत और फ़ज़ाइल

क़ुरआने हकीम और अहादीसे सहीहा में अकसरो बेशतर मक़ामात पर ज़िक्रुल्लाह की अहम्मियत (महत्व) बयान की गइ है जिस से ज़िक्रुल्लाह के फ़ज़ाइल (प्रधानता) उसके असरातो नताइज (प्रभाव और परिणाम) और ताकीद (आग्रह) ज़ाहिर होती है और उसकी फ़रज़ियत का इज़्हार होता है यहाँ हम मुख़्तसर तौर पर लिखते हैं।

१) तफ़सीर *मआलिमुत तंज़ील* में आयते करीमा وَلَذِكْرُ اللّٰهِ اَكْبَرُ *वलज़िक्रुल्लाहि अकबर* के सिलसिले में यह हदीस शरीफ़ बयान की गइ है।

''जो लोग अल्लाह के ज़िक्र के लिये बैठते हैं उन्हें मलाइका (फ़रिश्ते) घेर लेते हैं और अल्लाह की रहमत उन्हें ढाँप लेती है और उनपर सकीना (सुकूने क़ल्बो रूह) नाज़िल होता है और अल्लाह तआला अपने पास रहने वाली मख़लूक़ में उनका ज़िकर करता है''।

इस हदीसे शरीफ़ से चार बातें साबित हो रही हैं।

❖ ज़िक्रुल्लाह करने और ज़िक्र में बैठने वालौं का कितना बुलंद दर्जा और मक़ाम है मालूम हो रहा है।

- ज़िक्रुल्लाह की फ़ज़ीलत यह है कि अल्लाह के ज़िक्र में बैठने वालौं को फ़रिश्ते घेर लेते हैं और अल्लाह तआला की रहमत उनको ढ़ाँप लेती है।

- ज़िक्रुल्लाह करने वालौं पर सकीना यानि रूह और क़ल्ब को सुकून हासिल होता है जो अल्लाह तआला की एक ख़ास रहमत है।

- अल्लाह तआला उन ज़िक्रुल्लाह करने वालौं का ज़िकर अपने पास रहने वाली मख़लूक़ में करता है। अल्लाह तआला के पास रहने वाली मख़लूक़ कौन यानि उसके ख़ास मुक़र्रब (समीपस्थ) फ़रिश्ते जिनको नूर से पैदा फ़रमाया है। सुब्हानल्लाहि व बिहम्दिहि कि अल्लाह का ज़िक्र करने की वज्ह से ख़ाकी (मट्टी का बना हुआ) बन्दौं का ज़िकर ख़ुद अल्लाह तआला नूरी मख़लूक़ में फ़रमाता है।

२) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''क़ियामत के दिन सब बन्दौं में दर्जात के लिहाज़ से ज़्यादा अफ़ज़ल (सर्वश्रेष्ठ) अल्लाह का ज़िक्रे कसीर करने वाले हैं''। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

३) हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''ज़िक्रुल्लाह की मुहब्बत अल्लाह तआला की मुहब्बत की अलामत है और ज़िक्रुल्लाह से बुग़्ज़ (शत्रुता) रखना अल्लाह तआला से बुग़्ज़ रखने की अलामत है''।

नमाज़ का सिला (बदला) दोज़ख़ से छुटकारा और जन्नत ठिकाना है और ज़िक्रुल्लाह का सिला और इन्आम अल्लाह तआला की मुहब्बत है जो हज़ार जन्नतौं से बेहतर है।

४) हज़रत सर्वरे कौनैन रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि ''नमाज़े फ़ज्र के बाद से तुलूए आफ़ताब तक एक जमाअत के साथ ज़िक्र करते रहना मुझे दुनिया व माफ़ीहा से ज़्यादा महबूब है और नमाज़े असर के बाद

से ग़ुरूबे आफ़ताब तक एक जमाअत के साथ ज़िक्र करते रहना मुझे दुनिया व माफ़ीहा से ज़्यादा महबूब है''। (कंज़ुल उम्माल)

इस हदीस शरीफ़ से ज़िक्रुल्लाह करने के औक़ात मालूम हो रहे हैं कि नमाज़े फ़ज्र के बाद से सूरज निकलने तक और नमाज़े असर के बाद से सूरज डूबने तक अल्लाह का ज़िक्र लाज़िमी तौर पर करना चाहिये, क्योंकि उन औक़ात में अल्लाह का ज़िक्र करने को दुनिया और उसमें जो कुछ है उन सब से ज़्यादा महबूब बताया गया है। उनही औक़ात को सुल्तानुल् लैल् और सुल्तानुन् नहार कहते हैं।

यह हदीस शरीफ़ अल्लाह तआला के फ़रमान की गोया तफ़सीर कर रही है। चुनांचे क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला का साफ़ इर्शाद और हुक्म (आदेश) है कि وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّکَ قَبْلَ طُلُوْعِ الشَّمْسِ وَقَبْلَ غُرُوْبِهَا (सूरह ط आयत १३०) यानि ''और अपने रब की हम्द (नमाज़) के साथ तस्बीह (ज़िक्र) कीजिये आफ़ताब निकलने से पहले और उसके डूबने से पहले''।

चुनांचे महेदवी उन औक़ात में बमूजिब इर्शाद हज़रत बन्दगी मियाँ सय्यद महमूद ख़ातिमुल मुर्शिदीन रहे० लाज़िमी तौर पर अल्लाह का ज़िक्र करते हैं जो ऐन इत्तिबाए हुक्मे क़ुरआनी और अमले हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० है। अहादीसे सहीहा और क़ुरआने हकीम से ज़िक्रुल्लाह की फ़ज़ीलत, फ़रज़ियत, दरजात और इन्आमाते आलिया साबित होगये।

अब अल्लाह का ज़िक्र न करने वालौं की निस्बत क़ुरआने हकीम मे इर्शादात और अल्लाह तआला की वईद (नाराज़गी) भी देख लीजिये। चुनांचे क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला का इर्शाद है कि فَوَيْلٌ لِّلْقٰسِيَةِ قُلُوْبُهُمْ مِّنْ ذِكْرِ اللّٰهِ اُولٰٓئِکَ فِیْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ (सूरह ज़मर आयत २२) यानि ''फिर अज़ाब है उन लोगौं के लिये जिनके दिल ज़िक्रुल्लाह से ग़फ़लत के कारण सख़्त होगये हैं यह लोग खुली गुमराही में हैं''।

इस आयते करीमा से साबित होता है कि ज़िक्रुल्लाह करने से दिल की सख़्ती, दिल की कजी (टेढ़ापन) दिल की गुमराही जाती रहती है। नफ़्स की पाकी और तहारत हासिल होती है और क़ल्ब का तस्फ़िया (शुद्धि) होता है जो असल इबादत की रूह है। ज़िक्रुल्लाह से ग़फ़लत करने का नतीजा दिल सख़्त और बद बख़्त (दुर्भागी) हो जाते हैं और इन्सान खुली गुमराही में फंस जाता है।

अल्लाह तआला का क़ुरआने हकीम में हर्शाद है कि

وَمَنْ اَعْرَضَ عَنْ ذِكْرِىْ فَاِنَّ لَهٗ مَعِيْشَةً ضَنْكًا وَّنَحْشُرُهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَعْمٰى
(سورہ طٰہٰ آیت ۱۲۴)

यानि ‘‘जो शख़्स मेरे ज़िक्र से रूगर्दनी (मुहं पलटाना) करता है तो उसकी ज़िन्दगी तंगी में गुज़रेगी और हम उसको क़ियामत के दिन अंधा उठायेंगे।

इस आयते करीमा से साफ़ साबित होरहा है कि अल्लाह तआला के ज़िक्र से मुहं मोड़ने वालौं से अल्लाह तआला किस क़दर नाराज़ हैं और ज़िक्रुल्लाह न करने की सज़ा का भी एलान हो रहा है कि उनको क़ियामत के दिन अंधा उठाया जायेगा।

आँखौं से महरूम यानि अंधा करदिया जाना ख़ुद एक सज़ा है। उस अंधा करदिये जाने की सज़ा में और एक सज़ा पोशीदा है जो निहायत बदतरीन है। वह यह कि ज़िक्रुल्लाह न करने वालौं को क़ियामत के दिन जब अंधा उठाया जायेगा तो अंधे यक़ीनन् अपने परवरदिगार को नहीं देख सकेंगे गोया अल्लाह तआला के दीदार से महरूम कर दिये जायेंगे।

उसके अलावा इस आयते करीमा से यह नतीजा भी निकल रहा है कि अल्लाह का ज़िक्र करने वालौं को अल्लाह तआला क़ियामत के दिन बीना (आंख वाला) उठायेगा और वह अल्लाह तआला को देखेंगे यानि ज़िक्रुल्लाह करने वालौं को अल्लाह तआला का दीदार होगा। गोया ज़िक्रुल्लाह

करने का ज़बरदस्त सिला और इन्आम अल्लाह तआला का दीदार है जो किसी और इबादत से सिवाय ज़िक्रुल्लाह के हासिल नहीं हो सकता।

इस तमाम तफ़सील का ख़ुलासा यह है कि

१) नमाज़ सिर्फ़ ज़ाहिरी हैसियत ही से अदा न की जाये बल्कि ज़ाहिरी और बातिनी यानि जिस्मानी और रूहानी दोनों हैसियत से अदा होना चाहिये ताकि اَلصَّلٰوةُ مِعْرَاجُ الْمُؤْمِنِيْنَ ''नमाज़ मोमिनीन की मेराज है'' का दर्जा हासिल हो।

२) ग़फ़लत की नमाज़ क़ुबूल नहीं होगी और ग़फ़लत से नमाज़ अदा करने वाले नमाज़ियौं के लिये अज़ाब है।

३) नमाज़ अलग चीज़ है और ज़िक्रुल्लाह अलग चीज़ है दोनों एक नहीं हैं।

४) ज़िक्रुल्लाह की अहम्मियत फ़ज़ीलत और फ़रज़ियत क़ुरआने हकीम और अहादीसे सहीहा हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से साबित है।

५) बन्दा फ़र्शे ज़मीन पर अल्लाह तआला का ज़िक्र करता है तो अल्लाह तआला अर्श पर उस बन्दे का ज़िकर फ़रमाता है।

६) ज़िक्रुल्लाह करने वाले ज़ाकिरीन को जब वह ज़िक्रुलाह में बैठते हैं तो फ़रिश्ते घेर लेते हैं और अल्लाह तआला की रहमत उनको ढाँप लेती है।

७) ज़िक्रुल्लाह करने वालौं का ज़िकर अल्लाह तआला अपने पास रहने वाली नूरी मख़लूक़ में फ़रमाता है।

८) ज़िक्रुल्लाह करने वाले बन्दौं के दर्जात क़ियामत के दिन सब से ज़्यादा अफ़ज़ल होंगे।

९) अल्लाह तआला की इताअत अलग चीज़ है और अल्लाह तआला की मुहब्बत अलग चीज़ है।

१०) अल्लाह तआला की इताअत अहकामे फ़राइज़ और अवामिरो नवाही का आज्ञा पालन है और अल्लाह तआला की मुहब्बत अल्लाह तआला का ज़िक्र है।

११) ज़िक्रुल्लाह करने वाले अल्लाह तआला से मुहब्बत करने वाले होते हैं।

१२) नमाज़ और दीगर अहकाम की इताअत का बदला जन्नत है जो अल्लाह तआला की एक मख़लूक़ है।

१३) ज़िक्रुल्लाह का बदला और इन्आम अल्लाह तआला की मुहब्बत है जिसका तअल्लुक़ ख़ास अल्लाह तआला की ज़ात से है।

१४) पाँच वक़्त की नमाज़ौं के ख़त्म पर ज़िक्रुल्लाह करना फ़र्ज़ है।

१५) अल्लाह का ज़िक्र करने से नफ़्स को पाकी और तहारत हासिल होती है और शिर्के ख़फ़ी से छुटकारा मिलता है। क़ल्ब (मन) का तस्फ़िया (शुद्धि) होता है और रूह को बुलंदी नसीब होती है।

१६) नमाज़े फ़ज्र के बाद से सूरज निकलने तक और नमाज़े असर के बाद से सूरज डूबने तक अल्लाह का ज़िक्र करना काइनाते आलम से ज़्यादा महबूब बताया गया है और यह क़ुरआने हकीम से भी साबित है।

१७) ज़िक्रुल्लाह करने से बीनाइए रब और नूरे बसीरत हासिल होता है और उसका बदला और इन्आम अल्लाह तआला का दीदार है।

ज़िक्रुल्लाह न करने वालौं के लिये वईद

१) ज़िक्रुल्लाह न करना और अल्लाह तआला के ज़िक्र से बुग़्ज़ (दुश्मनी) रखना और मुंह मोड़ लेना गोया अल्लाह तआला से दुश्मनी करने के बराबर है।

२) ज़िक्रुल्लाह से ग़फ़लत का नतीजा दिल की सख़्ती और कजी (तेढ़ा पन) है।

३) ज़िक्रुल्लाह न करने से इन्सान खुली गुमराही में फंस जाता है।

४) ज़िक्रुल्लाह न करने वालौं को सख़्त अज़ाब दिया जायेगा।

५) ज़िक्रुल्लाह से ग़फ़लत करना ऐसा है जैसा अल्लाह तआला से कुफ़्र करना।

६) ज़िक्रुल्लाह से मुंह फेर लेने का नतीजा सख़्त तरीन अज़ाब है।

७) ज़िक्रुल्लाह से मुंह मोड़ने का नतीजा रिज़्क़ की तंगी, मुफ़्लिसी और नादारी है।

८) ज़िक्रुल्लाह से मुंह मोड़ने का नतीजा यह है कि क़ियामत के दिन अंधा उठाया जायेगा।

९) ज़िक्रुल्लाह से मुंह मोड़ने और ग़फ़लत का नतीजा यह है कि अल्लाह तआला का दीदार नसीब नहीं होगा।

क़ुरआने करीम और अहादीसे सहीहा हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से साबित है कि ज़िक्रुल्लाह हर हालत और हर वक़्त में फ़र्ज़ है, क्योंकि उन सब आयाते क़ुरआनी में ज़िक्रुल्लाह करने का हुक्म बसीग़ए अम्र (आदेशात्मक) दिया गया है और ताकीद के साथ हुक्म दिया गया है। ताकीद और वईद (सज़ा का वादा) का यह एहतिमाम इस बात की खुली दलील है कि ज़िक्रुल्लाह अहम तरीन (महत्व पूर्ण) फ़र्ज़ है।

ज़िक्रुल्लाह न करने वालौं की निस्बत इताब (कोप) और अज़ाब की वईदात से भी ज़ाहिर और साबित होता है कि ज़िक्रुल्लाह की फ़रज़ियत किस क़दर अहम है। इन हर दो अहकाम से ज़िक्रुल्लाह की फ़रज़ियत तस्लीम करना उसूले शरईया में दाख़िल है और हर मोमिन और मुत्तक़ी (संयमी) के लिये उस पर एतिक़ाद और अमल लाज़िम है।

इन ही अहकामे क़ुरआनी और इर्शादाते सरवरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के तहत हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद इमामे आख़िरुज़् ज़माँ ख़लीफ़तुर् रहमान अले० ने ज़िक्रुल्लाह को फ़र्ज़ फ़रमाया।

इसी हुक्म की इत्तिबा में महेदवी पाँच वक़्त की नमाज़ें पाबंदी से अदा करने के बाद अल्लाह का ज़िक्र करते हैं।

उसके अलावा फ़ज्र की नमाज़ के बाद से सूरज निकलने तक और असर की नमाज़ के बाद से सूरज डूबने तक अल्लाह का ज़िक्र करते हैं, और जो लोग तहज्जुद की नमाज़ अदा करते हैं वह तहज्जुद की नमाज़ के बाद से फ़ज्र की नमाज़ तक साथ ही फ़ज्र की नमाज़ के बाद से सूरज निकलने तक ज़िक्रुल्लाह में मश्ग़ूल रहते है। इन तमाम औक़ात के अलावा ज़िक्रे दवाम का भी शुग़ल रखते हैं।

क़ुरबान जाइए हज़रत इमामुल काइनात सय्यदना महेदी मौऊद इमाम आख़िरुज़् ज़माँ पर कि नमाज़ों की तालीम और ज़िक्रुल्लाह की तलक़ीन से ऐसा फ़ैज़याब फ़रमाया कि जिसके ज़रीए इरफ़ान और माअरिफ़ते इलाही का रास्ता आसान से आसान तर होगया और इबादात और अज़्कारे इलाही में रिया (ढोंग) और ग़ैरुल्लाह का कोइ ख़याल भी दाख़िला नहीं पासकता।

ज़िक्रुल्लाह की हक़ीक़त

क़ुरआने मजीद में ज़िक्रुल्लाह के बारे में जिस क़दर आयाते शरीफ़ा हैं उनसे बाज़ उलमा और बाज़ मुफ़स्सिरीन ने आमाले इलाही का ज़िक्र मुराद लिया है यानि मौजूदाते आलम में अल्लाह तआला की क़ुद्रत के जो मज़ाहिर और निशानियाँ हैं उनमें ग़ौरो फ़िक्र करना और उनकी ख़ुसूसियतें बयान करना। ज़िक्रुल्लाह की आयाते करीमा से सिर्फ़ यही माना और मुराद लेना सही नहीं हो सकता क्योंकि क़ुरआने मजीद में इस्मे इलाही के ज़िक्र की साफ़ो सरीह (स्पष्ट) आयात मौजूद हैं। चुनांचे

وَاذْكُرِ اسْمَ رَبِّكَ (सूरह मुज़्ज़म्मिल आयत ८)

यानि ''तुम अपने रब के नाम का ज़िक्र करो ''(मुज़म्मिल-८)। इस्मे इलाही के ज़िक्र का साफ़ हुक्म हो रहा है।

इसके अलावा अल्लाह तआला का यह भी इर्शाद है कि

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِادْعُوا الرَّحْمٰنَ اَيًّامَّا تَدْعُوْ فَلَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى (बनी इसराईल-११०)

यानि ''कहदो (ऐ मुहम्मद सल्ला०) कि ख़्वाह अल्लाह कहकर पुकारो या रहमान कहकर जिस नाम से चाहो पुकारो उसके तमाम नाम अच्छे हैं'' (बनी इसराईल-११०)।

फिर तख़्सीस (विशेषता) और वज़ाहत के साथ अल्लाह तआला का इर्शाद है कि وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوْهُ بِهَا وَذَرُوا الَّذِيْنَ يُلْحِدُوْنَ فِيْٓ اَسْمَآئِهٖ (आराफ़-१८०) यानि ''अल्लाह के नाम अच्छे हैं उन नामों से उसको याद करो और जो लोग उसके नामों में इलहाद (कुफ़्र) करते हैं उनको छोड़ दो'' (आराफ़ १८०)।

क़ुरआने हकीम की इन आयाते करीमा से साबित है कि न सिर्फ़ आमाले इलाही का ज़िक्र बल्कि इस्मे ज़ात और इस्मे सिफ़ात के ज़िक्र करने और नामों से उसको याद करने का हुक्म हो रहा है।

क़ुरआने हकीम में अल्लाह तआला ने अपनी मख़लूक़ात की पैदाइश में जो ग़ौरो फ़िक्र करने रहबरी फ़रमाइ है उसका मक़सदो मत्लब ही यही है कि अल्लाह तआला की ज़ात और उसकी क़ुदरत और निशानियों का इर्फ़ान (ज्ञान) और माअरिफ़त हासिल हो।

हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० की बेसत और तश्रीफ़ आवरी का मक़सद इश्क़ो मुहब्बते इलाही की तालीम है। आप सल्ला० की तमाम तालीमात और अहकाम का मक़सद अल्लाह तआला का दीदार है जो ऐन मन्शाए तख़लीक़े इन्सानी और अहकामे क़ुरआनी की तकमील है।

अल्लाह तआला की याद को ज़िक्रुल्लाह कहते हैं। अल्लाह के ज़िक्र के कइ अश्काल हैं जिसमें अस्माए सिफ़ाते इलाही भी दाख़िल हैं।

अस्माए सिफ़ाते इलाही का ज़िक्र भी ज़िक्रुल्लाह ही कहलाता है मगर ग़ौर करो तो मालूम होगा कि हर इस्म (नाम) एक ख़ास सिफ़त (गुण) का मुज़्हिर (ज़ाहिर करने वाला) और उस ख़ास सिफ़त की हद तक महदूद (सीमित) है। उसके अलावा सिफ़ाते इलाही ज़ात के ताबे हैं मगर ज़ाते इलाही सिफ़ात के ताबे नहीं है। ज़ात ही से सिफ़ात का वुजूद है। यह भी है कि ज़ात का ज़ुहूर नहीं हुवा था तो ज़ाते इलाही अज़्ख़ुद (अपने आप) मौजूद थी। जब ज़ाते इलाही ने ज़ुहूर का इरादा फ़रमाया तो सिफ़ात का ज़ुहूर (प्रकटन) हुआ। इस लिहाज़ से अस्माए सिफ़ात के अज़्कार से इस्मे ज़ात का ज़िक्र अपनी कामिलियत (पूर्णता) के एतिबार से बदर्जए ऊला और अफ़ज़ल है।

इस हक़ीक़त पर ग़ौर करलीजिये कि तमाम सहाइफ़े आसमानी और कुतुबे समावी तौरेत, ज़बूर, इन्जील और क़ुरआन का ख़ुलासा (सारंश) क्या है?

तमाम कुतुब और सहाइफ़े आसमानी का ख़ुलासा सिर्फ़ ***ला इलाह इल्लल्लाह*** لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ है। अल्लाह तआला की जानिब से जितने भी अम्बिया और मुरसलीन अलैहिमुस्सलाम आये उसी कलिमए वहदत ***ला इलाह इल्लल्लाह*** को लेकर आये और तमाम मख़लूक़े इन्सानी को इसी कलिमए तौहीद की दावत दी हत्ता कि आक़ाए दोजहाँ फ़ख़्रे मौजूदात हुज़ूर सरवरे कौनैन हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० ने भी इसी कलिमए तौहीद ***ला इलाह इल्लल्लाह*** की दावत फ़रमाइ जो तमाम सहाइफ़े आसमनी और कुतुबे समावी का मक़सूद है।

इसी लिये हज़रत इमामुल काइनात इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने ज़िक्रुल्लाह के लिये ***ला इलाह इल्लल्लाह*** ही को मख़्सूस

फ़रमाया, इसी को ज़िक्रे ख़फ़ी कहते हैं। इसी कलिमए तौहीद ***ला इलाह इल्लल्लाह*** में ज़िक्रुल्लाह की हक़ीक़त पोशीदा है। ज़िक्रे ख़फ़ी की मंज़िल में ही ज़िक्रुल्लाह की हक़ीक़त का ज़ुहूर होता है और तौहीदे हक़ीक़ी नसीब होती है।

ज़िक्रे ख़फ़ी सय्यदुल अज़्कार है। ज़िक्रे ख़फ़ी से ज़ाते इलाही के सिवा और कोइ तअल्लुक़ नहीं हो सकता। दूसरे औराद और वज़ाइफ़ (जाप) में ग़ैरुल्लाह का तअल्लुक़ हो सकता है।

मिसाल के तौर पर يَا قَوِيُّ **या *क़वीय्यू*** का वज़ीफ़ा पढ़ा जाता है जिसका मक़सद रिज़्क़ में कुशादगी और मुफ़्लिसी का दूर करना है। इसी तरह अगर किसी को अपनी मुहब्बत में गिरफ़्तार करना हो या अपना गिरवीदा बनाना हो तो इस्म يَاوَدُوْدُ ***या वदूदु*** का वज़ीफ़ा पढ़ते हैं, और भी इसी क़िसम के औराद और वज़ाइफ़ हैं जिनके पढ़ने के मुख़्तलिफ़ तरीक़े और मुख़्तलिफ़ मक़ासिद हैं। अगरचे कि यह अल्लाह ही के नाम हैं मगर उनसे मक़सूद ख़ुदा नहीं है। इसी लिये ऐसे तमाम औराद और वज़ाइफ़ को हज़रत इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने मना फ़र्मा दिया। सिर्फ़ ज़िक्र لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ ***ला इलाह इल्लल्लाह*** की पाबन्दी फ़र्ज़ फ़र्मादी जिसमें ग़ैरुल्लाह का शायबा (शक) और तसव्वुर तक नहीं आ सकता।

अल्लाह तआला ने क़ुरआने हकीम में कइ मक़ामात पर साफ़ तौर पर फ़रमादिया है कि ज़िक्रुल्लाह और इबादात ख़ालिस अल्लाह तआला ही के लिये होना ज़रूरी है क्योंकि जिस मक़सद के लिये अमल किया जायेगा वही मक़सद उसका मक़सूद और माअबूद क़रार पायेगा।

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم

نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم

وَالۡمَهۡدِیَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

सवाल : ज़िक्रे ख़फ़ी किस को कहते हैं?

जवाब : ज़िक्रुल्लाह के यूँ तो कई अक़साम और कई तरीक़े हैं जिनमें से सूफ़ियाए किराम ने पाँच तरीक़ों का ख़ास तौर पर ज़िकर किया है जो दर्जे ज़ेल हैं।

१) ज़िक्रे लिसानी या ज़िक्रे जहरी जिस को लक़लक़ा भी कहते हैं।

२) ज़िक्रे क़ल्बी

३) ज़िक्रे रूही जिस को मुशाहदा भी कहते हैं।

४) ज़िक्रे सिर्री जिस को मुआएना भी कहते हैं।

५) ज़िक्रे ख़फ़ी जिस को मुग़ाएबा भी कहते हैं।

ज़िक्रे लिसानी या ज़िक्रे जहरी का तरीक़ा यह है कि ज़बान से बुलंद आवाज़ के साथ ***ला इलाह*** कहते हुए गर्दन को झटका देकर क़ल्ब पर ***इल्लल्लाह*** की ज़र्ब लगाते हुए किया जाता है। अगरचे कि यह ज़िक्र मुब्तदियों (आरंभ कर्ता) को बताया जाता है मगर ज़िक्र के इस तरीक़े से ज़ाकिर यानि ज़िक्र करने वाले को कोइ फ़ाइदा नहीं पुहंच सकता क्योंकि उसका असर सिर्फ़ ज़बान तक महदूद रहता है दीगर आज़ाए जिस्मानी और रूहानी उस ज़िक्र से कोइ फ़ाइदा हासिल नहीं कर सकते।

इस तौजीह (स्पष्टता) के अलावा क़ुरआने हकीम ने भी इस तरीक़ए ज़िक्र को मना फ़रमाया है, चुनांचे अल्लाह तआला का साफ़ इर्शाद है कि

وَاذۡكُرۡ رَّبَّكَ فِیۡ نَفۡسِكَ تَضَرُّعًا وَّخِيۡفَةً وَّدُوۡنَ الۡجَهۡرِ مِنَ الۡقَوۡلِ بِالۡغُدُوِّ وَالۡاٰصَالِ وَلَا تَكُنۡ مِّنَ الۡغٰفِلِيۡنَ (سورۂ اعراف آیت ۲۰۵)

यनि ''अपने रब को याद करो अपने नफ़्स में आजिज़ी और ख़ौफ़ के साथ और आवाज़ से मत याद करो, सुब्ह व शाम ग़ाफ़िलों में से मत हो''। (आराफ़-२०५)

इस आयते करीमा में छे बातों का हुक्म हो रहा है।

१) وَاذْكُرْ رَّبَّكَ ○ (१) ***वज़्कुर रब्बक*** : अपने रब यानि अल्लाह तआला का ज़िक्र करो। ज़िक्र करने का हुक्म बसीग़ए अम्र (आदेशात्मक) है इस से साबित है कि ज़िक्रुल्लाह फ़र्ज़ है।

२) فِيْ نَفْسِكَ ○ (२) ***फ़ी नफ़्सिक*** : अपने नफ़्स में यानि अल्लाह तआला को अपने मन में याद करो।

३) تَضَرُّعًا وَّخِيْفَةً ○ (३) ***तज़र्रुअन् व ख़ीफ़तन्*** : आजिज़ी और ख़ौफ़ के साथ यानि अल्लाह तआला का ज़िक्र नम्रता और भय के साथ करो। लापरवाही (असावधानी) और बेअदबी (अनादर), ग़लत तरीक़ा, ग़लत निशस्त (बैठक) और ग़लत तसव्वुरात (कल्पना) से न करो।

४) وَّدُوْنَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ ○ (४) ***व दूनल् जहरि मिनल् क़ौलि*** : आवाज़ से पुकार कर मत करो। यानि अल्लाह तआला का ज़िक्र पुकार पुकार कर और चीख़ कर चिल्ला कर मत करो बल्कि मन ही मन में करो।

५) بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ ○ (५) ***बिल् ग़ुदूवि वल् आसालि*** : सुब्ह और शाम यानि अल्लाह का ज़िक्र सुब्ह और शाम हर वक़्त करते रहो।

६) وَلَا تَكُنْ مِّنَ الْغٰفِلِيْنَ ○ (६) ***वला तकुन् मिनल् ग़ाफ़िलीन*** : और मत होजाओ ग़ाफ़िलों में से। यानि किसी हाल में अल्लाह तआला के ज़िक्र से ग़ाफ़िल मत रहो।

इस आयते करीमा से चार बातें साबित हो रही हैं।

१) **फ़रज़ियत :** ज़िक्रुल्लाह उसी तरह फ़र्ज़ है जिस तरह नमाज़ फ़र्ज़ है, लिहाज़ा नमाज़ों के साथ ज़िक्रुल्लाह करना ज़रूरी और फ़र्ज़ है।

२) **ज़िक्र का तरीक़ा :**

१) अपने नफ़्स यानि मन ही मन में अल्लाह का ज़िक्र करना चाहिये।

२) नम्रता और भय के साथ ज़िक्रुल्लाह करना चाहिये।

३) ताकीद है कि पुकार कर आवाज़ के साथ ज़िक्रुल्लाह करना लाज़िमी नहीं है।

३) **औक़ाते ज़िक्र :** सुब्ह और शाम ज़िक्रुल्लाह करना लाज़िमी है।

४) **हिदायत और ताकीद :** अल्लाह तआला के ज़िक्र से ग़ाफ़िल मत रहो।

अलहासिल हुक्मे रब्बानी और आयाते क़ुरआनी से साबित हुआ कि ज़िक्र लिसानी या ज़िक्रे जहरी नहीं करना चाहिये।

ज़िक्रे क़ल्बी, ज़िक्रे रूही और ज़िक्रे सिर्री जिनकी तफ़सीलात तवालत का बाइस होंगी और इस मुख़्तसर पुस्तक में उसकी गुंजाइश और मौक़ा भी नहीं है इसलिये सिर्फ़ इस क़दर कहदेना काफ़ी होगा कि यह तीनों तरीक़े अपनी जगह दुरुस्त और हक़ हैं और तालिबों को मसरुफ़ रखने के लिये मुफ़ीद भी हैं, मगर इन तीनों तरीक़ों में तौहीदे ख़ालिस नसीब नहीं होती जो ज़िक्रुल्लाह का मन्शा और मक़सूद है। ख़याल रहे कि मैं ने तौहीदे ख़ालिस कहा है जिस को तौहीदे कुल्ली (संपूर्ण एकेश्वरवाद) भी कहते हैं।

तौहीदे जुज़्वी (आंशिक एकेश्वरवाद) का हासिल होना अलग चीज़ है तौहीदे कुल्ली प्राप्त होना अलग विषय है। चुनांचे उन अज़्कार में इब्तदाअन् (आरंभ में) तो तस्लीस (तीन ज़ात) की कैफ़ियत पैदा रहती है।

एक ज़ाकिर की ज़ात दूसरे शेख़ की ज़ात और उसका तसव्वुर तीसरे मज़्कूर यानि ज़ाते इलाही।

ज़िक्रुल्लाह में इन तीन तसव्वुरात से यक़ीनन् ज़िक्रुल्लाह का मक़सूद जो तौहीदे कुल्ली है हासिल नहीं हो सकता। अकसर औक़ात यह देखा गया है कि ज़ाकिर (तालिब) मुग़ालता में पड़कर मक़सूद को पुहंचने की बजाये अपने रास्ते ही से भटक गया है और अगर तस्लीस की कैफ़ियत से ज़ाकिर (तालिब) की मंज़िल बढ़ भी गइ तो दूई यानि शिर्क से तो छुटकारा नहीं। वह इस लिये कि ज़ाकिर ने अपनी ज़ात को मुशाहदा के ज़रीए शेख़ की ज़ात में गुम और फ़ना भी करदिया तो ज़ाते शेख़ और ज़ाते इलाही दो तो फिर भी बाक़ी रहे।

यहाँ यह कहदिया जा सकता है कि ज़ाते शेख़ चूंकि ज़ाते इलाही में फ़ना है या ज़ाते शेख़ में ज़ाते इलाही के जलवे का मुशाहदा है। बज़ाहिर यह नज़रिया तौहीद का हामिल नज़र आता है मगर गम्भीरता से ग़ौर किया जाये तो मालूम होगा कि वुजूदन् तो दो मौजूद रहेंगे जो तौहीदे कुल्ली का मुग़ायर (मुख़ालिफ़) है।

इसके आलावा एक और निहायत ख़ास बात कि अगर यह हालते ज़िक्र बकैफ़ियते मुशाहदा एक नज़र भी आ जायें तो तौहीद का यह कुल्लिया (नियम) नमाज़ की हालत में टूट जाता है, फिर साजिद (सज्दा करने वाला) और मस्जूद (जिसको सज्दा किया गया) दो हो जाते हैं। तौहीद का कुल्लिया तो ऐसा बताइए कि दूई की कैफ़ियत और दूई का तसव्वुर फ़ना हो जाये और तौहीदे कुल्ली हासिल हो जाये जिस से सलातुत् तौहीद हासिल हो जिसका तज़्करा मेराज में आया है और क़ुरआने हकीम में भी सलातुल् वुस्ता के नाम से इशारा फ़रमाया गया है। ज़िक्रुल्लाह का मक़सूद वही तौहीदे कुल्ली है जो ज़िक्र की हालत में और नमाज़ की हालत में हर हाल में शामिले हाल हो जाये।

ज़िक्रे ख़फ़ी उसी तौहीदे कुल्ली का हामिल है और शिर्के ख़फ़ी से मुबर्रा और पाक है और ज़ाकिर को भी शिर्के ख़फ़ी से मुबर्रा और पाक करदेता है।

दीदारे रब्बुल इज़्ज़त

फ़र्माने रब्बुल इज़्ज़त है कि فَمَنْ كَانَ يَرْجُوْا لِقَآءَ رَبِّهٖ فَلْيَعْمَلْ عَمَلاً صَالِحًا وَّلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّهٖ اَحَدًا यानि ''जिसको अपने परवरदिगार के दीदार की इच्छा हो तो **''अमले सालेह''** करे और अपने परवरदिगार **''अहद''** की इबादत में किसी को शरीक न करे। (कह्फ़-११०)

इस आयते करीमा में अल्लाह तआला ने अपने दीदार की दो शर्तें मुक़र्रर फ़र्माइ हैं। एक यह कि अमले सालेह करे यानि ज़िक्रुल्लाह करे क्योंकि ज़िक्रुल्लाह का सिला अल्लाह तआला का दीदार है।

यहाँ अमले सालेह से मुराद नमाज़ें नहीं हो सकतीं क्योंकि अगर नमाज़ें मुराद होती तो *अक़िमिस्सलात* फ़र्माया जाता। अमले सालेह दीदार के तअल्लुक़ से फ़र्माया जा रहा है। गुज़िश्ता सफ़हात में ज़िक्रुल्लाह के बयान के सिलसिले में हमने साबित कर दिया है कि अल्लाह तआला का दीदार सिर्फ़ ज़िक्रुल्लाह ही से हासिल होता है तो ज़ाहिर है कि रब्बुल इज़्ज़त के दीदार के लिये जो अमले सालेह किया जायेगा वही होगा जिसका सिला दीदारे रब हो। लिहाज़ा साबित हुआ कि अमले सालेह से मुराद ज़िक्रुल्लाह ही है, बाक़ी दीगर आमाल लवज़िमए ज़िक्रुल्लाह हैं।

दूसरी शर्त यह है कि अपने रब की इबादत (ज़िक्रुल्लाह) में किसी को शरीक न करे यानि शिर्क से पाक हो। यह शर्त निहायत अहम और इन्तेहाइ नाज़ुक है।

यहाँ इबादत से मुराद वही है जो अमले सालेह से मुराद है क्योंकि यह इबादत का तअल्लुक़ भी दीदार ही से है और शर्त के तौर पर बयान

फ़र्माइ गई है और मशरूत उसका दीदारे रब है और दीदारे रब ज़िक्रुल्लाह के सिवा मुहाल और नामुम्किन है। अलहासिल इबादत से भी ज़िक्रुल्लाह ही मुराद है।

गुफ़्तगू का नतीजा यह है रब्बुल इज़्ज़त का दीदार ऐसे ज़िक्र और तालीम से हासिल होता है जो शिर्के ख़फ़ी से पाक और मुबर्रा (आज़ाद) हो।

ग़ैरुल्लाह का ख़याल और तसव्वुर शिर्के ख़फ़ी कहलाता है तो मालूम हुआ कि ज़िक्रुल्लाह हर ग़ैरूल्लाह के ख़याल और तसव्वुर (अनुध्यान) से पाक होना चाहिये। इसी मंज़िल की तफ़हीम (समझाने) के लिये हुज़ूर सर्वरे कौनेन मुअल्लिमे काइनात रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि

مَنْ قَالَ لاَ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ خَالِصًا مُخْلَصًا حَقًّافَدَخَلَ الْجَنَّةَ

यानि जिसने बतरीक़ *ख़ालिसन्, मुख़्लिसन्, हक़्क़न् ला इलाह इल्लल्लाह* कहा पस वह जन्नत में दाख़िल हुआ, जन्नत से दीदार मुराद है, हूरो ग़िलमान की जन्नत मुराद नहीं है।

इस हदीस शरीफ़ में कलिमा لاَ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰه *ला इलाह इल्लल्लाह* के तीन मरातिब बयान किये गये हैं।

(१) ख़ालिसन्, (२) मुख़्लिसन्, (३) हक़्क़न्

कलिमए तौहीद के भी तीन ही मरातिब हैं -

१) मक़ामे ला तऐयुन में لاَ اِلٰه *ला इलाह* की ज़ात

२) मक़ाम तऐयुने अव्वल में اِلَّا اللّٰه *इल्लल्लाह* बिल इज्माल

३) मक़ाम तऐयुने सानी में مُحَمَّدٌ رَّسُوْلُ اللّٰه *मुहम्मदुर् रसूलुल्लाह* बित् तफ़सील।

कलिमए तौहीद के यह तीनों मरातिब जब ज़ाकिर और सालिक के शामिले हाल हो जाते हैं तो ज़ाकिरो सालिक सरापा कलिमए तौहीद बन जाता है और जब सरापा कलिमए तौहीद बना तो जन्नते दीदार में दाख़िल हो गया। इसी लिये मुअल्लिमे काइनात रसूले अकरम सल्ला० ने फ़र्माया कि سَیِّد الْاَعْمَالُ ذِکْرُاللّٰہ० *सय्यदुल आमाल ज़िक्रुल्लाह* यानि तमाम आमाल और इबादात का सरदार अल्लाह तआला का ज़िक्र है, और फ़ैसला फ़र्मादिया कि तमाम अज़्कारे इलाही यानि ज़िक्रे लिसानी, ज़िक्रे क़ल्बी, ज़िक्रे रूही, ज़िक्रे सिर्री से ज़िक्रे ख़फ़ी अफ़ज़ल है। चुनांचे साफ़ इर्शाद है कि *अफ़ज़लुज़् ज़िक्र ज़िक्रे ख़फ़ी।* افضل الذکر ذکرِ خفی

इन तमाम हक़ाइक़ के पेशे नज़र हज़रत इमामुल् काइनात इमामुना सय्यदना महेदी मौऊद अले० ने ज़िक्रे ख़फ़ी को फ़र्ज़ फ़र्मादिया और ज़िक्रे ख़फ़ी ही की तालीमो तल्क़ीन फ़र्माइ जो शिर्के ख़फ़ी से तक पाक हो और मक़सूदे रब्बुल् इज़्ज़त और मन्शाए तख़्लीक़े इन्सानी की तकमील का ज़रीआ और वास्ता है। और इर्शाद फ़र्माया कि

''ज़िक्रे ख़फ़ी ईमान है ईमान अल्लाह तआला की ज़ात है''।

इमाम हुमाम हज़रत महेदी मौऊद अले० का फ़र्मान हक़ है जिसकी ताईद आयाते क़ुरआनी और अहादीसे सहीहा हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० भी करते है।

ज़िक्रे ख़फ़ी से रब्बुल इज़्ज़त का दीदार यक़ीनी हासिल होता है *आमन्ना व सद्दक़ना*। ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम का फ़ौरी असर यह है कि जिस तरह एक मुश्रिक कलिमए तय्यब पढ़ने से मुसलमान हो जाता है उसी तरह ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम पाते ही मुसलमान मोमिन बनजाता है। तुर्फ़ा यह कि उसकी तालीम आला मक़ाम की होने के बावजूद निहायत आसान भी है जिसको अक़रबुत् तरीक़ (अत्यंत निकट रास्ता) कहते हैं यानि ''क़ुर्ब

(समीपता) का रास्ता''। जिस किसी को ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम सही तसव्वुरात और तफ़्हीम के साथ नसीब हुइ वह दीदारे रब्बुल इज़्ज़त के साथ ही वासिले हक़ हो जाता है।

चुनांचे मिसालन् दानापूर में हज़रत बन्दगी मियाँ शाह दिलावर रज़ी० की बैअत और ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम नतीजतन् दीदारे रब्बुल इज़्ज़त में मस्तो मुस्तग़रक़ और वासिले हक़ होने का वाक़ेआ और अहमदाबाद में मियाँ हाजी माली रज़ी० का वाक़ेआ इसकी रोशन दलील है।

ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम

ज़िक्रे ख़फ़ी की तालीम क्या है? और उसका तरीक़ा क्या है? मालूम करने से पहले यह मालूम करने और समझने की ज़रुरत है कि इन्सान की हक़ीक़त क्या है और ''दम्'' की हक़ीक़त क्या है?

अल्लाह जल्ल शानहु रिसालत पनाह मुअल्लिमे काइनात हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की ज़बान से ''दम्'' के बारे में इस तरह इर्शाद फ़र्माता है।

یـا ابـن آدم انفاسک کانبیائی فان تنفست بذکری فهو موصلک انیo وان تنفست بغیر ذکری فقد قتلت انبیایo

यानि ''ऐ इब्ने आदम तेरे दम (श्वास) गोया कि मेरे अम्बिया की मानिंद हैं अगर तू मेरे ज़िक्र के साथ दम लेता तो वह (दम) तुझको मुझ से वासिल करेगा (मिलायेगा) और अगर मेरे ज़िक्र के बग़ैर यूंही दम लिया तो तूने मेरे अम्बिया को क़त्ल किया''।

इस हदीसे क़ुदसी से मालूम हुआ कि इन्सान के दम की हक़ीक़त क्या है और साबित हुआ कि इन्सान एक एक दम बमंज़िलए एक एक नबी और पैग़म्बर के है।

ज़िक्रे ख़फ़ी दम के ज़रीए किया जाता है और दम के साथ वाबस्ता है, गोया ज़िक्रे ख़फ़ी का हर दम एक नबी और पैग़म्बर की मंज़िल रखता है। इसके अलावा दम की कैफ़ियत पर ग़ौर कीजिये तो मालूम होगा कि उसी दम की बदौलत (कारण) हयात (जीवन) है, दम नहो तो मौत है। यह दम (सांस) जब जिस्म के अन्दर जाता है तो जिस्मे इन्सानी को हयात अता करता है और यह दम जब जिस्म से बाहर आता है तो जिस्मे इन्सानी को फ़र्हत (आनंद) बख़श्ता है।

ज़िक्रे ख़फ़ी दम के साथ वाबस्ता होकर तमाम आज़ाए जिस्मानी दिलो दिमाग़ हत्ता कि रग रग, नस नस में समा जाता है और सर ता पा जिस्मे ख़ाकी को जिस्मे नूरी बना देता है। सुब्हानल्लाह बिहम्दिहि फिर तो बन्दे की यह कैफ़ियत हो जाती है कि उसी से सुन्ता, उसी से बोलता और उसी से देखता है। सुब्हानल्लाह माशा अल्लाह

यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि जब ज़िक्रुल्लाह में बैठते हैं या नमाज़ में मश्ग़ूल होते हैं तो ख़याल में एक इन्तेशार पैदा होता है और प्रागन्दगी (अस्तव्यस्तता) की कैफ़ियत छा जाती है, यक सूई नसीब नहीं होती उसकी क्या वज्ह है?

इस सवाल का जवाब बहुत तफ़सील तलब है। पहले यह समझना पड़ेगा कि आलमे अर्वाह क्या है और आलमे मिसाल की हक़ीक़त क्या है? आलमे ख़याल क्या है और सुवरे इल्मिया और आलमे हिस् व शहादत की हक़ीक़त क्या है? और सिफ़ाते ईजाबी और सुल्बी किसको कहते हैं? इस मुख़्तसर किताब में उन तवील मबाहेस की गुन्जाइश नहीं। इस लिये उन तमाम मनाज़िल और एतिबारात के तवील मबाहेस में गये बग़ैर यहाँ मुख़्तसर तौर पर इन्तेशारे ख़याल (परेशानी) के सिर्फ़ दो कारण जो बुन्यादी हैं बयान करदेना काफ़ी होगा।

इन्तेशारे ख़याल के ज़ाहिरी और बुन्यादी हैसियत से दो कारण होसकते हैं। एक यह कि ज़िक्रुल्लाह की सही तालीम न मिलने की वज्ह से और तसव्वुरात और एतेबारात की सही तालीम और तफ़हीम न होने के बाइस मर्कज़े तवज्जह नसीब नहीं होता जिसके कारण ख़यालात में इन्तेशार पैदा होजाता है। अगर सही तालीम और सही तसव्वुर मिल जाये तो यह बात हर गिज़ पैदा नहीं हो सकती।

दूसरा कारण यह कि अगर ज़िक्रुल्लाह की सही तालीम और सही तसव्वुर की तफ़हीम हासिल है फिर भी इन्तेशारे ख़याल पैदा हो तो बहुत अच्छा है, ऐसा होना ही चाहिये। उसकी मिसाल ऐसी है कि अगर मकान में झाड़ू दी जाये और सफ़ाइ की जाये तो गर्द और कचरे का उड़ना और फ़िज़ा में फैलकर फ़िज़ा का आलूदा होना ज़रूरी है। उसी तरह जब ज़ाकिर ज़िक्रुल्लाह में सही तालीम और सही तसव्वुर के साथ ***इल्लल्लाह*** की जारूब (झाड़ू) से क़ल्ब के मकान को साफ़ करने लगता है तो यक़ीनी इन्तेशारे ख़याल पैदा होकर दिमाग़ की फ़िज़ा को मुकद्दर करने लगता है। ऐसी हालत में ज़ाकिर को चाहिये कि सब्रो इस्तेक़ामत (दृढ़ता) से काम ले और क़ुव्वते इरादी (संकल्प शक्ति) को काम में लाये और मर्कज़े तवज्जुह पर ख़याल को जमाये। चंद रोज़ की मेहनत में यह कैफ़ियत यक़ीनी तौर पर जाती रहेगी और मक़सूद (उद्देश्य) हासिल होकर ही रहेगा। *इन्शा अल्लाहु तआला।* मगर याद रहे कि ज़िक्रुल्लाह की सही तालीम और एतिबारात का सही तसव्वुर हासिल है तो वर्ना उम्र भर कुछ हासिल नहीं होगा।

यहाँ यह चीज़ भी वाज़ेह करदेता हूं कि ज़िक्रुल्लाह का इस्तिग़फ़ार और ज़िक्रुल्लाह का दुरूद शरीफ़ जो ख़ातिर जमई (ढारस) और हिफ़ाज़ते हवास के लिये ख़ुसूसी है उसका विर्द (जाप) किया जाये तो हर क़िसम का इन्तेशारे ख़याल से यक़ीनन् हिफ़ाज़त हासिल हो जाती है।

अब हम असल मौज़ूअ् (विषय) पर आते हैं और बताते हैं कि ज़िक्रे ख़फ़ी क्या है।

ज़िक्रे ख़फ़ी वही कलिमए तौहीद لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰه *ला इलाह इल्लल्लाह* है मगर तालीम में उसके दो हिस्से किये जाते हैं। एक हिस्सा لَا اِلٰهَ *ला इलाह* और दूसरा हिस्सा اِلَّا اللّٰه *इल्लल्लाह* क्योंकि दम (सांस) के भी दो हिस्से हैं। एक जिस्म के अन्दर जाने वाला और दूसरा जिस्म से बाहर आने वाला।

कलिमए तौहीद के इन दो हिस्सौं के साथ दो कलिमे तालीमी हैं इस तरह ज़िक्रे ख़फ़ी के दो कलिमात तरतीब पाते हैं।

اِلَّا اللّٰه ***इल्लल्लाह*** **तूं है** - لَا اِلٰهَ **ला इलाह हूं नैं**

जब दम जिस्म के अन्दर जाता है तो उस दम के साथ اِلَّا اللّٰه *इल्लल्लाह* तूं है और जब दम बाहर आता है तो उस दम के साथ لَا اِلٰهَ *ला इलाह* हूं नैं।

इन तालीमी कलिमात में तसव्वुरात की तालीम दी जाती है, उसके तीन मरातिब और एतिबारात हैं, यानि ''तूं है'' एक मर्तबए एतिबार है और ''हूँ'' दूसरा मर्तबए एतिबार है और ''नैं'' तीसरा मर्तबए एतिबार है।

इन ही एतिबारात में तसव्वुरात की मनाज़िल हैं जिनको मुराक़बा (ध्यान मग्नता) और मुशाहदा की मंजिल कहते हैं तालिब को तालीम दी जाती है। इन एतिबारात और तसव्वुरात की तालीमात किसी पीरे कामिल के हाथ पर बैअत करके दामन से वाबस्ता होकर हासिल करनी चाहिये। याद रहे कि यह मक़ाम और मनाज़िल निहायत नाज़ूक तरीन हैं। उनकी तालीमात के लिये पीरे कामिल हो नाक़िस न हो और तालीमात हक़ीक़ी हों, रस्मी न हों, वर्ना ग़लत तालीमात और ग़लत तसव्वुरात से हक़ प्रस्ती की मंज़िल गुम हो जायेगी और ज़ाकिर (तालिब) बुत प्रस्ती की मंज़िल में पड़ जायेगा। अल्लाह तआला बचाये - आमीन

तीसरा भाग
अहकामे इक़्तिदा

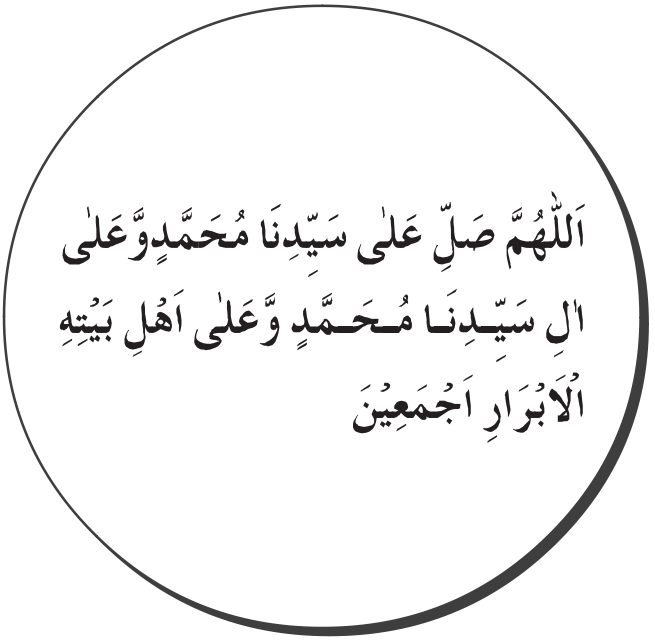

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡم
نَحۡمَدُهٗ وَنُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِهِ الۡكَرِيۡم
وَالۡمَهۡدِیَّ الۡمَوۡعُوۡدَ عَلَيۡهِ الصَّلٰوةُ وَالتَّسۡلِيۡم

इख़्तिलाफ़े अइम्मए दीन और उसका असर

उलमाए उसूल और अइम्मए हदीस का मुत्तफ़क़ा मसअला है कि तमाम मज़्हबी आमाल और इबादात की बुनियाद सही एतिक़ाद है। अगर एतिक़ाद सही है तो आमाल और इबादात भी सही और दुरुस्त हैं और अगर एतिक़ाद में ख़राबी या तज़ल्ज़ुल (भूकंप) आजाये तो तमाम आमाल और इबादात में ख़राबी आना लाज़िमी है और कोइ इबादत हो कि अमल सही और दुरुस्त नहीं होगा।

यह हक़ीक़त नाक़ाबिले इन्कार है कि तमाम मुसलमानों के एतिक़ाद में जो बात ख़ुदाए तआला और हज़रत रसूले मुकर्रम सल्ला० के हुक्म से साबित हो उसपर ईमान रखना और सच जान्ना ज़रुरी है। इन्ही उसूल (नियम) पर तमाम एतिक़ाद और अमल की बुनियाद है।

तमाम अक़ाइद और आमाल में बाज़ ऐसे हैं जो क़ुरआने हकीम में साफ़ तौर पर बयान नहीं किये गये हैं जिनकी तफ़सील क़ुरआने हकीम में नहीं है, मसलन् नमाज़ और ज़कात के बारे में اَقِمِ الصَّلٰوةَ وَاٰتُو الزَّكٰوةَ ***अक़िमिस्सलात व आतुज़् ज़कात*** यानि ''नमाज़ क़ायम करो और ज़कात अदा करो'' का हुक्म दिया गया है। उसकी तफ़सील अहादीस ही से साबित होती है कि किस तरह नमाज़ क़ायम की जाये, अर्काने नमाज़ किस तरतीब से अदा किये जायें और किस चीज़ की ज़कात किस मिक़दार में अदा की जाये और कौन शख़्स अदा करे और क्या अदा करे?

इसी तरह नमाज़ में जमाअत और इमामत और इक़्तिदा के मसाइल और उसके मुतअल्लिक़ात कि कौन इमाम हो सकता है और कौन नहीं हो सकता या किस की इक़्तिदा जायज़ है और किसकी जायज़ और दुरुस्त नहीं है। यह तमाम मसाइल भी अहकामे दीनी और क़ानूने इलाही पर ही मौक़ूफ़ (निर्धारित) हैं। किसी की राय या मस्लिहत से उन मसाइल में तब्दीली नहीं हो सकती और किसी एक या कई अश्ख़ास की ज़ाती राय पर जिसकी ताईद अहकामे दीनी से न होती हो अमल करना मज़्हबन् दुरुस्त नहीं।

फ़र्ज़ करो कि आज किसी की यह राय क़ायम होजाये कि इमामत के लिये तहारत की ज़रुरत नहीं और बिला उज़रे शरई ऐसे शख़्स की इक़्तिदा दुरुस्त है जो वुज़ू या तयम्मुम किया हुआ न हो तो यक़ीनन् हर मुसलमान यही फ़ैसला करेगा कि ऐसे शख़्स की नमाज़ ही न होगी।

इसी तरह अगर कोइ शख़्स जिस पर ग़ुस्ल वाजिब हो या उसका जिस्म, लिबास या नमाज़ की जगह पाक न हो ख़िलाफ़े अहकामे दीनी नमाज़ पढ़ाये और कोई शख़्स जान बूझ कर ऐसे शख़्स की इक़्तिदा से नमाज़ अदा करे तो यक़ीनन् नमाज़ दुरुस्त न होगी।

यह उन मसाइल की मिसालें हैं जो चारों अइम्मए दीन के पास नमाज़ के लिये दुरुस्त और ज़ायज़ न होने की हैं, और हर मुसलमान लाज़िमी तौर पर उनको इक़्तिदा के लिये जायज़ न होने के लिये काफ़ी समझता है।

उसके साथ ही तहारत और नमाज़ के अरकान और शराइत में बाज़ बातें ऐसी भी हैं जो बाज़ इमामौं के नज़्दीक ऐसी ज़रुरी हैं कि उनकी तकमील न होने से तहारत या नमाज़ ही सही नहीं होती और दूसरे इमामौं के पास वही बातें ऐसी ज़रुरी नहीं हैं, बल्कि उनके न होने से सिर्फ़ तर्के

अफ़ज़ल या कराहते तन्ज़ीही लाज़िम आती है और नफ़्से तहारत या नमाज़ पूरी हो जाती है।

पस ऐसे इख़्तिलाफ़ी मसाइल में हर मुसलमान जिस इमाम का पैरो (अनुकरण कर्ता) होता है वह अपने इमाम के मसअले के मुवाफ़िक़ अमल करता है और इसी पर तमाम अहले मज़ाहिब का अमल जारी है।

चारों अइम्मा के इख़्तिलाफ़ी मसाइल कसरत से हैं। चंद बतौरे मिसाल पेश किये जाते हैं।

१) **वुज़ू के मसअले को ले लीजिये कि क़ुरआने हकीम में ''सर का मस्ह करो'' का हुक्म है।**

इस हुक्मे क़ुरआनी पर हज़रत अबू हनीफ़ा इमामे आज़म रहे० पाव सर का मस्ह करना फ़र्ज़ कहते हैं और पूरे सर का मस्ह मुस्तहब बताते हैं।

हज़रत इमाम मालिक रहे० के पास पूरे सर का मस्ह फ़र्ज़ है और हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० के पास सर के सिर्फ़ थोड़े हिस्से का मस्ह करलेने से मस्ह करने का फ़र्ज़ पूरा हो जाता है, न पाव सर की शर्त है न पूरे सर की शर्त है।

अब ग़ौर कीजिये सर का मस्ह वुज़ू के फ़राइज़ में से है, जिसके लिये हुक्मे क़ुरआनी है। अगर यह फ़र्ज़ वुज़ू से छूट जाये या उसमें ख़राबी आजाये तो वुज़ू ही नहीं होता। जब वुज़ू ही नहीं हुआ तो फिर ग़ौर का मक़ाम है कि नमाज़ कैसे होगी?

इस अहम्मियत के बावजूद तीनों अइम्मए दीन में किस क़दर इख़्तिलाफ़ है।

हज़रत इमाम मालिक रहे० की पैरवी करने वालों के पास हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहे० और हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० की इत्तिबा करने

वालौं का वुज़ू ही नहीं हुआ। इसी तरह हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहे० की पैरवी करने वालौं के पास हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० की इत्तिबा करने वालौं का वुज़ू ही नही हुआ।

ऐसी सूरत में क्या हज़रत इमाम मालिक रहे० की पैरवी करने वाले की नमाज़ हनफ़ी इमाम के पीछे जिसका वुज़ू पूरा नहीं हुआ होसकती है? क्योंकि मालिकी एतिक़ाद के तहत हनफ़ी इमाम बे वुज़ू है। इसी तरह हनफ़ी मुक़्तदी की नमाज़ शाफ़ई इमाम के पीछे जिसका वुज़ू ही पूरा नहीं हुआ, होसकती है?

अगर हनफ़ी अपने इमाम का सच्चा और पक्का पैरो है तो उसकी नमाज़ शाफ़ई इमाम के पीछे हरगिज़ नहीं होसकती क्योंकि हनफ़ी एतिक़ाद के तहत शाफ़ई इमाम बे वुज़ू है।

२) **इसी तरह कोइ बा वुज़ू शख़्स फ़स्द (रक्त मोचन) ले यानि हाथ की शिरयान से फ़ासिद (अशुद्ध) ख़ून निकाले या पछने लगाये यानि फोड़े पर जोंक लगाकर ख़राब ख़ून् पीप निकाले या उसके जिस्म के किसी हिस्से से ख़ून ख़ारिज हो तो हज़रत अबू हनीफ़ा इमाम आज़म रहे० के मज़्हब की रु से उसका वुज़ू टूट जायेगा। बरख़िलाफ़ इसके हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० के पास फ़स्द लेने या पछने लगाने या शरीर के किसी भाग से ख़ून ख़ारिज होने से वुज़ू नही टूटता।**

चुनांचे *बाजूरी* फ़िक़्ह शाफ़ई में लिखा है कि ''पेशाब या पाख़ाना के मुक़ाम के सिवा जिस्म के दूसरे हिस्से से नजासत ख़ारिज होने मसलन् फ़स्द लेने या पछने लगाने से वुज़ू नहीं टूटता''।

पस अगर कोइ शाफ़ई मज़्हब का मुसलमान फ़स्द लेने या पछने लगाने के बाद अपने मज़्हब के मुताबिक़ वुज़ू किये बग़ैर नमाज़ पढ़ाने के लिये इमाम होजाये तो कोइ हनफ़ी मज़्हब का मुसलमान उस इमाम की

इक़्तिदा नहीं कर सकता क्योंकि हनफ़ी मज़्हब के एतिबार से शाफ़ई मज़्हब का इमाम बे वुज़ू है।

३) **इसी तरह रुकूअ और सुजूद वाली नमाज़ में क़हक़हा करने से हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहे० के पास वुज़ू टूट जाता है।**

चुनांचे *किताबुल फ़िक़्ह अला मज़ाहिबिल अइम्मतिल् अर्बआ* में लिखा है कि

''हनफ़िया का क़ौल है कि नमाज़ में क़हक़हा करने से वुज़ू टूट जाता है। क़हक़हा यह है कि ऐसी आवाज़ से हंसे कि बाज़ू वाला सुनले। पस क़हक़हा से नमाज़ बातिल हो जायेगी और वुज़ू टूट जायेगा''।

बरख़िलाफ़ इसके हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० के नज़्दीक नमाज़ में क़हक़हा करने से वुज़ू नही टूटता। चुनांचे *बाजूरी फ़िक़्ह शाफ़ई* में लिखा है कि

''नमाज़ में क़हक़हा करने से वुज़ू नहीं टूटता। जो रिवायत उसके नाक़िस होने की निस्बत आइ है वह ज़ईफ़ है''।

पस अगर कोइ शाफ़ई मज़्हब वाला नमाज़ में क़हक़हा करे और क़हक़हा करने के बाद दुबारा वुज़ू के बेग़ैर नमाज़ पढ़ने के लिये इमाम हो जाये तो हनफ़ी मज़्हब का मुक़्तदी उस इमाम की इक़्तिदा नहीं कर सकता क्योंकि उसके मज़्हब की रु से इमाम बे वुज़ू है और नमाज़ बातिल।

४) **उसी तरह हज़रत अबू हनीफ़ा इमाम आज़म रहे० के पास मनी (वीर्य) नजासते ग़लीज़ा है अगर जिस्म पर या कपड़े पर लगी हुइ है तो उसको धोना और पाक करना ज़रुरी और लाज़िमी है, उस वक़्त तक तहारत हासिल नहीं होती। जब तहारत ही हासिल नहो तो नमाज़ ही नहोगी। बरख़िलाफ़ इसके हज़रत इमाम शाफ़ई रहे० के नज़्दीक मनी नजिस नहीं है बल्कि पाक है, सिर्फ़ ख़ुश्क हो जाना काफ़ी है धोने की शर्त नहीं है।**

ऐसी सूरत में अगर शाफ़ई मज़्हब का इमाम जो अपने जिस्म और कपड़े को धोकर मनी से पाक न किया हो उसके पीछे हनफ़ी मज़्हब के मुसलमान की नमाज़ किसी सूरत में जाइज़ न होगी बल्कि बातिल होजायेगी।

५) **इसी तरह क़िब्ले की तरफ़ मुंह करने की शर्त, वुज़ू के पानी के ज़्यादा या कम होने के मसाइल, नजासत के मसाइल, नमाज़ में मुक़्तदी का सूरए फ़ातिहा पढ़ना और नहीं पढ़ना वग़ैरा में कसरत से इख़्तिलाफ़ात मौजूद हैं जिसके कारण एक दूसरे की इक़्तिदा जाइज़ नहीं है।**

तहारत और नमाज़ के यह तमाम मसाइल और इख़्तिलाफ़ात अहले सुन्नत वल जमाअत के मुसल्लमा (प्रमाणित) हैं। इक़्तिदा के नाजाइज़ होने की इन चंद मिसालौं को सामने रखकर ग़ौर कीजिये कि ऐसी सूरत में महेदवी उल मज़्हब की नमाज़ ग़ैर महेदवी उल मज़्हब के पीछे कैसे दुरुस्त और जाइज़ हो सकती है जबकि बुन्यादी तौर पर एतिक़ाद ही में इख़्तिलाफ़ है।

इक़्तिदा पर अक़ाइद का असर

जिस तरह सही नमाज़ और जाइज़ इक़्तिदा के लिये ज़ाहिरी तहारत और ज़ाहिरी अरकान और शराइत का लुज़ूम है उसी तरह इक़्तिदा के लिये अक़ाइद का दुरुस्त और सही होना यानि बातिनी पाकी भी लाज़िमी है।

मिसाल के तौर पर एक मुश्रिक या अहले किताब या कोइ शख़्स भी जो मुसलमान न हो तहारत और नमाज़ की ज़ाहिरी तमाम शराइत मुकम्मल करे यानि उसका लिबास और जिस्म पाक हो, क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करे और तमाम अरकाने नमाज़ मसलन् क़ियाम, क़िरअत, रुकूअ, सज्दा, क़ाअदा वग़ैरा पूरे तौर पर अदा करे तो भी मुसलमानौं के एतिक़ाद में उस मुश्रिक काफ़िर की इक़्तिदा से कोइ मुसलमान जान बुझ कर नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ अदा नहीं होगी, क्योंकि उसका कुफ़्र और

शिर्क, दूसरे शब्दौं में उसका फ़सादे एतिक़ाद यानि बद एतिक़ादी नमाज़ को बातिल करदेगी और इक़्तिदा क़तअन् ज़ाइज़ न होगी।

चुनांचे *किताबुल फ़िक़्ह अला मज़ाहि बिल अइम्मतिल अर्बअ* में इस बात का क़तई फ़ैसला है कि

''जमाअत सही होने की चंद शरतें हैं जिनमें से इस्लाम भी है पस काफ़िर की इमामत दुरुस्त नहीं है''।

इसी उसूल के तहत उलमाए उसूल और अइम्मए दीन का मुत्तफ़क़ा मसअला है कि नमाज़ के दुरुस्त और इक़्तिदा के सही होने के लिये इमाम में एतिक़ाद की पाकी लाज़िमी है जिसके न होने से नमाज़ दुरुस्त न होगी बल्कि बातिल हो जायेगी।

बातिनी पाकी या फ़सादे एतिक़ाद के बारे में उलमाए उसूलो हदीस और अइम्मए दीन ने एक ज़ाबिता (क़ानून) क़रार दिया है कि

''जिस शख़्स में जो नुक़्से एतिक़ाद पाया जाये अगर वह ऐसा है कि उस से कुफ़्र लाज़िम आता है तो ऐसे शख़्स की इक़्तिदा नमाज़ में जाइज़ नहीं है''।

मिसाल के तौर पर एक शख़्स आबिद, ज़ाहिद, नमाज़ी, क़ारी, हाफ़िज़े क़ुरआन, रोज़ा नमाज़ का पाबंद और तहज्जुद गुज़ार सब कुछ है मगर सिर्फ़ एक बात कि शराब जो क़तई हराम है उसको हलाल समझता है। ऐसी सूरत में उसके एतिक़ाद में फ़साद (दोष) और नुक़्स (बुराई) पैदा होगया। शराब को क़तई हराम के बजाये हलाल समझने की वज्ह से एतिक़ाद में नुक़्स पैदा होगया है इसकी वज्ह से उसकी तमाम नेकियाँ और बुज़ुर्गियाँ बरबाद होगयी और कुफ़्र लाज़िम आगया। पस ऐसे शख़्स की इक़्तिदा क़तअन् जाइज़ नहीं होगी।

उसकी चंद मिसालें अइम्मए दीन की प्रमाणित पूस्तकौं के हवाले से और देख लीजिये। चुनांचे *किफ़ाया शर्ह हिदाया फ़िक़्ह इनफ़ी फ़स्ल इमामत* में लिखा है कि

''जहमी और क़दरी जो क़ुरआन के मख़लूक़ होने के क़ायल हैं और वह ग़ाली राफ़ज़ी जो अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० की ख़िलाफ़त का मुन्किर है उसके पीछे नमाज़ जाइज़ नहीं है''।

ग़ौर का मक़ाम है कि हज़रत सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० की ख़िलाफ़त के मुन्किर के पीछे जब नमाज़ जाइज़ और दुरुस्त नहीं है तो हज़रत इमाम महेदी मौऊद फ़लीफ़तुल्लाह के मुन्किर के पीछे नमाज़ कैसे जाइज़ हो जायेगी? क़तई जाइज़ नहीं है।

इसी तरह किताब *अलमोतबर अल मुन्तहा शर्ह दक़ाइक़* में लिखा है कि

''काफ़िर के पीछे नमाज़ सही नहीं होती है अगरचे कि उसके कुफ़्र से ला इल्मी हो क्योंकि काफ़िर की नमाज़ मुक़्तदी के लिये सही नहीं है, ख़्वाह वह असली काफ़िर हो या किसी बिदअत वग़ैरा की वज्ह से मुर्तिद हो''।

उसी पुस्तक में यह भी लिखा है कि

''फ़ासिक़ की इमामत सही नहीं है ख़्वाह उसका फ़िस्क़ एतिक़ाद के लिहाज़ से हो या महरमात के इरतेकाब के कारण से, क्योंकि अल्लाह तआला का फ़र्मान है कि जो मोमिन है क्या वह फ़ासिक़ के जैसा होगा? यह दोनों बराबर नहीं हो सकते''।

नीज़ इब्ने माजा की हदीस जो जाबिर रज़ी० से मर्वी है कि

''औरत मर्द की इमामत न करे और न एराबी महाजिर की और न फ़ाजिर (पापी) मोमिन की''।

फ़क़ीर तारिकुद् दुनिया की इमामत अफ़ज़ल मानी गई है। मगर ऐसा फ़क़ीर जो बद नज़र हो, ज़ानी हो, चोर हो, हराम ख़ोर हो, सवाल करने और मांगने वाला हो, बुहतान बांधने वाला हो, झूटा हो उसके पीछे भी नमाज़ जाइज़ नहीं है, क्योंकि यह तमाम बातें फ़क़ीरी को तोड़ने वाली हैं। उसकी फ़क़ीरी बाक़ी नहीं रहती बल्कि ऐसा फ़क़ीर फ़ासिक़ और फ़ाजिर (पापी) कहलाता है।

मुहम्मद बिन अली हलबी ने हज़रत अबू अब्दुल्लाह रहे० से रिवायत की है कि

''आप ने फ़रमाया कि उस शख़्स के पीछे नमाज़ न पढ़ो जो तुमको काफ़िर कहे और न उसके पीछे पढ़ो जिसको तुम काफ़िर जानते हो''। *(मिफ़्ताहुश शिफ़ा इक़ामतुस् सलाति वल जमाअति)*

इन तमाम अहकाम से साबित हो रहा है कि क़रीबन् तमाम अहले मज़ाहिब के नज़्दीक किसी ऐसे शख़्स की इक़्तिदा में नमाज़ जाइज़ नहीं है जिस पर मूजिबाते कुफ़्र लाज़िम आते हों। फ़िक़्ह हम्बली और फ़िक़्ह शेअई में तो फ़ासिक़ की इक़्तिदा भी नाजाइज़ है, हालांकि फ़िस्क़ तो कुफ़्र के बरारब का मज़्हबी गुनाह नहीं है।

यह तमाम अहकाम अइम्मए दीन के हैं जो क़ुरआन और हदीस की रोशनी में सादिर किये गये हैं और तमाम अहले सुन्नत वल जमाअत के मुसल्लमा (प्रमाणित) हैं। ऐसी सूरत में अइम्मए दीन और उलमाए उसूलो हदीस के ज़ाबिता (नियम) के तहत ''जिस शख़्स में जो नुक़्से एतिक़ाद पाया जाये जिस से कुफ़्र लाज़िम आता हो तो ऐसे शख़्स की इक़्तिदा नमाज़ में जाइज़ नहीं है''। यह ज़ाबिता और क़ानुन् तो तमाम अहले सुन्नत वल जमाअत का मुसल्लमा है जिस से इन्कार नहीं किया जा सकता।

अल ग़र्ज़ इसी मुसल्लमा ज़ाबिता और क़ानूने शरई के तहत महेदवी उल मज़्हब मुसलमान की नमाज़ ग़ैर महेदवी उल मज़्हब के पीछे क़तअन् जाइज़ नहीं बल्कि बातिल है।

क्या किसी मुसलमान पर कुफ़्र का इत्लाक़ हो सकता है

कुफ़्र एक शरई इस्तिलाही लफ़्ज़ (पारिभाषिक शब्द) है जो इस्लाम व ईमान के मुक़ाबिल का नाम है। वह बातें जो ईमान और इस्लाम के ख़िलाफ़ हैं मूजिबाते कुफ़्र कहलाती हैं। कुफ़्र और ईमान का इत्लाक़ (प्रयोग) अश्ख़ास से मख़सूस नहीं है बल्कि औसाफ़ से तअल्लुक़ रखता है।

जिस में जो औसाफ़ (गुण) पाये जायें उसपर वही हुक्म आयद होगा। जिस तरह एक शख़्स में बीमारी की अलामात पाइ जायें तो उसको बीमार कहना और सिहत की अलामात पाइ जायें तो उसको तनदुरुस्त (स्वस्थ) कहना सही है। उसी तरह एक काफ़िर में अलामात और शराइते ईमान पाये जाने से उसका मोमिन होजाना मुम्किन है और एक मोमिन में कुफ़्र की अलामात पाइ जाने से उसको काफ़िर कह सकते हैं।

इसी उसूल पर इल्मे फ़िक़्ह और इल्मे कलाम की किताबों में अस्बाबो मूजिबाते कुफ़्र से बहेस की जाती है और जिन सूरतों में कुफ़्र लाज़िम आजाता है वह तफ़सील से बयान की गइ हैं।

जो बातें कुफ़्र की अलामात या मूजिबात (कारण) हैं, किसी शख़्स में उन तमाम का पाया जाना ज़रुरी नहीं है बल्कि उनमें से कोइ भी बात पाइ जाये तो कुफ़्र लाज़िम आजायेगा।

ख़ुदाए तआला और रसूल मुकर्रम सल्ला० के क़तई अहकाम से इन्कार करना या ख़ुदाए तआला और रसूल मुकर्रम सल्ला० के बाज़ अहकाम को मान्ना और बाज़ से इन्कार करना यक़ीनन् ख़ुदा और रसूल

सल्ला० से बग़ावत है। इसी बग़ावत को दीनी और मज़्हबी इस्तिलाह में कुफ़्र कहते हैं। अगर किसी मुसलमान में ख़ुदा और रसूल सल्ला० से बग़ावत (विद्रोह) की अलामतें या वह बातें जो ईमान और इस्लाम के ख़िलाफ़ पाइ जायें तो उस पर यक़ीनन् कुफ़्र का इत्लाक़ हो सकता है और होना चाहिये।

चुनांचे इल्मे कलाम (तर्कशास्त्र) की मश्हूर किताब *''शर्ह मक़ासिद''* में लिखा है कि

''उस अहले क़िब्ला (मुसलमान) के काफ़िर होने में कोइ इख़्तिलाफ़ नहीं है जो उम्र भर ताअत और इबादत करता रहे, लेकिन आलम (जगत) के क़दीम होने और हश्र न होने और अल्लाह तआला को जुज़्इयात का इल्म न होने का या उसी क़िसम का कोइ एतिक़ाद रखता हो या उस से मूजिबाते कुफ़्र से कोइ चीज़ सादिर हो जाये''।

तहतावी हाशिया दुर्रुल मुख़्तार (फ़िक़्ह हनफ़ी) में लिखा है कि

''यौमे हशर का इन्कार, नबी सल्ला० का इन्कार या उन बातौं का जो रसूलुल्लाह सल्ला० से ज़रुरी तौर पर मालूम हुए हों, महरमात को हलाल जान्ना और तमाम ज़रुरियाते दीन और शर्अ के अहम उमूर का इन्कार करना अहले क़िब्ला (मुसलमान) के काफ़िर होने में कोइ नज़अ (इख़्तिलाफ़) नहीं है''।

यह तमाम अहकाम हमारे नहीं है बल्कि अइम्मए दीन और उलमाए उसूलो हदीस ने क़ुरआनो हदीस की रोशनी में दिये हैं, जो तमाम अहले सुन्नत वल जमाअत के मुसल्लमा हैं।

इन तमाम अहकाम से साफ़ साबित होरहा है कि किसी मुसलमान में मूजिबाते कुफ़्र से कोइ एक बात भी पाइ जाये तो उसके काफ़िर होने में कोइ इख़्तिलाफ़ नहीं है बल्कि मुत्तफ़क़ा तौर पर कुफ़्र का इत्लाक़ हो जाता है।

चुनांचे हज़रत सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० के अहदे ख़िलाफ़त का मश्हूर वाक़िआ इसकी साफ़ मिसाल है कि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के परदा फ़रमाने के बाद बाज़ क़बाइले अरब ने यह ऐलान करदिया कि वह नमाज़ पढ़ेंगे मगर ज़कात नहीं देंगे। उनके मुतअल्लिक़ सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० ने फ़रमाया कि जो शख़्स नमाज़ और ज़कात में फ़र्क़ करेगा मैं उस से जहाद करूंगा। अगरचे कि दूसरे सहाबा पहले सहमत नहीं हुए मगर बाद में उन्होंने अपनी राय से रुजूअ करके हज़रत सय्यदना अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० से इत्तिफ़ाक़ किया और ज़कात अदा न करने वाले मुर्तद समझे गये और उनसे जहाद करना जाइज़ समझा गया (तारीख़ुल ख़ुलफ़ा)।

ज़ाहिर है कि ज़कात से इन्कार करने वाले तौहीद व रिसालत के क़ाइल थे, नमाज़ पढ़ने का भी इक़रार था, सिर्फ़ एक ज़कात के हुक्म से इन्कार करने की वज्ह से उनके मुर्तद (धर्म भ्रष्ट) होने और उनसे जहाद करने का जम्हूर सहाबए रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़ैसला किया और क़रीबन् तमाम मुसलमान और ख़ुसूसन् अहले सुन्नत मुसलमान इस फ़ैसले को हक़ मानते हैं।

इन तमाम अहकामात से साफ़ साबित हो रहा है कि किसी मुसलमान में ख़ुदाए तआला और हज़रत रसूल मुकर्रम सल्ला० के किसी हुक्म की नाफ़रमानी और इन्कार या वह बातें जो ईमान और इस्लाम के ख़िलाफ़ पाइ जायें या वह बातें जो कुफ़्र की अलामत या मूजिबाते कुफ़्र से हैं पाइ जायें तो उस पर यक़ीनन् कुफ़्र का इत्लाक़ हो सकता है।

कुफ़्र के अहकाम

आयाते क़ुरआनी और अहादीसे रसूल रब्बानी सल्ला० की रोशनी में उलमाए उसूलो हदीस ने कुफ़्र के तीन दर्जे मुक़र्रर किये हैं और हर दर्जे के अहकाम भी मुख़्तलिफ़ बयान किये हैं।

१) **पहला दर्जा कुफ़्र का यह है कि एक शख़्स अल्लाह तआला के वुजूद ही को नहीं मानता या वह मुश्रिक जो कई ख़ुदाओं को मानता है या ख़ुदाए तआला के साथ किसी को शरीक करता है और अम्बिया अले० को नहीं मानता पस वह काफ़िर है।**

इस पहले दर्जे के काफ़िरों की निस्बत यह हुक्म है कि

''ऐसे काफ़िरों का ज़ब्ह किया हुआ जानवर मुसलमानों को खाना जाइज़ नहीं है। उनके साथ मुसलमानों का निकाह दोनों जानिब से दुरुस्त नहीं। मुसलमानों में और उनमें विरासत जारी न होगी। मुसलमानों के बाज़ मआमलात में उनकी गवाही क़ुबूल न होगी। उनको अज़ाबे क़ब्र से नजाअत नहीं''।

२) **दूसरा दर्जा कुफ़्र का यह है कि अहले किताब जो ख़ुदाए तआला की ज़ातो सिफ़ात पर ईमान रखता है और तमाम अम्बिय अले० को मानता है मगर हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की नबूवत और रिसालत का मुन्किर है वह भी काफ़िर है।**

इस दूसरे दर्जे के काफ़रों की निस्बत यह हुक्म है कि

''अहले किताब का ज़ब्ह किया हुआ जानवर मुसलमानों को खाना जाइज़ है, उनसे एक तरफ़ा निकाह सही है यानि किताबिया औरत से मुसलमान मर्द को निकाह करना दुरुस्त है। मुसलमानों में और उन में विरासत जारी न होगी। मुसलमानों के बाज़ मआमलात में उनकी गवाही क़ुबूल न होगी। उनको अज़ाबे क़ब्र से नजाअत नहीं''।

३) **तीसरा दर्जा कुफ़्र का यह है कि एक शख़्स ख़ुदाए तआला की ज़ात और तौहीद और अम्बिया अले० और हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ला० की नबूवत और रिसालत पर ईमान रखता है लेकिन ख़ुदा और रसूल**

सल्ला० के किसी ऐसे ज़रुरी और क़तई हुक्म का जिसका मान्ना ज़रुरी है, मुन्किर है या मूजिबाते कुफ़्र में से कोइ बात उसमें पाइ जाती है तो वह भी काफ़िर है।

इस तीसरे दर्जे के कुफ़्र की निस्बत यह हुक्म है कि

''उनकी इक़्तिदा इबादात में जाइज़ न होगी। उनको अज़ाबे आख़िरत से नजाअत नहीं। इस्लामी मुआमलात में उनकी गवाही क़ुबूल होगी, उनमें और दूसरे मुसलमानौं में विरासत जारी होगी''।

इन अहकाम से तीन बातें साबित होती हैं।

एक यह कि बाज़ अस्बाबे कुफ़्र ऐसे हैं जिनके पाये जाने से इस्लाम ही सल्ब (ख़त्म) हो जाता है। दूसरी यह कि बाज़ अस्बाबे कुफ़्र ऐसे हैं जिनसे ज़ाहिरी अहकाम सल्ब नहीं होते मगर एतिक़ाद में नक़्स (दोष) पैदा होकर तमाम नेकियाँ और इबादतें बरबाद होजाती हैं। तीसरी यह कि काफ़िर की इक़्तिदा नमाज़ में दुरुस्त नहीं हत्ता कि कुफ़्र का अदना से अदना दर्जा भी। अगरचे कि उस से वह शख़्स दायरए इस्लाम से ख़ारिज न हो लेकिन नमाज़ में उसकी इक़्तिदा जाइज़ नहीं है।

यह तमाम अहकाम जम्हूर उलमाए अहले सुन्नत वल जमाअत के मुसल्लमा हैं जिस से इन्कार नहीं किया जा सकता।

अहम्मए दीन के इन्ही अहकाम के तहत महेदवी उल मज़्हब मुसलमानौं का एतिक़ाद है और अमल भी है।

क्या इस्लाम और ईमान दोनों एक हैं?

बाज़ अइम्मा के पास इस्लाम और ईमान दोनों एक हैं और बाज़ के नज़्दीक बाज़ एतिबारात से इस्लाम आम और ईमान ख़ास है। चुनांचे हज़रत इमाम ग़ज़ाली रहे० ने *एहयाउल् उलूम* में लिखा है कि

''बएतिबारे लुग़त इस्लाम आम है और ईमान ख़ास है। गोया ईमान से मुराद इस्लाम के आला अज्ज़ा हैं। पस हर मोमिन मुस्लिम है और हर मुस्लिम मोमिन नहीं है''।

इसी तरह और लिखा है कि

''दीन का मफ़हूम इस्लाम, ईमान और एहसान तीनों को शामिल है, इस्लाम अदना है, ईमान मुतवस्सित, एहसान आला है। पस हर मोहसिन मोमिन और मुस्लिम है और हर मोमिन मुस्लिम है लेकिन हर मोमिन का मोहसिन होना और ऐसा ही हर मुस्लिम का मोमिन होना लाज़िमी नहीं है''।

ग़र्ज़ ईमान और इस्लाम को एक मान्ने वाले या उन दोनों में आम और ख़ास की तक़सीम करने वाले दोनों गुरोह भी इस तीसरे दर्जे के कुफ़्र के अहकाम से मुत्तफ़क़ हैं।

इक़्तिदा के जाइज़ या नाजाइज़ होने में मुक़्तदी के मज़्हब का हुक्म अहम होता है

ऐसे मसाइल में जिनकी निस्बत अइम्मा के दरमियान् इख़्तिलाफ़ है इक़्तिदा सही और दुरुस्त होने या न होने के लिये मुक़्तदी की राय को मज़्हबन् अहम्मियत है। इमाम की राय का एतिबार नहीं किया जाता, यानि मुक़्तदी के मज़्हब की रु से इमाम में कोइ बात ऐसी पाइ जाये जो नाक़िसे वुज़ू या मानेअ तहारत या मुफ़्सिदे नमाज़ या मूजिबे कुफ़्र हो तो मुक़्तदी की नमाज़ उस इमाम के पीछे दुरुस्त न होगी अगरचे कि इमाम के मज़्हब में वह बात यही हुक्म रखती हो या न हो।

चुनांचे *रिसाला ग़ायतुत् तहक़ीक़ निहायुत् तदक़ीक़* किताब में *फ़तावा तातार ख़ानिया* के हवाले से लिखा है कि

''साहबे फ़तावा तातार ख़ानिया कहते हैं कि अगर मुक़्तदी को इमाम में कोइ बात मालूम हो जो उसके नज़्दीक नमाज़ के जाइज़ न होने की हो तो उस इमाम की इक़्तिदा जाइज़ नहीं है इसलिये कि नमाज़ के जाइज़ होने या न होने में मुक़्तदी की राय मोतबर है, इमाम की राय मोतबर नहीं है''।

फ़िक़्ही मसाइल में उसकी बहुत सी मिसालें मिलती हैं। मिसाल के तौर पर उनही मसाइल को लीजिये जो इस से पहले ज़िकर किये गये हैं, जैसे कोइ हनफ़ी मज़्हब का शख़्स किसी ऐसे शाफ़ई मज़्हब के इमाम की इक़्तिदा में नमाज़ पढ़े जिसने फ़स्द लिया हो और उसके जिस्म से ख़ून बहा हो और वह इमाम यह ख़ून निकलने के बाद दुबारा वुज़ू न करे, ऐसी सूरत में हनफ़ी मज़्हब के मुक़्तदी की नमाज़ फ़ासिद हो जायेगी, क्योंकि उसकी राय में इमाम बे वुज़ू है और उसकी नमाज़ फ़ासिद है अगरचे कि शाफ़ई मज़्हब के इमाम की राय में वह बे वुज़ू नहीं है।

चुनांचे किताब *अल फ़िक़्ह अला मज़ाहिबिल अइम्मतिल अर्बअ* में मुख़ालिफ़ मज़्हब वाले के पीछे नमाज़ पढ़ने की बहस के तहत लिखा है कि

''इक़्तिदा सही होने की शराइत में से यह भी है कि मुक़्तदी के मज़्हब की रु से इमाम की नमाज़ दुरुस्त होनी चाहिये। अगर हनफ़ी किसी ऐसे शाफ़ई के पीछे नमाज़ पढ़े जिसके जिस्म से ख़ून निकले और उसके बाद दुबारा वुज़ू न करे या कोइ शाफ़ई किसी ऐसे हनफ़ी के पीछे नमाज़ पढ़े जिसने मसलन् औरत को छू लिया हो तो मुक़्तदी की नमाज़ बातलि हो जायेगी क्योंकि उसकी राय में इमाम की नमाज़ बातिल है''।

इसी तरह किताब *अल अन्वारुल आमालुल अब्रार* में इक़्तिदा की शराइत के बयान में लिखा है कि

''शर्त लाज़िमी यह है कि इमाम की नमाज़ मुक़्तदी के एतिक़ाद के मुवाफ़िक़ सही हो''।

इसी तरह मूजिबाते कुफ़्र यानि जिन बातौं से कुफ़्र लाज़िम आता है तो ऐसी सूरत में भी यही उसूल बरक़रार रहता है कि अगर मुक़्तदी की रु से इमाम में कोइ बात मूजिबे कुफ़्र पाइ जाये तो मुक़्तदी को ऐसे इमाम की इक़्तिदा दुरुस्त नहीं है ख़्वाह वह बात इमाम के मज़्हब में कुफ़्र न हो।

चुनांचे *दुर्रुल मुख़्तार* फ़िक़्ह हनफ़ी में लिखा है कि

''अगर ज़रुरियाते दीन का इन्कार करे तो काफ़िर हो जायेगा जैसे यह कहे कि अल्लाह तआला अज्साम की तरह जिस्म है या वह अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ी० के सहाबी होने का इन्कार करे तो उसकी इक़्तिदा कभी सही नहीं''।

इसी हुक्म के तहत जो फ़िर्क़ए इस्लामिया सहाबिय्यते सिद्दीक़ रज़ी० का मुन्किर है वह ख़ुद को उस एतिक़ाद की वज्ह से काफ़िर नहीं समझता, लेकिन फ़िक़्ह हनफ़ी के इस हुक्म के नज़र करते चूंकि यह एतिक़ाद मूजिबे कुफ़्र है इस लिये एक हनफ़ी को अपने एतिक़ाद के तहत उस शख़्स की इक़्तिदा दुरुस्त न होगी जिस में यह मूजिबाते कुफ़्र पाये जाते हों।

उलमाए उसूल और अइम्मए हदीस का यह क़तई और मुत्तफ़क़ा फ़ैसला है कि **''हदीसे मुतवातिर का इन्कार कुफ़्र है''**।

चुनांचे उसूले फ़िक़्ह की मोतबर किताब *''उसूलुश् शाशी''* में लिखा है कि

''हदीसे मुतवातिर से इल्मे क़तई वाजिब होता है और उसका इन्कार कुफ़्र है''।

इन ही फ़ैसलौं के तहत *फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ* जिल्द (३) फ़िक़्ह हनफ़ी में लिखा है कि

''जो शख़्स हदीसे मुतवातिर का इन्कार करे पस वह काफ़िर है''।

यह तमाम अहकाम और एतिक़ादात मज़्हबे महेदविया के बनाये हुए नहीं हैं बल्कि उलमाए उसूल और अइम्मए हदीस के मुक़र्रर किये हुए हैं और तमाम उलमाए अहले सुन्नत वल जमाअत के मुसल्लमा (प्रमाणित) हैं जिन से इन्कार नहीं किया जा सकता।

इन अहकाम और एतिक़ादात के नज़र करते ग़ौर की जिये कि इक़्तिदा और नमाज़ का मसअला किस क़दर अहम है। इसी अहम्मियत के पेशे नज़र उनही अहकाम पर महेदवी सख़्ती से अमल करते हैं और एतिक़ाद रखते हैं कि महेदवी उल मज़्हब मुसलमान की नमाज़ ग़ैर महेदवी उल मज़्हब के पीछे दुरुस्त नहीं बल्कि बातिल है।

अब यह सवाल पैदा हो सकता है कि क्या हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ़्र होने का मसअला भी महेदवीयों का बनाया हुआ है। इस मसअले में भी उलमाए उसूल और अइम्मए हदीस ने अहादीसे हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के तहत जो अहकाम दिये हैं उसका महेदवी इत्तिबा करते हैं।

चुनांचे मज्मूअए अहादीस की मश्हूर किताब ''*इक़्दुद् दुरर्*'' में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ी० की रिवायत से यह हदीस लिखी है कि

''रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़रमाया कि जिसने दज्जाल के वुजूद को झूट समझा वह काफ़िर है और जिसने महेदी अले० को झुटलाया वह काफ़िर है''।

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस फ़रमान पर ग़ौर कीजिये कि इस हुक्म में अइम्मए दीन का दख़ल नहीं है बल्कि ख़ुद हुज़ूरे अकरम सल्ला० फ़रमा रहे हैं कि

''इमाम महेदी अले० का इन्कार कुफ़्र है''।

इसके अलावा अबुल क़ासिम मुहेली ने अपनी किताब *शर्हुल यसर* में इस हदीस की रिवायत की है। बर्ज़न्जी और शेख़ इमाम नूरुद्दीन अहमद बिन महमूद बुख़ारी साबूनी ने *हिदायतुल कलाम* में इन अलफ़ाज़ से लिखा है कि ''जिसने महेदी अले० का इन्कार किया वह काफ़िर है''।

देखा आप ने उस हदीस शरीफ़ को कितने अइम्मए हदीस ने और मुहद्दिसीन ने मुत्तफ़क़ा और मुस्तनद तौर पर लिखा है।

इसी तरह ख़्वाजा मुहम्मद पारसा ने *फ़स्लुल् ख़िताब* में लिखा है कि

''जिसने महेदी अले० के ज़ुहूर का इन्कार किया तो गोया उसने मुहम्मद सल्ला० पर जो कुछ नाज़िल हुआ है उस से काफ़िर हुआ और जिसने ईसा बिन मर्यम के नुज़ूल का इन्कार किया वह काफ़िर हुआ''।

इसके अलावा हज़रत इमाम अबू बक्र अस्काफ़ रहे० ने *फ़वाइदे अख़बार* मश्हूर हदीस की किताब में हज़रत जाबिर रज़ी० से रिवायत की है कि फ़रमाया हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने कि

''जिस शख़्स ने महेदी अले० के ज़ुहूर का इन्कार किया गोया कुफ़्र किया उस चीज़ के साथ जो मुहम्मद सल्ला० पर नाज़िल की गई (यानि क़ुरआने मजीद)''।

इन अहादीसे सहीहा से साफ़ साबित हो रहा है कि हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का इन्कार कुफ़्र है। अगरचे कि इन्कार करने वाला कैसा ही आबिदो ज़ाहिद, सालेह और मुत्तक़ी हो, अल्लाह और रसूल अले० को मान्ने का इक़रार करे उसके तमाम आमाले सालेह, तमाम नेकियाँ, इबादतें, रियाज़तें और तहज्जुद गुज़ारियाँ सब बरबाद हो जाती

हैं क्योंकि उसने हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० का इन्कार करके हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० की अहादीस का इन्कार किया जो मुतवातिर का दर्जा रखती हैं, गोया उसने हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के फ़र्मान का इन्कार किया जो ज़रुरियाते दीन से है, क्योंकि हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० ने फ़र्माया कि

''इमाम महेदी अले० की बेअ्सत ज़रुरियाते दीन से है। वह अल्लाह का ख़लीफ़ा है, उसके हाथ पर बैअत करो अगरचे कि तुम को बर्फ़ के पहाड़ौं पर से रेंगते हुए जाना पड़े''।

अल्लाह अल्लाह किस क़दर ताकीद फ़रमाइ जा रही है, इन्साफ़ का मक़ाम है।

हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० के इस क़रमान का इन्कार अल्लाह तआला के फ़रमान का इन्कार और अल्लाह तआला की मुराद का इन्कार है।

चुनांचे क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला का साफ़ इर्शाद है कि حَبِطَتْ اَعْمَالَهُمْ ''उनके तमाम आमाल बरबाद होगये''। (आले इम्रान-२२)

ख़ुदा और रसूले मुकर्रम सल्ला० के यही अहकाम एतिक़ाद की बुनियाद हैं। इन ही अहादीसे सहीहा पर अइम्मए हदीस और उलमाए उसूल और मुहद्दिसीन मुत्तफ़कुल एतिक़ाद हैं, और महदेवी उल मज़्हब मुसलमानौं का भी यही एतिक़ाद है।

इन ही अहकामे ख़ुदा और रसूले मुकर्रम सल्ला० की महेदवी सख़्ती से पाबन्दी करते हैं और इन ही अहकाम के तहत महेदवी मज़्हब का मुसलमान ग़ैर महेदवी मज़्हब के मुसलमान के पीछे नमाज़ अदा नहीं करते तो कौनसी एतिराज़ की बात है?

इक़्तिदा के मसअले पर ख़ुदाए तआला और हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० और अइम्मए दीन के जो अहकाम हैं उनके नज़र करते उसकी ताअ्मील करने वाले महेदवी उल मज़्हब मुसलमानौं पर एतिराज़ करना गोया अइम्मए दीन और ख़ुदा और रसूल सल्ला० के अहकाम पर एतिराज़ करने के बराबर है, ग़ौर और इन्साफ़ का मक़ाम है।

यहाँ यह सवाल पैदा किया जा सकता है कि हक़ीक़त में हज़रत इमाम महेदी अले० के इन्कार से कुफ़्र हो जायेगा, क्योंकि अहादीस मुतवातिरुल माना का इन्कार कुफ़्र है। मगर क्या हज़रत सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) का इन्कार कुफ़्र हो सकता है?

इस मसअले की तफ़सीली बहस और अहादीसे सहीहा, अइम्मए हदीस, उलमाए उसूल और मुहद्दिसीन की मुस्तनद (प्रमाणित) किताबौं और तारीख़ी मोतबर (विश्वस्त) किताबौं की सनद और हवाले से ''हमारा मज़्हब पहल भाग'' किताब में करदी गइ है और साबित करदिया गया है कि

''हुज़ूर सर्वरे कौनैन हज़रत रसूलुल्लाह सल्ला० से हज़रत इमाम महेदी अले० के बारे में जिस क़दर बशारात (शुभ सूचना), अलामात (लक्षण), सिफ़ात (गुण) और दाअ्वत वग़ैरह की अहादीसे सहीहा बयान की गइ हैं वह सब हज़रत इमामुना सय्यदना सय्यद मुहम्मद महेदी मौऊद अले० (जोनपूरी) पर पूरी पूरी साबित होती हैं और सादिक़ आती हैं, हत्ता कि कलिमए शहादत से महेदी अले० के जुहूर (प्रकटन) के ज़माने का भी तऐयुन साबित करदिया है''। मुलाहिज़ा हो।

जिस तरह बमूजिब बशारत तौरेत और इन्जील ख़ातिमुल अम्बिया अहमदे मुज्तबा मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्ला० तश्रीफ़ लाचुके उसी तरह

बमूजिब वाअदए रब्बानी और अहादीसे सहीहा हज़रत इमाम महेदी मौऊद अले० इमामे आख़िरुज़् ज़माँ ख़लीफ़तुर् रहमान तश्रीफ़ लाचुके।

इन तमाम हक़ाइक़ और कामिल सदाक़त के साथ साबित होगया कि आप अले० ही की मुक़द्दस ज़ात महेदी मौऊद इमाम आख़िरुज़् ज़माँ ख़लीफ़तुर् रहमान है। हक़ आमन्ना व सद्दक़ना।

उसके बावजूद आप अले० की मुक़द्दस ज़ात का इन्कार किया जाये तो क्या कुफ्र नहीं होगा? यक़ीनन् और ईमानन् आप अले० की मुक़द्दस ज़ात का इन्कार कुफ्र है।

अहकामे ख़ुदा और रसूले मुकर्रम सल्ला०, अइम्मए हदीस, मुहद्दिसीन और अइम्मए दीन के फ़ैसलों के तहत बुनियादी एतिक़ाद मूजिबाते कुफ्र की वज्ह से महेदवी मज़्हब के मुसलमान की नमाज़ ग़ैर महेदवी उल मज़्हब मुसलमान के पीछे दुरुस्त नहीं बल्कि बातिल है।

इन ही अहकाम के तहत महेदवी उल मज़्हब मुसलमान का मज़्हबी और दीनी फ़र्ज़ है कि ग़ैर महेदवी मज़्हब के मुसलमान की नमाज़ में इक़्तिदा न करे और अपनी नमाज़ों को बातिल होने से बचाये।